तेतिरीय ब्राह्मणम्

Colophon

This document was typeset using Xaller, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several MTEX macros designed by H. L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

| | | | | | | | | 3 | ١ ڔ | 7 |) T | र्गा | गे | h | Γ | | | | | | | | | | | |
|--------------------|---|--|---|--|---|--|--|---|----------------|----------|----------------|------|----|--------------|---|---|---|---|---|--|---|--|---|--|-------|----|
| मष्टकम् १ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| प्रथमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| द्वितीयः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 28 |
| तृतीयः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 46 |
| चतुर्थः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 6 |
| पञ्चमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 9 |
| षष्ठमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | • | 11 |
| सप्तमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | • | 13 |
| अष्टमः प्रश्नः . | • | | • | | • | | | | | • | | | | | | • | • | • | • | | • | | • | | • | 16 |
| ाष्टकम् २ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 17 |
| प्रथमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | • | 17 |
| द्वितीयः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | • | 19 |
| तृतीयः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 2 | 21 |
| चतुर्थः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 2 | 23 |
| पञ्चमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 2 | 26 |
| षष्ठमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 2 | 28 |
| सप्तमः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 3 | 31 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |

| क्रमणिका - | i |
|------------------|-----------|
| ष्टकम् ३ | 36 |
| प्रथमः प्रश्नः | 36 |
| द्वितीयः प्रश्नः | 39 |
| तृतीयः प्रश्नः | 42 |
| चतुर्थः प्रश्नः | 45 |
| पञ्चमः प्रश्नः | 45 |
| षष्ठमः प्रश्नः | 46 |
| सप्तमः प्रश्नः | 48 |
| अष्टमः प्रश्नः | 52 |
| नवमः प्रश्नः | 56 |
| | 59 |
| | 64 |
| | 65 |
| 6 | 67 |
| • | 71 |
| | 74 |
| | 76 |
| | 77 |
| • | 77 |

| • | — महानाराय ^ए | • | | • • | | • • | • • | • • | | | • | | 78 |
|-----------------------|-------------------------|-------|----|-----|------|-----|-----|-----|------|------|---|------|--------|
| ग्णयजुर्वेदी र | यतैत्तिरीय | -काठव | न् | | | | | | | | | | 83 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | 83 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | 85 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | 87 |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | |

॥अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। जर्ज् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। एयि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृजा सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽसि जर्नधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशीचिषा। स्तुतींऽसि जर्नधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशीचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्॥ श्राण सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्॥ सन्धंति सन

व्यान र सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र र सन्धंत्तं

तन्में जिन्वतम्। मनः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। वाच् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं युज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रं स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तो देवो शुक्रामन्थिनो। कल्पयंतं दैवीर्विशः। कल्पयंतं मानुंषीः॥४॥

इष्मूर्जम्समासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यर्जमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपनुत्तौ शण्डामर्को सहामुनां। शुक्रस्यं समिदंसि। मन्थिनः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकंमा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पतिश्चिक्तत्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुहोमि॥५॥

न्यन्त्वपानः सन्धत्तं तं में जिन्वतं प्राणं युज्ञायं धत्तं मानुषीर्पिग्नें चे॥ (ब्रह्मं क्षुत्रं तिदिषुमूर्जः रियं पृष्टिं प्रजां तां पृशून्तान्थ्सन्धत्तं तत्प्राणमेपानं व्यानं तं चक्षुः श्रोत्रं मन्स्तद्वाचं ताम्। ड्रपादिपश्चके वाचं तां में पृशून्थसन्धत्तं तान्में प्राणादित्रितेये तं मेऽन्यत्र तन्में॥————[१]

कृत्तिंकास्वग्निमादंधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिंकाः। स्वायांमेवैनं

देवतायामाधाये। ब्रह्मवर्चसी भेवति। मुखं वा एतन्नक्षेत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भेवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्ष्त्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमं-सृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधृत्ते। ऋध्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहित। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधिंथ्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासीत्। अथैभ्यो वामं वस्वपाँकामत्। ते पुनर्वस्वोरादेधत। ततो वै तान् वामं वसूपावर्तत। यः पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्थ्स्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनर्वेवनं वामं वसूपावर्तते। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकामा मे प्रजाः स्युरिति। स पूर्वयोः फल्गुन्योर्ग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमिति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यः कामयेत भुगी स्यामिति। स उत्तरयोः फल्गुंन्योरग्निमादंधीत। भगंस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तरे फल्गुंनी। भग्यंव भंवति। कालक आ वै नामा सुरा आसन्॥ ९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधातपुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेति। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावर्भयो-ऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थ्स्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बर्लमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तां ब्राह्मणों-उग्निमार्देधीत। वसन्तो वै ब्राँह्मणस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधार्यः। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसुन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमार्थत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदर्धीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। शरिद वैश्य आदंधीत।

वैश्यंस्यर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। एषा वै जीघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यदुत्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्ष्दिः॥१३॥

खल्वाधिथ्यन् फल्गुंनोगुक्षमादंधीतासम्भवतामृत्ना वेश्यंस्युर्वस्ते फल्गुंन पद्गा

उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षति शान्त्यैं। सिकंता निवंपति। पुतद्वा अग्नेर्वैश्वानुरस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वानुरमवं रुन्धे। ऊषां निवंपति। पुष्टिवां पुषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

पृष्ट्यामेव प्रजनेनेऽग्निमाधेत्ते। अथो संज्ञानं एव। संज्ञान् ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावापृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौ सह

यज्ञियमितिं। यद्मुष्यां यज्ञियमासींत्। तद्स्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥ यद्स्या यज्ञियमासींत्। तद्मुष्यांमदधात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांत्रिवपंत्रदो ध्यांयत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञियेऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष १ संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे। ऊर्जुं वा एत १ रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहिन्त। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्थे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र्ं ह्यंतत्पृंथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाँक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रे सल्लिमांसीत्। तेनं प्रजा-

पंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमृद स्यादिति। सोऽपश्यत्पुष्करपृणं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीति। स वंराहो रूपं कृत्वोप् न्यंमञ्जत्। स पृंथिवीम्ध आँच्छंत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पृष्करपृणेंऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥ तत्पृंथिव्ये पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमिति। तद्भूम्ये भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समेवहत्। ता श्रक्तराभिरद १हत्। शं वै नोऽभूदिति। तच्छर्कराणा श्रकर्त्वम्। यद्वंराहिवहत सम्भारो भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्धारमृग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धत्या २०॥

अथो श्-त्वायं। सरेता अग्निर्धिय इत्यांहुः। आपो वर्रुणस्य पत्नेय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः सम्भवत्। तस्य रेतः पराऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्ने स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत् इत्यांहुः॥२१॥ उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वी रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जुं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः

सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पूर्णत्वम्॥२३॥ यस्यं पूर्णमयः सम्भारो भवंति। सोमुपीथमेवावं रुन्थे। देवा व ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपाश्रणोत्। सुश्रवा व नामं। यत्पूर्णमयः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिर्श्रिमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीति। त॰ शम्यां-ऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयंः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रदाहाय। अग्नेः

सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँर्च्छत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्थे। सहृदयोऽग्निराधेय इत्यांहुः। मरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशनिंरभवत्। यदशनिंहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति।

सहृंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्यदप्रंथयुद्धृत्यैं बीभथ्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णुत्वमंशमयदच्छिन्दुङ्क्षीणिं च॥______

द्वादशस् विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनंमवरुद्धा र्धत्ते। यद्वांदशस्ं विकामेष्वा दधीत। परिमितमवं रुन्धीत। चक्षुनिमित आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापिरिमितं चार्व रुन्धे। अनृतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनंसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे सत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्शमितिं। तथ्सत्यम्। यश्चक्षुंर्निमिते-ऽग्निर्माधत्ते। सत्य एवैनमा धंत्ते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणो-ऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः पुशर्वः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। पशूनेवावं रुन्धे।

दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अर्धोदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथाँन्वाहार्यपचंनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्यंषा्ड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्युन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽशृंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचंनुमग्र आदंधत। अथ गार्हंपत्यम्। अथाऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवुर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वेंष्स्यन्त् इतिं। यस्यैवम्ग्निराधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवुर्गं लोकमेंति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पशुभिंर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदिधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृश्नियाजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिष्टिं व वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेने लोके प्रत्यतिष्ठत्। अथांऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिँ ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयित। यस्य वा अयंथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसामादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वर्रुणस्य त्वा राज्ञों व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति

राज्ञन्यंस्य। मनौंस्त्वा ग्राम्ण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं रथकारस्यं। यथादेवतमग्निराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आँभ्रीत्। भूर्भुवः सुविरत्यांह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमांधत्ते। ऋभ्रोत्येव। अथो स्त्यप्रांशूरेव भवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रति तिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रति-ष्ठितमाधंत्ते। सर्वैः पुश्रभिराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मैं लोके वाचः

ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावंर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुव ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजंमानम्भि समावंर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥ एष वे प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो

सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ

सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रौँऽग्निः। यावानेवाग्निः। तमार्थत्ते॥३७॥

पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेति। वृज्जी वा एषः। यदश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भातृंव्यान्प्रणुंदते। पुन्रा वंर्तयति॥३९॥ जुनिष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्यमकामयत। निगार्हंपत्य

आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गूत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्गम्। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्तिरेवैनंयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

यदुपर्युपरि शिरो हरेंत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रे हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमाधेत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजतः। सोऽविभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रदाहाय। यत्रेधाऽग्निरांधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रदाहाय। पुन्रा वंर्तयित। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पशुर्वा एषः। यदर्श्वः। एष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्रदेंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृश्वनिपंदध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नाकृमयेत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवः स्युः। पार्श्वत आक्रंमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गारा अभ्यववर्तेरन्। अवरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणिं ह्वी १षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजंमानोऽनु विक्रमते। अग्नये

पर्वमानाय। अग्नये पावकाये। अग्नये श्चये। यद्ग्नये पर्वमानाय निर्वपित। पुनात्येवैनम्। यद्ग्नये पावकाये। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्नये श्चये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टादधाति॥४४॥ प्रमाह्वनीयं धनेऽभ्वं वंतिवि कुरुत् इति रुक्ने देवित वृद्भये श्चयं एकं वा [५]

देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा विजयमुंपयन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीति। तद्ग्निर्नोध्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अपसु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुथ्सन्त। तैंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। पुशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासींत्। तत्तेनावांरुन्थत। तैंऽग्नये पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवापस्वासींत्। तत्तेनावांरुन्थत॥४६॥

तैंऽग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्योंऽग्निः शुचिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्धता ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तुनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेंत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥ नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानिं निर्वपेंत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येंन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यों ऽग्निमांधत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्धे। आदित्यो भवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूँक्षान्तत्वाय। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्नंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। पृशवो वा पृतानिं हुवी॰षिं। पृष रुद्रः। यद्ग्निः॥५०॥

यथ्मद्य एतानि ह्वी १ षि निर्वपैत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यज्ञमानः स्यात्। यन्नानुनिर्वपैत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवः स्युः। द्वादशसु रात्रीष्वनु निर्वपेत्।

संवथ्सरप्रतिमा वै द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरेणैवास्मै रुद्र शंमियत्वा। पृशूनवं रुन्धे। यदेकंमेकमेतानिं हवी १ षिं निर्वपैत्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूर्यंत्। तादक्तत्। न प्रजनंनुमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्में लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु प्रजायते। अथो यज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथ्चकं प्रवर्तयति। मनुष्यर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधे ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्तून्त्रींणाति। उपबर्हंणं ददाति। रूपाणामवंरुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं एवावं रुन्धे। अनुङ्वाहंमध्वर्यवें। विहुर्वा अनुङ्वान्। विहेरध्वर्युः॥५४॥ वहिंनेव वहिं यज्ञस्यावं रुन्धे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धै। वासों ददाति। सर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे॥५५॥

आदित्ये तृतीयमुफ्स्वासीत्तत्तेनावांरून्यत् स्यादाँप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं हुवीश्षिं निविपेंत्प्रत्यवंरोहित ददात्यध्वर्युर्देयमेकं च॥———[६]

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पशुभिभीवत्। छुर्दिस्तोकाय् तनयाय यच्छ। वातः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पशुभिभीवत्। स्वदितं तोकाय् तनयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निभवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभाहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिर्भवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुन्ः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनाँऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तुनुवौँ। विरार्द्व स्वरार्द्व।

ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिव तन्वौं। सम्राद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिव तन्वौं। विभूश्चं पिर्भूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिव तन्वौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तन्वंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तन्वंः। ताभिर्मुं गंच्छ॥५८॥ चत्रं जन्तां त्त्व्भीं वा [७]

ड्रमे वा एते लोका अग्नयं। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयेयुर्यजंमानम्। धर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्। अर्कश्चश्चरित्यांहवनीयम्। तेनैवेनान्व्यावंत्यति। तथा न शोचयन्ति यजंमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामुदेव्यम्भिगांयत उद्धियमाणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्रव्यमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमांने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमार्थत्ते। प्रजापितरग्निमंसृजत॥६०॥ सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङैत्। तं वारवन्तीयेनावारयत। तद्वारवन्तीयंस्य

साऽश्वाऽवारा भूत्वा पराङत्। त वारवन्तायनावारयत। तद्वारवन्तायस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतत्वम्। यद्वारवन्तीयंमभि गायंते। वार्यित्वैवेनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घृमः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशीर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैनमुत्तरो यज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आंधीयमान ईश्वरो यजंमानस्य पृश्न् हिश्सितोः। सिम्प्रियः पृश्निर्भुवदित्यांह। पृश्निरेवैन् सम्प्रियं करोति। पृश्न्नामहिश्सायै। छुर्दिस्तोकाय तनयाय युच्छेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्रचेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयित। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभक्तिरेवेनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवेनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। समिन्ध एवैनम्। आनुशे व्यानश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गित्तमप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्तं अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्याह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवेन् समर्धयित। यास्तं अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरम् गच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवेनं पराभावयित॥६४॥ लोकिंऽस्करेन्माधेनेऽव्वाहार्यपवंत देवान्मप्रमेन् प्रतिष्ठित्माधेन् पर्व वा

श्मीग्रभिद्धिं मंन्थित। एषा वा अग्नेर्यिज्ञियां तृनूः। तामेवास्मै जनयित। अदितिः पुत्रकांमा। साध्येभ्यों देवेभ्यों ब्रह्मौद्नमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्जांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यें धाता चाँर्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥ तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्जांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यें मित्रश्च वर्रणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्जांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रंश्च विवंस्वाःश्चाजायेताम्। ब्रह्मोदनं पंचित। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंनित ब्राह्मणा ओंदनम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतोंऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा पृतत्। यथ्समिधंः। पृतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्येन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सिम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रिमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजसा। गायत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादेध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिर्वेश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तश्संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सरश हि रेतों हितं वर्धते। यद्येनश्संवथ्सरे नोपनमैत्। सिमधः पुन्रादंध्यात्। रेतं एव तिख्वितं वर्धमानमेति। न माश्समंश्ञीयात्। निस्त्रियमुपंयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यथ्स्रियंमुप्यात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनंमुग्निरुपंनमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचिति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवृगं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छिति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। योंऽस्मै प्रजां पुशून्प्रजनयतीति। शल्कैस्ता रात्रिमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्ष्मायं वाशिता न्यांविच्छायति। ताद्दगेव तत्। अपोदूह्य भस्माग्निं मंन्थति॥ ७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित। संवथ्स्रमेव तद्रेतों हितं प्रजनयित। अनाहित्स्तस्याग्निरित्याहः। यः समिधोऽनाधायाग्निमाधत्त इतिं। ताः संवथ्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरादेवेनंमव्रुध्याधंत्ते। यदिं संवथ्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्वयां पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरप्रतिमा वे द्वादंश् रात्रयः। संवथ्सरमेवास्याऽऽहिंता भवन्ति। यदिं द्वाद्वयां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिंता पुवास्यं भवन्ति॥ ७४॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोऽमन्यत। स तपोऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम् वा एषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यंगृह्णात्।

अर्थर्व पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्यं प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पृशून्में गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ स्भां में गोपायेतिं। सा पंश्रममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पृङ्किमेव। पृङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निरांधीयतें। तस्मांदेतावंन्तोऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कां वा इद सर्वम्। पाङ्कांनैव पाङ्काः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं प्रश्नमें गोपायेत्यांह॥७८॥ पश्नेवैतेनं स्पृणोति। सप्रथ सभां में गोपायेत्यांह। सभामेवैतेनेंन्द्रियः

स्पृंणोति। अहें बुध्निय मन्नं मे गोपायेत्यांह। मन्नंमेवैतेन श्रियई स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपचंनेऽन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नीयांजयंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्सभायां विजयंन्ते। तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न हरंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधीयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवसूपंतिष्ठेतैकमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेति। ताहगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भागयमेवषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्यामृग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते। ऋप्नोत्येनेन॥८०॥

प्राप्त पर्ति प्राप्ति प्रविद्या पर्ति विष्ठते सह वे॥

[१०]

ब्रह्म सन्धंतुं कृतिंकासुद्धन्ति द्वादुशसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तदुग्निर्नोद्धर्मः शिरं हुमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपुः स आत्मन्वीर्यं दर्श॥१०॥ ब्रह्म सन्धंतुं तौ दिव्यावर्थो शुन्त्वायु प्राच्येषाुं यदुपर्युपरिु यथ्मुद्यः सोऽश्चोऽवारो भूत्वा जर्गतीभिरशीतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्येंनेन॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यर्जमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिशृश्चतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतये। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसां। स्योनमा विशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँनकृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौर्यज्ञियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुर्वाणो यत्पृथिवीमचंरः। गृहाकारमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शतं जीवेम श्ररदः

वृम्रीभिरन्वित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्यै सुवितं नों अस्तु। उप प्रभिन्नमिष्मूर्जं प्रजाभ्यंः। सूदं गृहेभ्यो

रस्माभंरामि। यस्यं रूपं बिभ्नंदिमामविंन्दत्। गुह्य प्रविष्टा सरिरस्य मध्यै। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अछंम्बद्धारम्स्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्मिर्रस्य मध्यै। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्याऽऽयतंनाि जातम्। पूर्णं पृथिव्याः प्रथने हरािम। यािभरद्देह्ञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीिम्मां विश्वजनस्यं भर्त्रीम्। ता नेः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र १

विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नेः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्रः हिरंण्यम्। अन्धः सम्भूतम्मृतं प्रजासुं। तथ्सम्भरंत्रुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वीं रूपं कृत्वा यदेश्वत्थेऽतिष्ठः। संवथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम शृरदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनस्पते शृतवंलशो विरोह। त्वयां वयमिष्मूर्जं मदन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया हियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधि। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततों हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोंऽसि। ततो मामाविशतु ब्रह्मवर्चसम्। तथ्सम्भर इस्तदवं रुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रंदाहाय॥६॥

शुमी १ शान्त्यै हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँर्च्छज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। एतत्ते तर्देशनेः सम्भंरामि। सात्मां अग्ने सहृंदयो भवेह।

चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृता बृहत्यः॥७॥

शरींरमभि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिंताः। तिस्रस्रिवृद्धिर्मिथुना प्रजांत्ये। अश्वत्थाद्धंव्यवाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तनूं यज्ञियाः सम्भंरामि। शान्तयोनि । शमीगर्भम्। अग्नये प्रजनियितवै। यो अश्वत्थः शमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चां। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

यज्ञियैंः केतुभिः सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमन्नेषि विद्वान्। प्रवेधसे कवये द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

मेध्याय। वचो वन्दारुं वृषभाय वृष्णै। यतो भयमभयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुवस्यत॥९॥

॥ घृत-सूक्तम्॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् हव्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने हविष्मंतीः। घृताचीर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं सुमिधो मर्म। तं त्वां सुमिद्भिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। समिध्यमांनः प्रथमो नु धर्मः। समक्तुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥ शोचिष्केशो घृतनिणिक्पावकः। सुयुज्ञो अग्निर्युज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिरग्निः। घृतैः समिद्धो घृतमस्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा सरितो वहन्ति। घृतं पिबंन्थ्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने हिवषों जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥

त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्। उरुज्रयंसं

सुम्रायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्ञयारेसि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋं अते॥१२॥ इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्दं नो यरसते धियम्। प्रजा अंग्ने संवांसय। आशांश्च पृशुभिः सह। राष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवृतः स्व। मही विश्पत्नी सदेने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं

घृतयोनिमाहुतम्। त्वेषं चक्षुंर्दिधरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं।

आरोहतं दशत् शक्तं शक्तं श्रिमं। ऋतेनां ये आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामुत्तरा समाम्। दर्शमहं पूर्णमां यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरंतसौ। गर्भं दधाथां ते वांमहं दंदे। तथ्सत्यं यद्वीरं बिंभृथः। वीरं जनिय्ध्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजांते प्रजनिय्ध्यर्थः॥१४॥

जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

प्रजयां पश्भिर्ब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृताथ्सत्यमुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैमि। दैवीं वार्चं यच्छामि। शल्कैरग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातंवेदो भुवनस्य रेतः। इह सिश्च तपंसो यञ्जनिष्यते"॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्। शुमीगुर्भाञ्चनयुन् यो मंयोुभूः। अयं ते योनिंर्ऋत्वियंः। यतों जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत वीत वि च सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अऋत्रिमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमसि। संज्ञानंमसि कामधरंणम्। मयिं ते कामधरंणं भूयात्। संवैः सृजामि हृदयानि। संरसृष्टं मनो अस्तु वः। सरसृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुनुवंः। सं प्रिया हृदंयानि वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सम्प्रियास्तनुवो ममं॥१७॥

कल्पेतां द्यावांपृथिवी। कल्पेन्तामाप् ओषंधीः। कल्पेन्ताम्ग्रयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नंताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये महिम्रा॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादेधे। अजीजनन्नमृतं मर्त्यांसः। अस्नेमाणं तरणिं

वीडुर्जम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्श्सं जातम्भि सर्श्मन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण मह्यम्। दीर्घायुत्वायं शृतशारदाय। शृतर श्राद्य आयुंषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वे पुण्याय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं हव्यान्यग्ने। पुत्रः पित्रे लोकुकुञ्जातवेदः। प्राणे

त्वाऽमृत्मादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुर्स्यै। सुगार्हप्त्यो विदहन्नरांतीः।

उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडा तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओर्जसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायाऽऽयुंषे वर्चसे। सपत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥ यस्तं आत्मा पशुषु प्रविष्टः। पुष्टियां ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तरिक्षात्। वातौत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूर्थ। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भांहि॥२२॥ ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो

जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चं रुश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व

महा ५ असि। वेदिषन्मानुषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः

पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवर्तुः॥२३॥

अग्ने सपत्नार् अप बार्धमानः। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं धेहि। इमा उ

सताम्॥२६॥

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

तयोः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्तनुवे स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुनूः। शुक्रं ज्योतिरर्जस्मम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनांऽग्ने ब्रह्मणा। आनशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृत्त्वायं जीवसें। जातां जीनेष्यमाणां च। अमृतें

सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अर्थर्व पितुं में गोपाय। रसमन्नंमिहायुंषे। अदंब्यायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृणु। शङ्स्यं पुशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥ अष्टार्शफाश्च य इहाग्नैं। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सुभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्रिय मन्नं मे गोपाय। यमृषंयस्रैविदा विदुः। ऋचः सामांनि यजू ५ षि। सा हि श्रीरमृतां

चतुंः शिखण्डा युव्तिः सुपेशांः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यें। मुर्मृज्यमाना

मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं स्तो वों अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पृश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विरादथ्सृष्टा प्रजापंतेः। कुर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युपयन्तिं। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इतिं। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

पुशवो वा उक्थानिं। पुशूनामवंरुद्धौ। विश्वजिद्दिभिजितांवग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तदुशाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजमिभ सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते।

एकंया गौरतिरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवृगीं वै लोको ज्योतिः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहिद्द्वितीये। वैरूपं तृतीये। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत एष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भंवति। बृहद्वै सुंवर्गो लोकः। बृहतैव सुंवर्गं लोकं यंन्ति। त्र्यस्त्रिष्ट्शि नाम् सामं। माध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रि १ शृद्धे देवताः। देवतां पृवावंरुन्थते। ये वा इतः पराश्च १ संवथ्सरम्प्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् येऽमुतोऽर्वाश्चमुप्यन्ति। ते हैन १ स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्धा अमुतोऽर्वाश्चमुप्यन्ति। यदेवम्। यो ह् खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तद् देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

क्यां विपक्षिन् पर्वमाने भवतीन् एकं वा [२]

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विषूवान्दिवाकीर्त्यम्। यथा शालांयै पक्षंसी। पुवर संवथ्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विषूची संवथ्सरस्य पक्षंसी व्यवस्त्र १ सेयाताम्। आर्तिमार्च्छेयुः। यदेते गृह्यन्तै। यथा शालायै पक्षंसी मध्यमं व श्शमभि संमायच्छंति॥ ३३॥

एव संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीर्त्यंमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छन्ति। एकवि १ शमहं भविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तं ब्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं पुवैष बलिर्ह्रियते। सप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥

सप्त वै शींर्षण्याः प्राणाः। असावांदित्यः शिरंः प्रजानांम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्माँथ्यप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। स इमाँ हो कानुभ्यं जयत्। तस्यासौ हो को ऽनंभि जित आसीत्। तं विश्वकंमा भूत्वा-ऽभ्यंजयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्येते। विश्वान्येवान्येन कर्माणि कुर्वाणा यंन्ति। अस्यामन्येन प्रतिं तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धाथ्यंवथ्यरस्यान्यौन्यो गृह्येते। तावुभौ सह मंहाव्रते गृह्येते। यज्ञस्यैवान्तं गुत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रति तिष्ठन्ति। अर्कामुक्यं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ समायच्छंत्यतिग्राह्यां गृह्यन्ते गृह्यतं संवथ्सरस्यान्योंन्यो गृह्येते पश्चं च॥____ एकविश्श एष भंवति। एतेन वै देवा एंकविश्शेनं। आदित्यमित उत्तमश् सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा पुष इत एकवि १ शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं प्रस्तांत्। स वा एषं विराज्युंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराज्ञि हि वा एष उभ्यतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्तरेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥ देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादादंबिभयुः। तं

छन्दोभिरद १ हं धृत्यै। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवांचो-

ऽवपादादंबिभयुः। तं पश्चभी रश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकवि १ शेऽहन्पश्चं

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें।

ते एवाऽऽलंभन्ते॥४०॥

दिवाकीर्त्यानि क्रियन्ते। रुश्मयो वै दिवाकीर्त्यानि। ये गांयुत्रे। ते गांयुत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक्ष् होतुंः पृष्ठम्। विकर्णं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परैर्वे देवा आंदित्यक्ष सुंवर्णं लोकमंपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पर्राणि। य एवं वेदे। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आंदित्यक्ष सुंवर्णं लोकमंस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाः स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्येन्द्रं स्पराणि। य एवं वेदं॥३९॥

अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा संवथ्सरेऽनाप्तेऽर्थ। एकाद्शिन्याप्यते। वैष्णवं वामनमालभन्ते। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञमेवालभन्ते प्रतिष्ठित्यै। ऐन्द्राग्नमालभन्ते। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी।

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्धते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते।

द्यावांपृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथा-ऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्थे। आदित्यामविं वशामालंभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्ट शमयन्ति। वर्रुणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रत आर्लभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बुलिर्हियते। आग्नेयमा लभन्ते प्रति प्रज्ञात्यै। अजुपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्थते। यदेते गव्याः पशवं आलभ्यन्ते। उभयेषां पशूनामवंरुद्धै॥४२॥

यदतिरिक्तामेकाद्शिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यतिरिच्येत। यद्द्रौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यद्ते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यतिरिच्यते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥
त पृश्वालंभने मेत्रावर्षुणीमालंभनेऽवंब्बे सुप्त चं॥ [६]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूताना् रसं तेर्जः सम्भृत्ये। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववर्तीतिं। तन्महाब्रतस्यं महाब्रत्त्वम्। महद्वतमितिं।

तन्मंहाब्रुतस्यं महाब्रत्त्वम्। मृहतो ब्रुतमितिं। तन्मंहाब्रतस्यं महाब्रतत्वम्। पञ्चवि १शः स्तोमो भवति॥४४॥

चतुर्वि १ शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजायत। तदन्नं पश्चवि शर्मभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमशितं धिनोति। अथो मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धीयते। अथ यद्वा इदमन्ततः क्रियते। तस्मद्भिदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरो भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरंः। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्सदगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पश्चदशौंऽन्यः पक्षो भंवति। सप्तदशौं उन्यः। तस्माद्वया ईस्यन्यतरमर्धमि पर्यावर्तन्ते। अन्यतरतो हि तद्गरीयः क्रियते"॥४६॥

पश्चवि श आत्मा भंवति। तस्मौन्मध्यतः पशवो वरिष्ठाः। एकवि शं पुच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण सह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्यांत्मनांऽऽत्मन्वी। पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि दतो नुखान्। परिमार्दः क्रियन्ते। तान्येव तेन प्रत्युप्यन्ते। औद्मेंबरस्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। यस्यं तल्पुसद्युमनंभिजितु इं स्यात्। स देवाना इं साम्यंक्षे। तल्पसद्यंमभिजंयानीति तल्पंमारुह्योद्गांयेत्। तल्पसद्यंमेवाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजिंतु इस्यात्। स देवाना साम्यंक्षे। तुल्पुसद्यं मा परांजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायत्। न तल्पसद्यं पराजयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वै प्रेङ्खः। महंस पुवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समंजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकुर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णों ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमें ऽराथ्सुरिमे सुंभूतमं ऋत्रित्यंन्यत्रो ब्रूंयात्। इम उंद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंक्रित्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषा ५ सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यतरोऽभि

श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽराँद्धिः। तदंन्यत्ररोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जयित। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविंन्दन्ते॥५०॥ भवति भवति क्रियते पुर्वणे जयत्यजयश्चयत्येषं च॥—————————[६]

उद्धन्यमांनुं नवैतानि सन्तंतिरेकविश्या एषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥

उद्धन्यमांन शोचिष्केशोऽग्नें सपलांनतिग्राह्यां वैश्वदेवमालंभन्ते पञ्चाशत्॥५०॥

उद्धन्यमान १ संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमंयोस्तेज्स्विनींस्तृन्ः सन्त्रंदधत। इदम्ं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाग्नीषोमावपाँकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तैंऽग्निमन्वंविन्दन्नृतुषूथ्संन्नम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेजस्विनींस्तन्रवांरुन्धत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तम्घ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तुनूर्व्यगृह्वतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्ते। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनराधेयं कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनराधेयं कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यथ्समिधस्तनूनपांतिम्डो ब्र्हिर्यजित। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चाि अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनांऽऽग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तेंज्स्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव सम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धौ। तेनोपा १ श्रु प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुनराधेयः। यथोपा १ शु नृष्टमिच्छिति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उ्चैः स्विष्टकृतम्थ्संजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्यमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥ तहैं श्वान् रवंत्प्रजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनांग्नेयं वा एतित्रं इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभक्तीनां यजित। अग्निम्त्तमं पत्नीसंयाजानांम्। तेनां ऽऽग्नेयम्। तेन् समृद्धं क्रियत् इतिं॥७॥

अङ्भुतेव तद्वंवि सम्तिसम्भार् इत्यांहृत्व्वितं पत्नीसंयाजा नवं च॥

[१]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्ं। योंऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्पेयंमपश्यन्। ते। अन्योंऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इतिं। तेंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥

तस्मिन्नाजिमेधावन्। तं बृह्स्पित्रिर्दंजयत्। तेनायजतः। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौंऽब्रवीत्। मामनेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रंमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छथस्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठ्याय॥९॥

य एवं विद्वान् वांज्येयेन् यजंते। गच्छेति स्वारांज्यम्। अग्रर्श् समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव रांज्न्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांज्येय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज्र्र्श् ह्येतेनं देवा ऐफ्सन्।

सोमो वै वांजपेयः। यो वै सोमं वाजपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भविति। आऽस्यं वाजी जायते। अन्नं वै वाजिपयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जायते। ब्रह्म वै वाजिपयः। य एवं वेदं। अति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जायते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्वांज्येपयमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांजपेयः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पृता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता वा पृता उन्नितयो व्याख्यायन्ते। यज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतांनामिनिर्मागाय। देवा वै ब्रह्मणृश्चान्नंस्य च् शमंलुमपांघ्रन्। यद्वह्मणः शमंलुमासीत्। सा गाथां नाराश्र्रस्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शर्मलं प्रतिंगृह्णीयात्।

सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृहिति। याऽपसु यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचोऽवंरुद्धाः॥१४॥

प्रावामित ज्येष्ठांपु वेद ब्रह्मा जायते वाज्येषः सुराऽऽलिंजीन एकं च॥

[२]

देवा वै यद्न्यैग्रहैं य्वंत्रस्य नावारंन्धत। तदंतिग्राह्यैरितृगृह्यावांरुन्धत। तदंतिग्राह्यांणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैग्रहें य्वंत्रस्य नावं रुन्धे। तदेव तैरंतिगृह्यावं रुन्धे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तमास्वाऽवं रुन्धे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भवन्ति। एक्धेव यर्जमान इन्द्रियं देधित। सप्तदेश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तदेशः प्रजापितः। प्रजापितेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यर्जमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहाङ्श्चं सुराग्रहाङ्श्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यथ्सोमः॥१६॥

पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुराँ। पुरमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरमृन्नाद्यमवं रुन्धे। सोम्ग्रहान्गृह्णाति। ब्रह्मणो वा पुतत्तेजः। यथ्सोमः। ब्रह्मण पुव तेजंसा तेजो यजमाने दधाति। सुराग्रहान्गृह्णाति। अन्नस्य वा पुतच्छमंलम्। यथ्सुराँ॥१७॥

अन्नस्यैव शर्मलेन शर्मलं यर्जमानादपंहन्ति। सोम्ग्रहा ॥ स्रं स्राग्रहा ॥ श्रं गृह्णाति। पुमान् वै सोमंः। स्त्री स्र्रां। तिमंथुनम्। िम्थुनम्वास्य तद्यज्ञे करोति प्रजननाय। आत्मानंमेव सोमग्रहैः स्पृणोति। जाया ॥ स्रं राग्रहैः। तस्माद्वाजपेययाज्यं मुष्मिं होके स्त्रिय ॥ सम्भवति। वाजपेयां भिजित ॥ हां स्य॥ १८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षः सोमग्रहान्थ्सांदयति। पश्चाद्क्षः सुराग्रहान्। पापवस्यसस्य विधृत्ये। एष वै यजमानः। यथ्सोमः। अन्नः सुरा। सोमग्रहाःश्चे सुराग्रहाःश्च व्यतिषजिति। अन्नाद्येनैवैनं व्यतिषजिति॥१९॥

सम्पृचंः स्थ सं मां भृद्रेणं पृङ्केत्याह। अत्रुं वै भृद्रम्। अन्नाद्येनैवैन् सं संजिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुरां। पाप्मेव खलु वै शर्मलम्। पाप्मना वा एंनमेतच्छमंलेन व्यतिषजित। यथ्सोमग्रहा ॥ सुराग्रहा ॥ व्यतिषजित। विपृचः स्थ वि मा पाप्मना पृङ्केत्याह। पाप्मनैवेन् ॥ शमलेन व्यावर्तयति॥ २०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यों दक्षिण्यः। प्राङ्द्रंबित सोमग्रहैः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहैः। यावंदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाजसृद्धाः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विश् स् स्सृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मध्व्योऽसानीति। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यजमान् आयुस्तेजों दधाति॥२१॥

अभवाज्यं कथ् सोगः शर्मल् पथ्सुग् इस्सृं व्यतिपजित् व्यवंति स्वति व्वति व्यति। व्यति व्यति। [३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निंष्ट्रोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिंरात्रः। अथ् कस्माँद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त इति। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्धे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारुस्वत्याऽतिंरात्रम्॥२२॥

मा्रुत्या बृंहुतः स्तोत्रम्। पुतावन्तो वै यंज्ञकृतवंः। तान्पशुभिरेवावं रुन्धे।

श्रमियित्वा॥२५॥

आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यरं षोडशिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोक १ षोंडशिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक ५

रोहित बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं पृवाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्चनां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच र सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं च मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापृत्यान्पृश्चनालंभते। सप्तद्शः प्रजापंतिः॥२४॥ प्रजापंतेराप्त्ये। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। पृविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धे। तान्पर्यग्निकृतानुथ्मृंजिति। मुरुतों युज्ञमंजिघारसम्प्रजापंतेः। तेभ्यं पृतां मारुतीं वशामालंभत। तयैवैनांनशमयत्। मारुत्या प्रचर्यं। एतान्थ्संज्ञंपयेत्। मरुतं एव

एतैः प्रचरित। युज्ञस्याघांताय। एक्धा वृपा जुंहोति। एक्देवृत्यां हि। एते।

अन्नईं स्वदयति॥२७॥

पृतत्पुंरोडाशा ह्यंते। अथो पश्नामेव छिद्रमपिंदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरति। वाग्वै सरंस्वती। तस्मौत्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौ प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयित। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मौन्मनुष्यौः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥ अतिग्रम्नतिश्वम्क्येन प्रजापंति शर्मण्वोत्तमण् प्रचंरते पर वं॥———[४] सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तौत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंर्मिति। सवितृप्रंसूत पृव यंथापूर्वं कर्माण करोति। सवनसवने जुहोति। आकर्मणमेव तथ्सेतुं यज्ञमानः कुरुते। सुवृर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ।

अथों एकधेव यर्जमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरति।

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरित विजित्यै। वार्जस्य न प्रंस्वे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवयम्। यच्चास्यामिधं। तदेवावं रुन्धे। अथो तस्मिन्नेवोभये-

वाचस्पतिर्वाचंमुद्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वै देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचंमेवास्मा

ऽभिषिंच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमपस् भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयति। अपस् वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेनन्ववंप्लवते। यद्पस् पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापस् प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्धे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यदपस् पंलपूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वमयुअन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। स्वस्योज्ञिंत्यै। यजुंषा युनक्ति व्यावंत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनांन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि र संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिजयिति। वैश्वदेवो वै रथः। अङ्कौ न्यङ्काव्भितो रथं यावित्याह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमस्करोति। आत्मनोऽनाँत्यैं। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथो भवति। य एवं वेदं॥३०॥

स्वद्यति पृत्यूल्यित् व्यावृत्या अनौत् हे बं॥————[५]

देवस्याहर संवितुः प्रसवे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषमित्याह।

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकरं रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकरं रोहित। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहित। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेंति। आवेष्टयित। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयित॥३१॥

वाजिनार सामं गायते। अत्रं वै वाजंः। अत्रंमेवावं रुन्धे। वाचो वर्ष्मं देवेभ्योऽपात्रामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सेषा वाग्वनस्पतिषु वदित। या दुन्दुभौ। तस्माद्दन्दुभिः सर्वा वाचोऽतिंवदित। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। परमा वा एषा

वाक्॥३२॥
या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्धे। अथों वाच एव वर्ष्म् यजमानो-ऽवं रुन्धे। इन्द्रांय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजयिदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रंः। यो यजंते। यजंमान एव वाज्मुज्ञंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तद्शः स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

लोकं गंमयति॥३५॥

अर्वां। वायुः सितः। आदित्यो वाजी। पृताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनिक्तः। प्रष्टिवाहिनं युनिक्तः। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्तः॥३४॥ वाजिनो वाजं धावत काष्ठां गच्छतेत्याह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यन्ति। सुवर्गं वा पृते लोकं यन्ति। य आजिं धावन्ति। प्राश्चे धावन्ति। प्राङिव् हि स्वर्गो लोकः। चतसृभिरन् मन्नयते। चत्वारि छन्दार्शसा। छन्दोभिरेवैनान्थसुवर्गं

स्प्तदुशः प्रजापंतिः। प्रजापतेरास्यै। अर्वाऽसि सप्तिरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा

प्रवा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्यै। आ मा वाजंस्य प्रस्वो जंगम्यादित्याह। अन्नं वै वाजः। अन्नमेवावं रुन्धे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्रसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं

पंरिक्रीयावं रुन्थे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धैव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमयुः। ता बृह्स्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवाराणां नीवारत्वम्। नैवारश्चरुर्भवति॥३७॥

पुतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरमुन्नाद्यमवं रुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। सप्तद्वाः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्ये। क्षीरे भवति। रुचंमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्पेयेन यजंते। बार्ह्स्पत्य एष चरुः। अश्वान्थ्सरिष्यतः सम्भुषश्चावं प्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुश्चिति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥
अभिजयति व एषा वार्यायनेऽस्मै युनिक गमयति य आजि धावंति भवति देवतंबाऽहो वं॥
[६]

तार्प्यं यजमानं परिधापयित। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैन् समर्धयित। दुर्भमयं परिधापयित। पवित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुथ्सते। यो वाज्येपेयंन् यजते। ओषंधयः खलु वै वाजः। यद्दर्भमयं परिधापयित॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जायु एहि सुवो रोहावेत्यांह। पत्निया एवैष यज्ञस्याँन्वारम्भो-

ऽनंबच्छित्त्यै। सप्तदंशारिक्षर्यूपों भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराह्यै। तूपरश्चतुंरिश्रभवति। गौधूमं चषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥ एविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धौ। अथो अमुमेवास्मै लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यजमानः। यद्यपंः। सर्वदेवत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं

वासोंभिर्वेष्टयति। एष वै यजंमानः। यद्यूपंः। सुर्वेदेवृत्यं वासंः। सर्वांभिरेवैनं देवतांभिः समर्थयति। अथो आक्रमणमेव तथ्सेतुं यजंमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्यै। द्वादंश वाजप्रसुवीयांनि जुहोति॥४२॥ द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्सरमेवास्मा

द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेव प्रींणाति। अथो संवथ्सरमेवास्मा उपदर्धाति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेध्ये। दशिमः कल्पै रोहति। नव वै पुरुषे तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यंथास्थानं कंल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वे पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्याणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवार अंगुन्मेत्याह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्याह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापेतेः प्रजा अभूमेत्याह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैति॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मयाँ प्रजेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। आस्पुटैर्घ्नन्ति। अत्रं वा इयम्। अत्राद्येंनैवैन् समर्थयन्ति। ऊषैर्घ्नन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनम्नाद्येन् समर्थयन्ति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चें घ्रन्ति॥४५॥

पुरस्ताद्धि प्रतीचीनमन्नम् धतें। शीर्षतो घ्रन्ति। शीर्षतो ह्यन्नम् धतें। दिग्भ्यो घ्रन्ति। दिग्भ्य पुवास्मां अन्नाद्यमवंरुन्थते। ईश्वरो वा पुष पराङ्क्षद्यः। यो यूप्र रोहंति। हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वै हिरंण्यम्। अमृतर् सुवर्गो लोकः॥४६॥ अमृतं एव स्वंगें लोके प्रतिं तिष्ठति। श्तमांनं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पुष्ट्ये वा एतद्रूपम्। यदजा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनमध्यवं रोहति। पुष्ट्यांमेव प्रजनंने प्रतिं तिष्ठति॥४७॥

प्राप्तिं विष्ठति॥४७॥

प्राप्तिं ज्ञेति स्वं वेति प्रवर्षं प्रति लोको नवं व॥

[७]

स्प्तान्नंहोमाञ्जंहोति। स्प्त वा अन्नांनि। यावंन्त्येवान्नांनि। तान्येवावं रुन्थे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नस्यान्नस्य जुहोति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याष्ट्ञीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन व्यृंद्धेत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धै। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरेः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्याह। स्वितृप्रंस्त एवैनं ब्रह्मंणा देवतांभिर्भिषिश्चित। अन्नंस्यान्नस्या्भिषिश्चित। अन्नंस्यान्नस्या्भिषिश्चित।

शीर्षतो ह्यन्नम् द्यते"। आ मुखांद्नववंस्रावयति। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिश्चति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंमुभिषिश्चिति। सोमुग्रहा इश्चांवदानीयानिं चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्चांनवदानीयानिं च वाज्यसूद्धाः। इममेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। अथो उभयीष्वेवाभिषिच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्यसृतः॥५१॥

इन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अन्नं वै वाजंः। अन्नमेवावं रुन्थे। शिपिविष्ट-वितीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वै विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रति तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

अ्षञीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुद्धाः इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाजसृतः शिपिस्रीणि च॥

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवैतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवैतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवनमगन्निति वै तमांहः। भुवनमेवैतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। व्योमागृन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। एषामेवैतेनं लोकानार् सूयते। तस्मौद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयते॥५४॥

षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

इति॥५६॥
तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मांत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रोति।
पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतंनुते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम्
इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ
इति। इन्द्रियं व सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयाँ
जायाम्भ्यंश्जृते॥५७॥
एतद्वे ब्राह्मणं पुरा वाजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत।

य एवं वेदं। अभि द्वितीयां जायामंश्जुते। अग्नयं कव्यवाहंनाय स्वधा नम्

इत्यांह। य एव पिंतृणामग्निः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति।

इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। सोंऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः

पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञोंऽगच्छत्। तं देवाः पुनंरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनंरददुः।

तें ऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थ वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्युः क्रियाता

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितृन्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिंपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्ग्रीणाति। तान्ग्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। स्कृदाच्छिन्नं बर्हिर्भविति। स्कृदिंव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौं व्यावृत् उपाँस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) त्र प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रांश्जीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्जीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेत। अवृष्ठेयमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरंन्ति। वीरं वा ददति। दशां छिनत्ति। हरंणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तरं आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मन्यवै। नमों वः पितरो घोराय। पितरो नमों वः। य पुतस्मिं होके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिँ ह्लोके। मां ते ऽन्। य एतस्मिँ ह्लोके स्थ। यूयं तेषां वसिष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिँ ह्लोके। अहं तेषां वसिष्ठा भूयास्ति। यें उस्मिँ ह्लोके। अहं तेषां वसिष्ठा भूयास्मित्यांह। वसिष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्पितृभ्यः कुरोति। एष वै मनुष्यांणां यज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतरे यज्ञाः। तेन वा एतिपंतृलोके चंरित। यत्पितृभ्यः करोतिं। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययर्चा पुनरेतिं। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञेनैव सह पुनरेतिं। न प्रमायंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजमानश्चरित। यत्पितृभ्यः करोति। स ईश्वर आर्तिमार्तौः। प्रजापित्स्त्वावैनं तत् उन्नेतृमर्ह्तीत्यांहुः। यत्प्रांजापत्ययर्चा पुनरेतिं। प्रजापितरेवैनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥ इत्यंश्वर पद्यने पद्यने पद्य प्रक्षा कृतवि व्यक्तिऽहितः स्यामेदीयः स्थ युक्ता यजमानक्षरित् यत्मित्व प्रवित प्रजापा पर्व प्रमान प्रवित प् तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्यैग्रीहैंब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यंश् सप्तान्नहोमान्नृपदं त्वेन्द्रीं बृत्रश् हत्वा दर्श॥१०॥ देवासुरा वाज्येवैनं तस्माद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चेषष्टिः॥६५॥ देवासुरा यजमानः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें उन्य इमें उन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तात्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा पृता यर्जमानस्य गृहे गृह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुरेनं देवाः। यस्यैवं विदुषं पृते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपा्रशः। सोमेन देवाश्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपा्रशं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाश्स्तंपयिति। यद्गहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः

स्थालीर्वाययाः सोमग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्ञिंमदुह्नन्॥४॥

तस्यां पृते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्जिः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृश्निद्दहन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजमान इमां दुहे। तां विश्वं देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुहन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यर्जमान इमां देहे। तां मेनुष्यौ ध्रवस्थाल्याऽऽयुंरदुहन्। यद्धुंवस्थाली भवति। आयुंरेव तया यर्जमान इमां देहे। स्थाल्या गृह्णाति। वायुर्व्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्ति। अन्येन प्रतिगृह्णन्ति। अथौ व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

घृतं चम् इंव सोमं:॥७॥

युव र सुरामंमिश्वना। नमुंचावासुरे सचौ। वििष्पाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रमिंव पितरांवश्विनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दुर्सनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सरस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने हिवरास्येते। सुचीवं

वाज्सिनिर्ं रियम्समे सुवीरम्ं। प्रश्नस्तं धेहि यशसंं बृहन्तम्ं। यस्मिन्नश्वांस ऋष्भासं उक्षणंः। वशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्ठाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुंम्ग्रयें। नाना हि वां देवहिंतर् सदों मितम्। मा सरसृंक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥ यदत्रं शिष्टर रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिबच्छचींभिः। अहं तदस्य मनसा

शिवनं। सोम् राजानिम्ह भक्षयामि। द्वे स्नुती अशृणवं पितृणाम्। अहं देवानामुत मर्त्यानाम्। ताभ्यामिदं विश्वं भुवन् समेति। अन्तरा पूर्वमपरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछन्दाः पाशः। तं ते एतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगंतीछन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानिं ह्वी १षिं भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्मैं स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुंर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वरुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषीदति। यस्यांग्निहोत्री निषीदति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वे देव्यदितिः॥११॥ इमामेवास्मा उत्थांपयति। आयुंर्यज्ञपंतावधादित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति।

इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा पुषैतस्यं पाप्मानं प्रतिख्याय निषींदति। यस्यां भिहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्धा ब्रौह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्याप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥ दुग्ध्वा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा पुतस्य पयः प्रविशति। यस्यांग्रिहोत्रं दुह्यमांनु स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरुप्यसंरुद्यदापंः। पयों गृहेषु पयों अघ्नियासुं। पयों वथ्सेषु पयों अस्तु तन्मयीत्याह। पर्य पुवाऽऽत्मन्गृहेषुं पुशुषुं धत्ते। अप उपंसृजित॥१३॥ अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै युज्ञस्यार्ते नानांति स स स्मुजितिं। उभे वै ते तर्ह्यार्च्छतः। आर्च्छति खलु वा एतदिग्निहोत्रम्। यदुह्यमानु र् स्कन्दिति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानौतं यज्ञस्य स॰सृंजेत्। तदेव यादक्कीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। अनाँतेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥ यद्यद्वंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनंरेयात्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र् स्कन्देंत्।

तन्निषद्य पुनंर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवैनृत्पुनंर्गृह्णाति। तदेव यादकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा एतस्यं यज्ञिष्ठंद्यते। यस्याँग्निहोत्रंऽिधिश्चिते श्वाऽन्त्रा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्गिः। यद्गमंन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पृश्नपिं दध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यद्पौंऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमग्नेरापंः। अनाद्यमाभ्यामपिं दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णुव्यर्चाऽऽहंवनीयाँद्ध्वश्सयनुद्रवेत्। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञेनेव यज्ञश् सं तंनोति। भरमना पदमपि वपति शान्त्याः॥१६॥
व देव्यवितिर्मृश्चति स्वति करोति करोत्यान्यामपि दथ्यात् पश्चं व॥
[3]

नि वा पृतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण् हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिवै हिरंण्यम्। ज्योतिरेवैनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्व हरत्यथाग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेंनेवनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वे सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्ंपसाद्यातिमंतोरासीत। व्रतमेव हृतमन्ं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धतः सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेंनैवान्तं युज्ञस्य निष्कंरोति। वर्रणो वा पुतस्यं युज्ञं गृंह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा पुतस्यांऽऽहवनीयो गार्हपत्यं कामयते। नि गार्हपत्य आहवनीयम्॥ यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। चृतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तौद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वे हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भाग्धेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥ सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्यंच्छित। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्कषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचींमेवास्मै विवांसयित। अग्निहोत्रमुंपसाद्यातिमेतोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। पुनः समन्यं जुहोति। अन्तंनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। मैत्रं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। यस्याऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्घायेत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यमुग्निमुपांसीत। रुद्रौंऽस्य पुशून्धातुंकः स्यात्। आहुवनीयमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

ड्वतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योने्रधिं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों ह्व्यं वहत् प्रजानिन्नितिं। छन्दोंभिरे्वेन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयित। गार्हंपत्यं मन्थित। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिंताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदन्ं पशवोऽपं कामन्ति। इषे रय्ये रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्में रमयित। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावृथ्सौं। ऋख्सामाभ्यामेवेन् सिमंन्धे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्तरं वै सम्राट। बृहद्विराट्॥२५॥

न्ताक्ष्याच्यान्ते वा स्वानित्या वज्रो वे च्क्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानां वा रथां वाऽन्तराऽग्री याति। आहुवनीयंमुद्धाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्रे पूर्वं प्रभृतं पदश् हि तैं। सूर्यंस्य र्श्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भंरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वाजंवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणेवास्यं यज्ञेनं यज्ञमनु सं तंनोति। त्वमंग्ने स्प्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव यज्ञ १ सं तंनोति। अग्नयं पिथकृतं पुरोडाशंम्ष्टा-कंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पिथकृत् १ स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स पुवेनं यज्ञियं पन्थामपि नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वही ह्येष समृद्धी॥२७॥
हर्त्ययांग्रिहोतं निम्नोचित हरेष्ट्वतां गच्छत्युद्धार्येन्मस्य बृहिह्नराहिति नर्व व (नि व पूर्वं त्रीणि निम्नोचित हरेष्ट्वतां पच्छत्युद्धार्येन्मस्य बृहिह्नराहिति नर्व व (नि व पूर्वं त्रीणि निम्नोचित हरेष्ट्यामग्निहोतं पुनर्वर्रणो वार्ष्णं नि वा पुतस्यान्युद्धितं चतुर्गहीतमाञ्चं यदाञ्चं पर्तच्युपाः पुनर्वित्रो मैतं यस्यांऽऽहव्यनीयेऽनंद्वत् गारहपत्यो वहे मन्युद्धरेत्॥॥———[४]

यस्यं प्रातः सब्ने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सबंनं कामयंमानो-ऽभ्यतिरिच्यते। गौध्यति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा पुतत्। यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्तिं। सुन्धेः शान्त्यै। गायत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सब्नान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चमुसमनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मुध्यत एव यज्ञश् सुमादंधाति। यस्य माध्यं दिने सवंने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते॥२९॥ अतिरिक्तस्य शान्त्यै॥ बण्महा । असि सूर्येति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य

अतिरिक्तस्य शान्त्यै। बण्महा असि सूयेति कुवेन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत सामं भवति। तेनैव मार्थ्यं दिनाथ्सवनान्नयंन्ति। सप्तदशः स्तोमंः। तेनैव तृतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चम्समनून्नंयन्ते। होताऽनुं शरसित॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समादंधाति। यस्यं तृतीयसवने सोमोंऽतिरिच्यंत। उक्थं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽतिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽतिरिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यज्ञंमानं वा एतत्प्रवं आसाह्यंयन्ति। बृहध्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार्ह्ताः प्रावंः। बृह्तैवास्मं प्राव्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टां वे देवानां पुष्टम्। पुष्ट्येवेन् समर्धयन्ति। होतुंश्चम्समनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्सति। मध्यत एव यज्ञ समाद्धाति॥३१॥

एकैंको वै जुनतांयामिन्द्रं। एकुं वा एताविन्द्रंमुभि स॰सुंनुतः। यौ द्वौ

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

सर्भसुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यतरं वा एते सर्स्सुन्वतोर्निर्बप्सति। पूर्वेणोपुसृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोपुसृतस्य वै श्रेयाँन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजिंत्यै॥३२॥

मरुत्वंतीः प्रतिपदंः। मरुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृहद्रथन्तुरे भवतः। इयं वाव रथन्तुरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवैनंमन्तरेति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचांपानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यांत्। अभिवर्तो ब्रंह्मसामं भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृंत्त्यै। अभिजिद्भवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूया १ सो यज्ञकृतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्क इतिं। यद्यंग्निष्टोमः सोमः प्रस्ताथ्स्यात्॥ ३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञऋतुर्भिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोंभिरभिभवंति। स सर्स्सुन्वतोरभिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दा रंसि वै संवेश उंपवेशः। छन्दों भिरेवास्य छन्दा ईस्यभिभंवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्षुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातमित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। ऋरकृतांमिवैषां लोकः स्यौत्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं दंक्षिणतो वेद्यै निधायं। सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवैनं परिददित। व्यृद्धं तदित्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती माँर्जालीयं परीयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोरेवैनं लोकयोः परिंददति॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मैं ह्रवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः।

एभ्य एवैनं लोकेभ्यो ध्वते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्ध्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं ध्वते। अग्र आयू श्षे पवस् इतिं प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसामैषा श्रमामः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथो पाप्मानंमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥ अभिजित्य पृथ्याष्ट्र स्वादंध्वर्षृत्रं परिददित कुर्वीर्ड् क्षिणे च॥———[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वणं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पृशून् वीर्यं यच्छति। नास्मात्पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घार्यंत्। यत्तं मन्थंत्। विच्छिन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घार्यंत्। आग्नींद्धादुद्धरेत्। यदाग्नींद्ध उद्घार्यंत्। गार्हंपत्यादुद्धरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घार्यंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निलंयते। यत्र खलु वै निलीनमुत्तमं पश्यंन्ति। तदेनमिच्छन्ति।

यस्माद्दारों रुद्वार्यंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। ऋुमुकमिषं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तुन्। यत्क्रुं मुकः। प्रिययैवैनंं तुनुवा समर्थयित। गार्हं पत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेंऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयाद्न्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिषूयमाणस्य प्रिया तनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् हरेण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हरेण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवेनं तनुवा समर्धयन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपृहरेयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं क्रीतमंपहरेयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानि चाभिषुंणुयात्। गायत्री यश्सोममाहंरत्। तस्य योऽरंशः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परांऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फौल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजाः। यदांदाराः श्रं फाल्गुनानि चाभिषुणोतिं। सोमंमेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सव्ने श्रींणीयात्। दध्ना मध्यं दिंने॥४४॥

पर्वमानः सुवर्जनः। प्वित्रेण विचर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा। पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। पुनन्तु मनेवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयर्वः। जातंवेदः प्वित्रवत्। प्वित्रेण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंम् चिषि। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागात। यस्यै बह्बीस्तनुवो वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सधमाद्येषु। वयः स्यांम पत्यो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रिश्मिर्मिम् पुनातु। वातंः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावांपृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कशंः। तेनं दिव्येन ब्रह्मंणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृत् रसम्। सर्व र स पूतमंश्ञाति। स्वदितं मांतिरश्वना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृत् र रसम्। तस्मै सर्रस्वती दहे। क्षीर र सर्पिर्मधूदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥ सुद्धा हि पयंस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः। ब्राह्मणेष्वमृत हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथो अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समार्भृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि घृतश्चर्तः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। येनं देवाः प्वित्रंण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्ं। श्रतोद्याम १ हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों वयम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥
अतं र्याणां ब्रह्मणं खुस्ययंनेः सुद्रण् हि धृत्रशृत क्रिपिः सम्रते रसः प्नातु क्रीणं चा————[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्वतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णक्ष् स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनौर्धमास ऊर्ज्मवारुभ्यत। तस्मादर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णक्ष् स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं

इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्ज्मवारुन्धतः। तस्मौन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मृनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥ उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। पुशवों ऽपश्यश्चमुसं घृतस्यं पूर्णं इस्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्जमवारुन्धतः तस्मात्रिरह्नः पशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णः स्वधाम्॥५३॥ तमुपोदंतिष्टुन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्जमवांरुन्थत। ते देवा अमन्यन्त। अमी वा इदमेभूवन्। यद्वयः सम इति। त एतानि चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषां तामूर्जमवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। यत्पितृभ्यंः करोतिं। यामेव पितर ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। यदांवसथेऽन्न १ हर्रन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव पशव ऊर्जमवारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासुरा ऊर्जमवारुन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिँ श्लोके प्रत्यंतिष्ठत्। वरुणप्रघासैरन्तरिक्षे। साकमेधेरमुष्मिँ श्लोके। एष ह् त्वावैतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वा ॥ श्लोतुर्मास्यैर्यजंते॥ ५६॥

मनुष्यां अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णः स्व्यामसंग अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णः स्व्यामसंग् ददौत्यतिष्ठश्वत्वारि च॥————[९] अग्निर्वाव संवथ्सरः। आदित्यः परिवथ्सरः। चन्द्रमां इदावथ्सरः। वायुर्रन्वथ्सरः। यहैं श्वदेवेन यजेते। अग्निमेव तथ्संवथ्सरमौप्नोति। तस्मौहैश्वदेवेन

वायुरनुवथ्सरः। यहश्वद्वन् यजता आग्नम्व तथ्सवथ्सरमाप्नाता तस्माहश्वद्वन् यजमानः। संवथ्सरीणाई स्वस्तिमा शास्ति इत्याशांसीत। यद्वरुणप्रघासैर्यजेते। आदित्यमेव तत्पंरिवथ्सरमाप्नोति॥५७॥

तस्मौद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। परिवृथ्सरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। यथ्मांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तर्दिदावथ्सरमाँप्रोति। तस्माँथ्साकमेधेर्यजंमानः। इदावथ्सरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। यत्पितृयज्ञेन यजेते। देवानेव तद्न्ववंस्यति। अथ वा अंस्य वायुश्चांनुवथ्सरश्चाप्रीतावुच्छिष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजेते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्सरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण यजंमानः। अनुवथ्सरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। संवथ्सरं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह् त्वै संवथ्सरमाँप्रोति। य एवं विद्वाःश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वे देवाः समयजन्त। तेंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन यजंते। अर्थ संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। अर्थ सहस्रयाजिनंमाप्नोति॥ यदा संहस्रयाजिनंमाप्नोति॥६०॥

अथं गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोतिं। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ् गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्रां। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेया स्मि भवन्ति। यद्विश्वं देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्य वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रधासैर्यजेते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुज्यमुपैति। यदादित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासै-रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ सोमो राजा छन्दा रसि साकमेधैरंयजत॥६२॥

स एतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभातिं। यथ्सांकमेधैर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिईश्चन्द्रमां विभातिं। चन्द्रमंस एव सार्युज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष ह त्वै साक्षाथ्सोमं भक्षयति। य एवं विद्वान्थ्सांकमेधैर्यजंते। यथ्सोमंश्च राजा छुन्दा रसि च समैधंन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना रे साकमेधत्वम्। अथर्तवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरं पितृयुज्ञेनायजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवेः। यत्पितृयज्ञेन यजेते। पुतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवंः पितरंः

प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथंमहीतिं। ततो वै ता अंप्रथन्त। य एवं विद्वाङ्ख्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृशुभिः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन है शुनासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमीयता (३) इति। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदि वसन्तौ प्रमीयते। वसन्तो भवति। यदि ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदि वर्षास् वर्षाः। यदि श्रादे श्रात्। यदि हमेन् हेमन्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिवीवैषः॥६६॥ प्रविक्ष्यपानिति । यन्तिविक्षः विवयत्वः सांकम्पर्यंत् । प्रव्यक्षः विवयत्वः विवयत्वः

उभयें युव॰ सुरामुमुदंस्थात्रि वै यस्यं प्रातः सबुन एकैंकोऽसुर्यं पवंमानः प्रजा वै सुत्रमांसताग्निर्वाव संवथ्सरो दर्श॥१०॥ उभये वा उदंस्थाथ्सवाभिर्मध्यतोऽत्रु वाव ब्राँह्मणेष्वथं गृहमेधिन् पट्थ्यष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पश्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिंकाः। शुक्रं प्रस्ताङ्योतिंर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपंः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमस्येन्वका वितंतानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्ताद्विक्षारोंऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातंः परस्तांदार्द्रमवस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतेंस्तिष्यः। जुह्वेतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तात्। सूर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तोऽवस्तात्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रू १ शोऽवस्तात्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तात्। भगस्योत्तरे। वृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तात्॥२॥

देवस्यं सवितुर्हस्तंः। प्रस्वः प्रस्तांथ्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांथ्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ट्यां व्रतिः। प्रस्तादसिंद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिं प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यानूराधाः।

अभ्यारोहंत्परस्तांदभ्यारूढमवस्तांत्॥३॥

आर्द्रम्वस्ताद्वहंमाना अवस्तांदुभ्यारूंढम्बस्तात्पन्थां अवस्तांद्वथ्सा अवस्तात्पश्चं च॥---

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋंत्यै मूल्वर्हंणी। प्रतिभुञ्जन्तंः परस्तांत्प्रतिशृणन्तोऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः परस्ताध्सिमितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्परस्तांद्भिजितम्वस्तांत् विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। परस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥

वसूना् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य श्रतभिषक्। विश्वव्यंचाः प्रस्ताद्विश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठप्दाः। वैश्वान्रं प्रस्ताद्वश्ववस्वम्वस्तात्। अहाँर्बुध्नियस्योत्तरे। अभिष्श्वन्तः प्रस्तांदभिषुण्वन्तो- ऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गावः प्रस्ताद्वथ्सा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौ। ग्रामः प्रस्ताथ्सेनाऽवस्तात्। यमस्याप्भरंणीः। अपकर्षन्तः प्रस्तादप्वहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पश्चाद्यत्ते देवा अद्धुः॥५॥

यत्पुण्यं नक्षेत्रम्। तद्बद्वुंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ नक्षेत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैंत्। यत्रं जघन्यं पश्यैंत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ हु वै युज्ञेषुं च शृतद्युंम्नं च माथ्स्यो निरवसाय्यां चेकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तः। चित्रा शिरः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः॥७॥

अस्मि ॥ श्रीष्मि ॥ यां कामयेत दुहितरंं प्रिया स्यादिति। तां निष्ठायां दद्यात्। प्रियेव भंवति। नेव तु पुनरागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपिरेष्टादषाढानाम्। अवस्तांच्छ्रोणायै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजि्त्वम्। यं कामयेतानपज्ययं जंयेदितिं।

पश्चमः प्रश्नः (अष्टकम् १) तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपुज्य्यमेव जंयति। पापपंराजितमिव तु। प्रजा-

पंतिः पश्नमंसृजत। ते नक्षेत्रं नक्षत्रमुपातिष्ठन्त। ते समावन्त पुवाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीनु सोमाँत्। प्रैव भंवन्ति। सलिलं वा इदमंन्तरासीत्। यदतंरन्। तत्तारंकाणां तारकत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु १ स लोकं नेक्षते। तन्नक्षेत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानिं पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मांदश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नार्वस्येन्न येजेत। यथां पापाहे कुंरुते। तादगेव तत्। देवनक्षत्राणि वा अन्यानिं॥११॥

यमनक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तंरेण। अन्वेषामराथ्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषामवधिष्मेतिं। तज्ज्येष्ठघ्नी।

तानि वा एतानि यमनक्षत्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणि। तेषु कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥ चुकारैवं वेदोभयोरेनं लोकयौर्विदुरज्ञयन्नेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमुन्यानि यानि यमनक्षत्राण्यक्षाणद्यमनक्षत्राणि त्रीणि च॥________ि रू] देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वोऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रातुस्तनात्। प्राचीन र सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तेवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि पशवंः समायन्ति। यत्प्रंतीचीन ५ सङ्गवात्॥१५॥ प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततों देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः।

बृहस्पतें मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं

मुध्यं दिनात्। प्राचीनमपराह्णात्। ततो देवाः षोडशिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं

मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूलवर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्श्वणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्तभिषक्।

प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरंणीष्वपांवहन्।

निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्मात्। प्राचीन सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविष्शो नक्षंत्राणाम्। समानस्याहः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। यचं प्रस्तान्नक्षंत्राणां यच्चावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भंवति। समानस्याहः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भंवति॥१८॥

पङ्गाध्यांकृषितः निर्ममत् तत्तवातंवयं निर्माणं विदेववतं सम्पनस्याहः पश्च प्रण्यांन् नक्षंत्राण्यक्षे वं॥———[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कति पात्रांणि युज्ञं वहन्तीतिं। त्रयोंदशेतिं ब्र्यात्। स यद्भ्यात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरमिमीतेतिं। आत्मन इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाईश्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥ व्यानादुंपा १ शुसर्वनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दक्ष ऋतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत समंब्रीयत। स एतान्प्रजापंतिरपिवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥ ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहिंतः।

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किञ्चन। ऋते संमुद्र आहिंतः। ऋते भूमिंरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तपस्याहिंतम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्तं

तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पर्यवर्तयत्। अन्तौन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशान ओर्जसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मरुद्भिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहाँ। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजसा। ऋतेनास्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंर्तये। तद्दतं तथ्मुत्यम्। तद्भतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥ यो अस्याः पृथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मरुद्भिः सखिंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रान्तमुष्णिहाँ। शिरुस्तपुस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजसा। ऋतेनास्य नि वर्तये।

र्वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्भृतं तच्छेकेयम्। तेने शकेयं तेने राध्यासम्॥२३॥
एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनौभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं
मर्त्यौभ्यः। प्रजामनु प्र जायसे। तदुं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः।

सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि

ऋतवंः परिवथ्मराः। येन् ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंतियन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंतियामि जीवसे अग्निस्तिग्मेनं शोचिषा। तप् आक्रान्तमुष्णिहा। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनास्य नि वंतिये। सृत्येन् परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्रुग्मेनास्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्मत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥ परिवर्तयं मुहाभिवर्तयं पुष्णहां राध्यासं न्यवंतियन्नपतिः। [५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेंऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवांश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भेवति। अर्थ देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्नस्तेऽभवन्। सुवृगं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवत्यात्मनां। अर्थो सुवृगं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेंऽवपतः। अथोपपृक्षौः। अथ्

केशान्। ततो वै स प्राजांयत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवेनं चतुरों मासोंऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छी्र्षं नि चार्वर्तयन्त् परिं च। वरुणप्रघासैश्चतुरों मासों ऽवृञ्जत वर्रुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंर्तयन्त परिं च। साकमेधेश्वतुरों मासों ऽवृञ्जत सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंर्तयन्त परिं च। या संवथ्सर उंपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥२८॥ य एवं विद्वाङ्श्वांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परि च। यैषा संवथ्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमामुग्निर्ऋतावागंते निवर्तयंति। पुतदेवैना र रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवन्त्येति॥२९॥ प्र जांयते। य एवं विद्वाँ होहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवन्नेति। प्रैव जायते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानांमृद्धानि। त्रीणि छन्दार्श्सा। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं पृषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्ययाज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनो-ऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा पृष आनींतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य पृवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां पृवाप्येंति। नास्यं रुद्रः प्रजां पृश्चानि मन्यते॥३१॥ पृथ्यपुक्रतास्य प्रति लोका मंयते॥——[६]

आयुंषः प्राणः सन्तंनु। प्राणादंपानः सन्तंनु। अपानाद्यानः सन्तंनु। व्यानाच्युः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्रः सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनंसो वाचः सन्तंनु। वाच आत्मानः सन्तंनु। आत्मनः पृथिवीः सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्षः सन्तंनु। अन्तरिक्षादिवः सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥

इन्द्रों दधीचो अस्थिभिः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवृतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमकेंभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सर्चा। सिम्मिश्च आवंचो युजां। इन्द्रों वुज्री हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर्थं रोहयिद्दिव। वि गोभिरिद्रिमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिक्तिभिः। तमिन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भेवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिष्टः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबलो अनंपच्युतः। वृवृक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥

[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया॰सोऽहन्त्रितिं। प्रह्लादों हु वै कायाधवः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अंहन्त्रितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योचुः। नाराजकंस्य युद्धमंस्ति। इन्द्रमन्विच्छामेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तिद्दिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्ट्रंयो हु वै नामं। ता इष्ट्रंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षेप्रिया इव हि देवाः। तस्मां एतमांग्रावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंमभि समारोंहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्य्वंन्त उपानयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यमभि समारोंहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडांन्त उपानयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता एतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

एव हे देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपार्श्रप्सदां

पश्चमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

चराम। तथा नोऽसुंराः पाप्मा नानुंवेथ्स्यन्तीतिं। त उंपार्श्यूपसदंमतन्वत। तिस्र एव सांमिधेनीरनूच्यं॥३९॥

सुवेणांघारमाघार्यं। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। सुवेणोंपुसदं जुहवां चंकुः। उग्रं

वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी स्वाहेतिं। अश्नन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचंः। एनंश्च वैरंहत्यं च त्वेषं वचंः। एत ह् वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिष्ठिरे। तथों एवैतदेंवंविद्यजमानः। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥ तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी स्वाहेतिं। अश्नयापिपासे ह् वा उग्रं वचंः। एनंश्च वैरंहत्यं च त्वेषं वचंः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽिमनीयैवाहंः

रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥ तस्मादिभेनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अह्नं एव तद्यजमानोऽवंर्तिं पाप्मानं

पृशुमाऽलंभन्त। अह्रं एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयंव

भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचंरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उपवस्थीयेऽहं द्विदेवत्यः पृश्ररा लेभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ ह्योके यजमानः। अस्थि च मार्सं च। अस्थि चैव तेनं मार्सं च यजमानः सङ्स्कुरुते। ता वा एताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमांवृग्निर्मित्रावरुणौ॥४२॥

पश्चपश्ची वै यजंमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मुज्ञा। एतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मुंश्चिति। भेषजतांये निर्वरुणत्वायं। तरु सप्तिभिश्छन्दोभिः प्रातरह्वयन्। तस्मांथ्यप्त चंतुरुत्तराणि छन्दार्शसे प्रातरनुवाके-ऽनूच्यन्ते। तमेतयोपसमेत्योपांसीदन्। उपांस्मै गायता नर् इति। तस्मांदेतयां बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुत्रन्युःहस्तुष्टन्तुऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्य् रात्रिया एव तहेवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिन्नरे मित्रावरुणो नवं च (देवा यजमानो देवा देवा यजमानो यजमानो प्राचरं प्रचरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिन्नरे आतृंच्यान्॥)॥————[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिंशुलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवितुस्तं खनन्ति। स स्वर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यदस्या अध्यजनयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यथ्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्चद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्चद्शेनादंदत। तं पंश्चद्शेनाहंरन्। यावंती पश्चदशस्य मात्रां॥४५॥

तः संप्तद्रशेनाभि प्रास्तुंवत। तः संप्तद्रशेनादंदत। तः संप्तद्रशेनाहंरन्। यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्रशेनं ह्रियमाणस्य तेजो हरोंऽपतत्। तमेंकविर्शेनाभि प्रास्तुंवत। तमेंकविर्शेनादंदत। तमेंकविर्शेनाहंरन्। यावंत्येकविर्शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं॥४६॥

त्रिवृतैव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतैव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावृद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रार् सायुंज्यर सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्रद्शेनं स्तुवतें। पृश्रुद्शेनेव तद्यजंमानुमादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। पृष हि पंश्चद्रयामंपक्षीयतें। पृश्चद्रयामांपूर्यतें। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायुज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यथ्मंप्तद्रशेनं स्तुवतें। सृप्तद्रशेनैव तद्यजंमान्मादंदते। तर संप्तद्रशेनैव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्राँ। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिरेवैनं तत्। मात्रार् सायुंज्य स् सलोकतां गमयन्ति। अथ् यदंकिविर्शेनं स्तुवतें। एकिविर्शेनेव तद्यजमान्मादंदते। तमेंकिविर्शेनेव हंरन्ति। यावंत्येकिविर्शस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एंकिविर्शः। आदित्यस्यैवैनं तत्॥४९॥

मात्रा १ सार्युज्य १ सलोकर्तां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंघ्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णां ऽभवत्। रज्जता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं।

प्तामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेति। प्रतामेव तद्रेज्तां कुशीमनुसंविशति। प्रह्नादों हु वे कांयाध्वः। विरोचन् स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रदेशेऽभवत्। तस्मात्प्रदरादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥
आदित्यः पंथद्शस्य मात्रां स्तुवतं पथद्शमेव तद्यजंमान्मादंदतं समद्शेनेव हंरत्यादित्यस्येवेनं तद्विशति च्त्वारि चा [१०]

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती १षि। य एतस्य स्तोमा इति। त्रिवृत्पंश्चदशः संप्तदश एंकवि १ शः॥ ५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सोंऽब्रवीत्। सृप्तदुशेनं ह्रियमाणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमृश्विनौं धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा करम्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यदिश्विभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्यै परिवापः। मित्रावर्रुणयोः पयस्याऽथं। कस्मादितेषार् ह्विषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिषज्युङ्स्तस्मादिति। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सव्ने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् मार्ध्यं दिने सवने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सवने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सवने। द्वादंशकपाला इस्तृतीयसवने। विलोम तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सवने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपाला ॥-स्तृतीयसवने। यज्ञस्यं सलोमत्वायं। तदाहुः। यद्वसूनां प्रातः सवनम्। रुद्राणां मार्ध्यं दिन सर्वनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथ कस्मादितेषा ई हविषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्येंनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैर्हविर्भिरभिं-षज्यङ्स्तस्मादितिं॥५४॥ एकविश्श आहस्तृतीयसवने प्रांतः सवनं पश्चं च

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच प्रवावंपादादंबिभयुः। तस्मां प्रतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दा इस्युपांदधः। तेषामति त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यां तत्प्रत्यतिष्ठिदिति। यानि च छन्दा ईस्यत्यिरच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृहृती। मामेव भूत्वा। मामुप् सङ्श्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्ठुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैंः पुङ्किःर्बृहृतीः मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराणयपच्छिद्यांदधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभिर्क्षरैरुण्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिर्क्षरैम्बिष्टुग्बृंह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यप्च्छिद्यां-दधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शिभेर्क्षरैर्गायत्री बृंहतीं नोदंभवत्। द्वादशभिंरक्षरैर्जगंती बृहतीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंहती पुव भूत्वा। बृहतीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दा रेसि रथों मे भवत। युष्माभिंर्हमेतमध्वांनुमनु सश्चंराणीति। तस्यं गायत्री च जगंती च पक्षावंभवताम्। उष्णिक्नं त्रिष्टुप्च प्रष्ट्यौं। अनुष्टुप्चं पुङ्किश्च धुर्यौं। बृहत्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छंन्दोरथमास्थायं। एतमध्वांनुमनु समंचरत्। एत १ ह वै छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजेते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभवन्वाव सा देवाक्षरा बृहत्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय पद्गं॥_____

अग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंपः प्राणमिन्द्रौ दधीचो देवासुराः स प्रजापितिः स समुद्रो ये वै चुत्वार्स्तस्यावांचो

कृत्तिंका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥

अग्नेः कृत्तिंका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वंपति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवृशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन पूर्वेण् प्रचंरति। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्धैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजंमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहा-ऽऽहुंतिं जुषाण इत्यांह। आहुंत्यैवैन र्श्व शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे निर्ऋत्यै भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृंत इरिंणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वै निर्ऋत्या आयतंनम्। स्व एवाऽऽयतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। एष तें निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनाँम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंतित। मुश्चेमम॰हंस् इत्यांह। अ॰हंस एवैनं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्ये रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतिक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हिंत्ये। स्वाहा नमो य इदं चकारेति पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंतन्ते। आनुमतेन प्रचंरति। इयं वा अनुमितिः॥४॥ इयमेवास्मै राज्यमनुं मन्यते। धेनुदिक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चरुं

निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य र समृद्धे। आग्नावैष्णावमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवताँश्चैव यज्ञं चार्वं रुन्थे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यद्वामनः। तेनं वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालुं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहन्निर्ति। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥

वार्त्रघ्नमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। इन्द्रों वृत्र हत्वा।

देवतांभिश्चेन्द्रियणं च व्यार्ध्यत। स पृतमैंन्द्राग्नमेकांदशकपालमपश्यत्। तिन्नरंवपत्। तेन् व स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्थ। यदैंन्द्राग्नमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनेंन्द्रियं च यजंमानोऽवं रुन्थे। ऋष्भो वही दक्षिणा॥७॥ यद्वही। तेनांऽऽग्नेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृंद्धे। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। पेन्द्रं दिथं। यदांग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। य्ज्ञमुखम्विर्द्धं पुरस्तांद्धत्ते। यदैन्द्रं दिथं॥८॥

इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषभो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंषभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्जन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भवति हुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय॥९॥ देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैन्द्राग्नो भवत्युन्नित्ये। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वैश्वदेवश्चरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नमै। अन्नमेवास्मै स्वदयति॥१०॥

प्रथमजो वृथ्सो दक्षिणा समृद्धौ। सौम्य श्र्यांमाकं च्रुं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टप्च्यस्य राजां। अकृष्टप्च्यमेवास्मैं स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धौ। सरंस्वत्यै च्रुं निर्वपति। सरंस्वते च्रुम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। एति वा एष यंज्ञमुखाद्दथ्याः। यो ऽग्नेर्देवतांया एति। अष्टावेतानि ह्वी १षि भवन्ति। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्री ऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखाद्दथ्यां अग्नेर्देवतांयै नैति॥११॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमांनः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त् यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमांनौ। तास्विग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥

सोमो रेतो ऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। स्वथ्सरो वै प्रजापंतिः। स्वथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतो ऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेति॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मारुतो निरुप्यतें। यज्ञस्य क्रुप्त्यें। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश पुवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अविधिषुः। कथमपंराः सृजेयेतिं। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्ध्यदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा पुतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यां वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजनयति। वार्जिनमानयति। प्रजास्वेव प्रजातासु रेतो दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजाता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रें यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेतिं। मां द्वितीयमिति सोमौंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेतिं। मां तृतीयमितिं सिवता। मया प्रसूता जेष्यथेतिं। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धाँस्यामीतिं। मां पंश्चमितिं पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेतिं॥१७॥

तैंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। सुवित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधाः पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं हवी १षिं निरुप्यन्ते

विजित्यै। नोत्तंरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। अजाता इव ह्यंतर्हि

पशर्वः॥१८॥

पृदित्यंशोचद्युद्धरत्यव्रवीत्रातृष्टयां जेप्युवेत्यृत्रि पृशवंः। [२] त्रिवृद्धर्हिर्भवति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जुरायुं।

तदेव तिर्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवति। एकं इव ह्ययं लोकः॥१९॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिं तिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति। प्रथम्जामेव पृष्टिमवं रुन्थे। प्रथम्जो वथ्सो दक्षिणा समृद्धे। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो वै पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्थे। पृश्चगृहीतं भवति। पाङ्का हि पृशवः। बहुरूपं भवति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृद्धे। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निम्ंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थन्ति। अग्निम्ंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवानूयाजाः। अष्टौ ह्वी॰िषं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं

रुन्थे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयेंत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बह्वांनयेंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंअन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं पृवैनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमानस्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिंव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमियत्वा। तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आंहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजमानमविविध्येत्। स्रुचा जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। यत्प्राङ्घर्वतः। देवलोकम्भिजयेत्। यद्देक्षिणा पितृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥ रक्षार्थसि युज्ञर हन्युः। यदुदङ्काः मृनुष्युलोकम्भिजयेत्। प्रतिष्ठितो होतुर्व्यः।

एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रति तिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवंः। ऋतून् यज्ञः। यज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होतव्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजित। अथो खल्वांहुः। छन्दार्शस् वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजित। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरीं सोमुपानौं। तयोः परि्धयं आधानम्। वाजिनं भाग्धेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य पिर्धीं जुंहुयात्। अन्तर्राधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहृत्यं पिर्धीं जुंहोति। निर्राधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छिति। बर्हिषे विषिश्चन्वाजिनमा नंयित। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूर्य भक्षयन्ति। एतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भक्षयित। प्रावो वै वाजिनम्। यजमान एव प्रशून्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥ क्षेक्षे बहुक्षं भवत्याज्यंभागे प्रव आज्यंमव्येवहिद्योवः प्रत्यक्तसमुख्यिति होत्यां भाग्येवमेते चूल्वारं चा [3]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा असृजत। ता एन्मत्यंमन्यन्त। ता अस्मादपाँकामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वर्रुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपाधावन्नाथिम्च्छमानाः। स एतान्य्रजापंतिर्वरुण-प्रघासानपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स प्रजा वरुणपाशादंमुश्चत्। यद्वरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यक्र आसीत्। स्वयः प्रसृंतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मांचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं छोक उभयाबांहुः। यज्ञाभिंजित् इ ह्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्य॰सौँ। उत्तंरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्धे। अथों यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्यै। पृतद्वाँह्मणान्येव पश्चं यदैंन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानांम्। यदिंन्द्राग्नी। यदैंन्द्राग्नी। भवंति। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी र्च मेषश्च भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

शमीपर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामपिं यच्छति। प्रजापंतिमन्नाद्यं नोपांनमत्। स एतेन शतेध्मेन हविषा ऽन्नाद्यमवारुन्ध। यत्परः श्रतानि शमीपूर्णानि भवन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। सौम्यानि वै क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयति। यत्कुरीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाऽऽह्तंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्धे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कुन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। एकमितंरिक्तम्। जनिष्यमांणा एव प्रजा वंरुणपाशान्म् अति॥३३॥

उत्तरस्यां वेद्याम्न्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अप्धुरमेवैनां युनिक्त। अथो ओर्ज पुवासामवं हरित। तस्माद्ग्रह्मणश्च क्षुत्राच्च विशोऽन्यतो-

उपकृमिणीः। मा्रुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वा्रुण्योत्तरया। अन्तत एव वर्रुणमवं यजते। यदेवाध्वर्युः करोतिं॥३४॥

तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्करोतिं। तत्पापीयान्करोति। पर्लीं वाचयति। मेध्यांमेवेनां करोति। अथो तपं एवेनामुपं नयति। यञ्जार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति रंग्न्थ्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवेनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीयो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार् सवीर्यत्वायं। यद्ग्रामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रुणमवं यजते। यजमानदेवत्यों वा आहवनीयः॥३६॥

भातृव्यदेवत्यो दक्षिणः। यदांहवनीये जुहुयात्। यजमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वंरुणपाशेनं ग्राहयति। शूपेंण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षश्चे निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिक्षष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केष वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत् इत्यांह। देवा-ऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप् प्रेतेति वावैतदांह। वरुणगृहीतं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्यज्ञंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वरुणगृहीतेनैव वरुणमवयज्ञते। अपोऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवयजते। प्रतियुतो वर्रुणस्य पाश् इत्याह। व्रुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौं उस्येधिषीमहीत्याह। सुमिधैवाग्निं नमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोऽसि तेजो मिथे धेहीत्यांह। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥ करोतिं ग्राहयत्याहवनीयस्तिष्ठं जुहोत्यपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सोंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तनूः। तां प्रीणीत। अथासुरानभि भविष्यथेति। ते देवा अग्नयेऽनीकवते पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भागधेयेंन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकान्यजनयतं। ततो देवा अभवन्। पराऽस्राः॥४०॥

यदग्नयेऽनींकवते प्रोडाशंमष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्तु इंस्वेनं भागधेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भागधेयेंन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्यौंऽग्निरनींकवान्। तस्यं रश्मयोऽनींकानि। साकः सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तंः। द्यावांपृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मरुद्धाः सान्तपनेभ्यंश्चरं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभयतः समंतपन्। यन्मरुद्धाः सान्तपनेभ्यंश्वरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तदुंभयतो यजमानो भ्रातृं व्यान्थ्यन्तंपित। मध्यन्दिने निर्वपित। तर्हि हि तेक्ष्णिष्टं तपित। चरुर्भवति। सर्वतं एवैनान्थ्यन्तंपित। ते देवाः श्वीविज्यिनः सन्तः। सर्वासां दुग्धे गृहमेधीयं चरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भीवितेतिं। स शृतों-ऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्ञन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्ञन्तिं। तेंंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाक्त्रा क्रियतें। पृश्वव्यं तत्। पाक्त्रा वा एतित्र्क्रियते। यन्नेध्माब्रुहिर्भवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

तत्। पाकुत्रा वा पुतात्क्रयता यत्रव्माबुर्हिमवाता न सामियुनार्न्वाह्॥ ००॥ न प्रयाजा इज्यन्तैं। नानूंयाजाः। य एवं वेदं। पृशुमान्भंवति। आज्यंभागौ यजति। युज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। मुरुतों गृहमेधिनों यजति। भागधेयेनैवेनान्थ्समध्यति। अग्निङ्स्विष्टकृतं यजित् प्रतिष्ठित्यै। इडाँन्तो भवति। प्रश्वो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥४५॥ अस्य अश्रयन्त्रह्मुभीयं चुकं निर्वयन्नज्ञह्ह्युन्बाहेडांनो भवति हे चं॥————[६]

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहमेध्येव स्यात्। वि त्वंस्य यज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं यज्ञो व्यृद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्यांश्जीयात्। गृहमेध्येव भवति। नास्यं यज्ञो व्यृद्धाते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आञ्चताभ्यंञ्जत। अनुं वृथ्सानेवासयन्। तेभ्योऽसुंगः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंगुन्पुनंरगच्छत्। गृहुमेधीयेंनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आञ्चतेऽभ्यंञ्जते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रों निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रों निहिंतभाग उपावर्तित। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तित। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेंनैवैन् समर्धयति। ऋषभमाह्वंयति। वृषद्भार एवास्य सः। अथों इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हृत्वा। परां परावतंमगच्छत्। अपांराधमिति मन्यंमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीति। तैंऽब्रुवन्मरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ वयं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रथम १ हिवर्निरुप्याता इति। त एनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिवर्निरूप्यते विजित्यै। साकः सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्थ्समृंख्यै। एतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हवी १ षिं। एतद्वाँह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥ उद्धारं वा पुतमिन्द्र उदंहरत। वृत्र हत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुभवंति। उद्धारमेव तं यजमान उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधं। वैश्वकर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माणि यर्जमानोऽवं रुन्थे॥५१॥ ऋद्यतेऽभ्यंञ्जते जुहोति वृणामहै भवत्यष्टौ चं॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुणप्रघासैर्वंरुणपाशादंमुश्चत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवृगं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वंरुणपाशान्मुंश्चति। साकुमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवंदयते॥५२॥

पितृयज्ञेन सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपिति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तरत एवोपवीय निर्वपेत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दंक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृंत्। सोमाय पितृमते पुरोडाश १ षद्कंपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै सोमः पितृमान्॥५३॥ संवथ्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्धों धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रींणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुंषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ल्लोके भंवति। बहुरूपा धाना भवन्ति। अहोरात्राणांमभिजित्यै। पितृभ्यौऽग्निष्वात्तेभ्यो मन्थम्।

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवृत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपंमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एक्योपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनार्भ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यन् दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतोंऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृत्त्यै। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मनुष्यलोकात्। यत्परुषि दिनम्। तद्देवानांम्। यदंन्तरा। तन्मनुष्यांणाम्॥५७॥

यथ्समूलम्। तत्पितृणाम्। समूलं ब्रहिर्भवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृणाित। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरः। तानेव प्रीणाित।

त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्त्रं यजुंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानांयतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न परिद्ध्यात्। रक्षा १ सि य्ज्ञ १ हेन्युः। द्वौ परिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्यै। अथो मृत्योरेव यजंमानमुथ्सृंजित। यत्रीणि त्रीणि ह्वी १ ष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषा १ साकं प्रमीयेरन्। एकैकमनूचीनांन्युदाहरन्ति। एकैक पुवैषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपं किशिप्व्यांय। उपबर्हणमृपबर्हण्याय। आञ्जनमाञ्चन्याय। अभ्यञ्जनमभ्यञ्चन्याय। यथाभागमे-वैनांन्प्रीणाति॥६०॥

निर्वयंवे पितृमानिश्रिष्याना एक्योपं मन्युत्यखांना भवति मनुष्यांणां पद्यने परिद्ध्यान्तीयते पर्वं च॥————[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायानुं ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघारयति। यज्ञप्रषोरनंन्तरित्यै। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥ यदांर्षेयं वृंणीत। यद्धोतांरम्। प्रमायुंको यज्ञंमानः स्यात्। प्रमायुंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यज्ञंमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजिति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्सृंजिति। आज्यंभागौ यजित॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। पृषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्यें। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्ये। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अह्नं एवैनान्पूर्वया पुरो-ऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतो-ऽवदायं। उद्झतिं कामति व्यावृत्त्ये॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति

वर्षद्वरोति। स्व्धाकारो हि पिंतृणाम्। सोम्मग्रे यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरं। सोमं पितृमन्तं यजित। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवथ्सरमेव तद्यंजित। पितृन्बंहिषदो यजित॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदंः। तानेव तद्यंजिति। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजिति। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनंः। ते पितरोंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणामग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। तादृगेव तत्। एतत्ते तत् ये च त्वामन्विति तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्ते। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृश्मनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भुंवते। यथ्मत्यांहवनीयें। अथान्यत्र चरन्ति। आतमितोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्निरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुप् तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंस्-दक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विंन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनंरयुक्त। अक्षुन्नमीमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपतिष्ठन्ते। अक्षुन्नमीमदन्ताथ त्वोपतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमीमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरंःति प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथो तुर्पयंत्येव। तृष्पंति प्रज्ञयां पृश्निः। य पृवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजौ यंजित। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजित। चतुरंः प्रयाजान् यंजित। द्वावंन्याजौ। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयोजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयोजयन्ति। पित्रिये गोपीथायं॥७०॥
होतांगुमाज्येभागे यजित सत्तेतुमवंबति व्यक्ति वर्षह्वदं यजित तम्व तर्बज्ञत्वनु निष्कांमन्त्यहेनानृतवे नवं च॥————[९]

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते।

एकमितिरिक्तम्। जुनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेंत्। अन्तर्वचारिणर् रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अपृशुकाया आहुत्ये नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशिति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नारण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पड्वींशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्य्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पुष ते रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिंकयेत्यांह। शुरद्वा अस्याम्बिंका स्वसां। तया वा पुष हिनस्ति। यर हिनस्ति। तयैवैनर् सह शंमयति। भेषुजङ्गव इत्यांह। यावंन्त एव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं करोति। अवाम्ब रुद्रमंदिम्हीत्यांह। आमेवैतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यम्बकं यजामह् इत्याह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदाह। उत्किरन्ति। भगस्य लीफ्सन्ते। मूतेंकृत्वाऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेंऽवसं करोतिं। ताहगेव तत्। एष तें रुद्र भाग इत्याह निरवत्त्ये। अप्रतीक्षमा यन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रं पुनरत्य निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति॥७५॥

पन्ते कृष्णिव्यंवयो सासे सिक्षी पर्व। [१०]

अर्नुमत्ये वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्प्रजापंतिः सिव्तोत्तंरस्यान्देवासुराः सौँऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन् ता वंरुणप्रघासेर्प्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्श॥१०॥ अर्नुमत्ये प्रथमजो वृथ्सो बंहुरूपा हि पुशवुस्तस्मौत्पृथमात्रं यदुग्नयेऽनीकवत उद्धारं वा अग्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥ अर्नुमत्ये प्रति तिष्ठन्ति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुतद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयो भवति। वायवें वृष्ट्यें प्रदापयिता। स प्रवास्मे वृष्टिं प्रदापयित। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ह्योके वृष्टिंधृता। स प्रवास्मे वृष्टिं निर्यच्छिति॥१॥

द्वादशग्व सीरं दक्षिणा समृद्धै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुंरान्भिभंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकंरिष्य इतिं। स त्रेधाऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सों ऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रों ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभवत्। तदिन्द्रतुरीयस्थेन्द्र- तुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥ वृहिनी धेनुदक्षिणा। यद्वहिनी तेना ऽऽभ्रेयी। यद्गैः। तेन रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री।

यथ्स्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धौ। प्रजापंतिर्य्ञमंसृजत॥४॥
त॰ सृष्ट॰ रक्षा १ स्यजिघा॰सन्। स एताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरंमिमीत।
ताभिर्वे स दिग्भ्यो रक्षा १ सि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य एव
तद्यजंमानो रक्षा १ सि प्रणुंदते। समृद्ध॰ रक्षः सन्दंग्ध॰ रक्ष इत्यांह। रक्षा १ स्येव
सन्दंहति। अग्रयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य एव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं
करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृद्धौ॥५॥

इन्द्रों वृत्र १ ह्त्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नालंभत। त १ शृच्यां-ऽगृह्णात्। तौ समलिभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सन्धा १ सन्दंधावहै। अथु त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण नाऽऽर्द्रेणं हनः॥६॥ न दिवा न नक्तमितिं। स एतमपां फेर्नमिसिश्चत्। न वा एष शुष्को नाऽऽर्द्रो व्युंष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतिद्दवा न नक्तम्। तस्यैतिस्मिं श्लोके। अपां फेनेन शिरु उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स पृतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाः स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध रक्षंसां भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षाः सि हन्ति॥८॥

स्वर्नृत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवाऽऽयतंन्
रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणैव रक्षा रेसि
हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्याह। सिवृतृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति।
हतर रक्षोऽवंधिष्म रक्ष्म इत्याह। रक्षंसा रूप्तत्यै। यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्यै।
अप्रतीक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्नतर्हित्यै॥९॥
व्यक्षित् वर्षणं वर्तायं विक्रित्य अस्तत् सर्म्बे हन् मित्रवृत्ति हिन् स्त्ये विक्रित्य ॥९॥
[१]

धात्रे पुरोडाशुं द्वादेशकपालुं निर्वपति। सुंवथ्सरो वै धाता। सुंवथ्सरेणैवास्मै

प्रजाः प्रजंनयति। अन्वेवास्मा अनुंमितर्मन्यते। राते राका। प्र सिंनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपति। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥ वैष्णवं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यंमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव

प्रजाता वीर्ये प्रतिष्ठापयति। तस्मौत्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्भो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनौऽऽग्नेयः। यदंष्भः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धौ। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥

अग्निः प्रजां प्रजांनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बुभुर्दक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं चुरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चुरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रेः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पुशून्प्रजनयति॥१३॥ वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुर्भविति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निवैश्वान्रः। संवथ्सरेणैवैन इं स्वदयति। हिर्रण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वे हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्ं। बहु वे राजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते खलु वे क्रियमांणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्चति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

पुन्नावेण्य्यमकांद्रशक्ष्मालुं यदंपने दर्शति पूप पुन्नाव्यनित् हरेण्यं दक्षिणा दक्षिणं वा [२]

र्िनामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। एतेंऽपादातारंः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येंऽपादातारंः। त एवास्मै राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्ममाहृत्यं निर्वपेत्। अरंिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रिन्नत्वायं॥१६॥ यथ्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकेन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्थे। तावंतीमवंरुन्थीत। अन्वहिन्नवंपति। भूयंसीमेवाशिष्मवं रुन्थे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पृत्यं च्रं निर्वपित ब्रह्मणों गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

पुन्द्रमेकांदशकपाल र राज्नन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋषुभो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं चुरुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धे। भगाय चुरुं वावाताये गृहे। भगमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं परिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां न्खिनिर्भित्रम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपाल स्सेनान्यों गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। वारुणं दशंकपाल स्तूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धै। मारुत स्पष्तकंपालं ग्रामण्यों गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्थे। पृश्चिर्दक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्में भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चरुं भागद्घस्यं गृहे॥२०॥

अत्रं वै पूषा। अत्रमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रं निरवंदयते। श्वल उद्वारो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानि ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मै राष्ट्रमवं रुन्थे। राष्ट्रमेव भंवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपैत्। रिवनं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रितिनिर्वपिति। इन्द्रांय सुत्राम्णें पुरोडाशमेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचैं। आशिषं पुवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आमेवैतामा शास्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भंवति।

श्वेतायै श्वेतवंथ्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमिपं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयित। बार्ह्स्पत्येन पूर्वेण प्रचरित। मुखत एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयित। स्वयं कृता वेदिर्भवित। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनिभिजितस्याभिजित्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सेव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिणा समृद्धौ॥२३॥
प्रकृतवाय समृद्धे पश्रेह दक्षिण समृद्धे प्रमृत्वयं पृहे भंगद्वयस्य पृहे भंवित दुव्धं प्रभिजित्ये हे चं॥————[३]

देवसुवामेतानि ह्वी १ षे भवन्ति। एतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मैं स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ स्वते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिविचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः स्त्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वां प्रस्वाना ५ सुवतामिति

हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मृहृते क्षत्रायं महृत आधिपत्याय महृते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिंदधाति। स्वां तनुवं वर्रुणो अशिश्रेदित्यांह। वरुणस्वमेवावं रुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवेनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवेनम्। सर्वे व्राता वर्रुणस्याभूवित्रित्यांह। सर्वव्रातमेवेनं करोति। वि मित्र एवेररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमेवैनं तारयति। असूंषुदन्त यज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। व्यं त्रितो जीरेमाणं न आन्डित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्यै। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमुग्नयें स्विष्टकृतें समर्वद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभुयतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिजंयति॥२७॥

मुख्यानामशुर्यात्याहाताशुदित्यांह कमत् एकं चा.................................[४] अर्थेतः स्थेति जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों हविष्कृंतानामेवाभिर्घृत

गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपार राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्मैं गृह्णाति। अथो श्रियंमेवेनंम्भिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषां-ऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहित। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अन्नं वै मुरुतः। अन्नमेवावं रुन्धे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥
राष्ट्रमेव वर्चस्व्यंकः। सूर्यत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षिति। अनृतं

ऊर्मिमन्तमेवैनं करोति। वृषसेनों ऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। व्रजक्षितः

यदातपंति वर्षंति। सत्यानृते पुवावं रुन्धे। नैन सत्यानृते उंदिते हि ईस्तः। य पुवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥ वाशाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्याह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृश्नवो कन्धे। विश्वभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव पंयस्व्यंकः। जनुभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेवन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्याह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेंज्ञस्त्र्यंकः। अपामोषंधीनाः रसः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यथ्मरंस्वती। पृष्ठमेवैन समानानां करोति। षोड्शिभंगृह्णाति। षोडंशकलो वै पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शिभंजुंहोतिं षोड्शिभंगृह्णाति। द्वात्रिर्श्शथ्सम्पद्यन्ते। द्वात्रिर्श्शदक्षरा- उनुष्टुक्। वागंनुष्टुफ्सर्वाणि छन्दा स्सि। वाचैवैन सर्विभिश्छन्दोभिरिभषिंश्रति॥३२॥

क्मिरियोह् स्वेवर्षः स्थेत्यहि ब्रह्मवर्ष्यस्वसेन्द्रस्यः स्थेत्यहिव पुरुषः पर चे। [५] देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवैनाः स॰सृंजित। अनंधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवैनाः सादयित। अन्तरा होतुश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनश्च सादयित। आग्नेयो वै होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेर्जसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिर्रण्येनोत्पुंनाति। आहुत्यै हि

पुवित्राभ्यामुत्पुनन्ति व्यावृत्त्यै॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्र्ं ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुः। तुपोजा इत्यांह। तुपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रम्सीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्रश् हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्रश् हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृतश् हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्यसूयायेत्यांह। राज्यसूयांय ह्यंना उत्पुनाति। स्धमादौँ द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति। वरुणसवमेवावं रुन्धे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। क्षत्रस्योल्बंमिस क्षत्रस्य योनिर्सीति तार्प्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति। शृतायुर्वे पुरुषः शृतवीर्यः। आत्मैकंशृतः॥३६॥ यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शष्पांण्याशयति। सुरांबलिमेवेनं करोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः। मित्रावर्रुणो प्राणापानाभ्याम्। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमलिखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आवित्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रो वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आवित्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यजमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरित। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्यांह। इयं वै देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मिन्नाष्ट्र इत्यांह। विशेवैन रे राष्ट्रेण समर्धयति। महुते क्षुत्रायं महुत आधिपत्याय महुते जानंराज्यायेत्यांह।

आमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाः राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। शृत्रुबाधंनाः स्थेतीषून्। शत्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात मां प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो व शंर्व्याः। प्रतीचीं तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं पृवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य पृवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपिरिमितादेवेनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं व वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यम्परिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यक्षय व्यक्षत्व व्यक्षत्वालाह्मवुः हिरंण्यमेकश्वो गंमयुन्त्याहं बाह्यण नाष्ट्रान्थं प्रवेत्याह व्यविर्यं वाव्यक्षत्व वाव्यक्षत्यक्षत्व वाव्यक्षत्व वाव्यक्षत्व वाव्यक्षत्व वाव्यक्षत्व वाव्यक्षत

दिशों व्यास्थांपयित। दिशाम्भिजिंत्त्यै। यदंनु प्रकामैंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मनुसाऽनु प्रक्रांमिति। अभि दिशों जयित। नोन्माँद्यति। समिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं पुवावं रुन्थे॥४१॥ उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे। उदींचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्नेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनूर्ज्ञिहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये॥४२॥

मारुत एष भंवति। अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्धे। एकंविश्शतिकपालो भवित् प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गुणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्यैरेव पृश्विभिरार्ण्यान्पृशून्परि गृह्णाति। तस्माद्भाम्यैः पृश्विभिरार्ण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नार्भवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोति। राष्ट्रमेव भवति। बार्ह्स्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भवति। ऐन्द्रमुत्तंरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मै क्षत्रं चं स्मीची दधाति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रं प्रति-ष्ठापयति॥४४॥

षद्वुरस्तांदभिषेकस्यं जुहोति। षड्डपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः

संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवसर्पति।

तस्य न कुतंश्चनोपाँच्याधो भंवति। भूतानामवेँष्टीर्जुहोति। अत्राँत्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायंते। ततं पुवैन्मवंयजते। तस्माँद्राज्ञसूयेंनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

सोमंस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भूयादितिं शार्दूलचुर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावं रुन्धे। मृत्योवां एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत्र् हिरंण्यम्। अमृतंमिस मृत्योमां पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्धत्ते। शतमानं भवति॥४६॥

श्वायुः पुरुषः श्वेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपिरेष्टादिधे निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्मं दधाति। अवेष्टा दन्दशूका इतिं क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दशूकां नेवावंयज्ञते। तस्मौत्क्रीबं देन्दशूकां दश्शुंकाः। निर्रस्तं नमुंचेः शिर् इतिं लोहितायसं निर्रस्यति। पाप्मानमेव नमुंचिं

निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥

सोमो राजा वरुंणः। देवा धंर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचरं सुवन्तां ते तें प्राणरं सुवन्तांमित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीतिं। तेजस्वयंव स्यात्। दुश्चर्मा तु भंवेत्। सोमस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुंषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चिति। अग्नेस्तेज्ञसेत्यांह। तेजं पुवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च पुवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावरुणयोवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्ञसेत्यांह॥४९॥ ओजं पुवास्मिन्दधाति। क्षृत्राणां क्षृत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षृत्राणांमेवैनं क्षत्रपंति करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह।

स्मावंवृत्रन्नधरागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागुधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥ उदं क्ष्रित्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिंनस्ति। यश हिनस्ति। तेनैवैन सह शंमयति। तस्मैं हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भवित। पूर्णमयेनाध्वर्युरभिषिश्चित। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन् वैश्यः। विशंमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन् जन्यः। मित्राण्येवास्मे कत्पयित। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥

भवत्यहः प्रस् अज्ञस्याह निर्वदयते यजते जन्यो हे चं॥————[८]

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरित विजित्यै। मित्रावर्रणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसारथी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुऋमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ लोकानभिजंयति। यः क्षत्रियः प्रतिहितः। सौं उन्वारंभते। राष्ट्रमेव र्भवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति॥५४॥ मरुतां प्रसवे जेषमित्यांह। मरुद्धिरेव प्रसूत उर्ज्ञयति। आप्तं मन इत्यांह। यदेव मनुसैफ्सींत्। तदांपत्। राजुन्यंं जिनाति। अनांकान्त एवाक्रंमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यो रांजन्यं जिनातिं। समहमिंन्द्रियेणं वीर्येणेत्यांह॥५५॥ इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंत्ते। पुशूनां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पुशूनां वा एष मुन्युः। यद्वराहः। तेनैव पंशूनां मृन्युमात्मन्धत्ते। अभि वा इय र सुंषुवाणं कामयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वारांही उपानहावुपंमुश्चते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृथिव्या इत्याहाहि सायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्च एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण उपहरित। एक्धेव यर्जमान् आयुर्क्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रति-ष्ठित्यै॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्माँचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठेताम्। समानं लोकिमेयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तर्दधाति। हुर्सः श्रुंचिषदित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दसाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दार्शस। सर्वेभिरेवैनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधाति। वर्ष्म्वैवनर्थं समानानां करोति॥५८॥
प्रवत् व्यक्ति वर्ष्मेल्याहानांत्वे प्रतिष्ठिते ब्रह्मणाऽऽदंधाति सम् वं॥
[१]

मित्रों ऽसि वर्रुणो ऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहं। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यां मेवैनं मुपाव

मित्रों ऽसि वर्रुणो ऽसीत्याह। मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः सव्यः। वैश्वदेव्यां मिक्षाँ। स्वमेवेनौ भागधेयंमुपावंहरति। समहं विश्वैदेवैरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता पुवाद्याः कुरुते। क्षुत्रस्य नाभिरिस क्षुत्रस्य योनिरसीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्याह। यथायुजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिशसायै। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रणः पस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुऋतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैन ई सुऋतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सत्यसंव इत्याह।

ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सत्यौजा इत्याह। इन्द्रमेवैन ई सत्यौर्जसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र राजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव

संवितारंमेवैन ई सत्यसंवं करोति॥६०॥

इत्याह। मित्रमेवैन र सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वर राजन्ब्रह्मासि वर्रणोऽसि

स्त्यधर्मेत्यांह। वर्रुणमेवैन १ स्त्यधर्माणं करोति। स्विताऽसि स्त्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरति। इन्द्रोंऽसि स्त्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जर्गतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दार्शसे। सत्यमेवावं रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते एवावं रुन्धे॥६२॥

नैन १ सत्यानृते उदिते हि १ स्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेंणैवास्मां अवरपुर १ रन्थयति। एव १ हि तच्छ्रेयः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय १ राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओ्दनमुद्भंवते। पुरुमे्ष्ठी वा एषः। यदांदुनः। पुरुमामे्वैन् ॥ श्रियंं गमयति।

सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्ग्लाँ(४) सत्यंराजा(३)नित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवैनं मुश्चिति। परः शतं भंविति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि॰शितकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षाया अग्नये स्विष्टकृते समर्वद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः पिरं गृह्णाति। अपात्रश्चे स्वाहोर्जो नश्चे स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेति तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥ वेवित्यांह स्वयसंव करीति विष्ठभीवेवेतांष्ट्र व्याहोति व्याहंति स्वाहोत् प्रवाहेति विष्ठित । १० विष्ठित । १०

पृतद्वाँह्मणानि धात्रे रुबिनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीर्दिशः सोमुस्येन्द्रंस्य मित्रो दर्शा॥१०॥ पृतद्वाँह्मणानि वैष्णुवं त्रिंकपालमत्रुं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांहु दिशो व्यास्थापयुत्युदंङ्गरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ राज्ञञ्चतुंष्पष्टिः॥६४॥ पृतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दशधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्सु ५ सृद्धिरनु समंसर्पत्। तथ्सु रुसृपारं सरसृत्त्वम्। अग्निनां देवेनं प्रथमेऽहन्ननु प्रायुंङ्का। सरस्वत्या वाचा द्वितीयैं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीयैं। पूष्णा पुशुभिंश्चतुर्थे। बृहस्पतिंना ब्रह्मंणा पश्चमे। इन्द्रेंण देवेनं षष्ठे। वर्रुणेन स्वयां देवतंया सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञाँ ऽष्टमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नवमे। विष्णुंना यज्ञेनाँ ऽऽप्नोत्। यथ्स ४ सृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुखी। पुरस्तांदुप्सदार् सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पुव तद्दंधाति। अन्त्ररा त्वाष्ट्रेणं। रेतं पुव हितं त्वष्टां रूपाणि विकरोति। उपरिष्टाद्वैष्णवेनं। युज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रति तिष्ठति॥२॥

जामि वा एतत्कुर्वन्ति। यथ्मद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयच्छुत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तः। अपसु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षात्पसी अवं रुन्धे। दशभिवंथ्सतरैः सोमं क्रीणाति। दशाँक्षरा विराट्॥३॥

अर्न्न विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भंवन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों

भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। स्प्तद्शः स्तोत्रं भंवति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः॥४॥ प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावंध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवेनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मैं वासयति। रुकाश होत्रैं। आदित्यमेवास्मा उन्नंयति। अश्वं प्रस्तोतृप्रतिहर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्ठौहीर्ब्रह्मणै। आयुरेवावं रुन्धे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छुर्सिनै। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। प्वित्रे

एवास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वरुंणमवं यजते॥६॥ अनुङ्गाहंमुग्नीधें। वहिर्वा अनुङ्गान्। वहिरग्नीत्। वहिनैव वहि यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सर्रस्वती तृतीयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वारवन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सारस्वतीरपो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुखौ। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यर् श्रयति। वारवन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

र्ड्श्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयन्ति। दिशामवैष्टयो भवन्ति। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बार्हस्पत्यम्भिघारयित। यजमानदेवत्यो वै बृहस्पतिः। यजमानमेव तेजंसा समर्धयित॥८॥

आदित्यां मुल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मार्क्तीं पृश्विं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मार्क्त्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्श मार्क्त्ये। तस्मौद्राष्ट्रं विश्वमतिवदति। गुर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगर्भा मारुती। विश्वे मुरुतः। विश्वमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सृत्यमवारुभ्यत॥१०॥

यदिश्वभ्यां पूष्णे पुंरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपिति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे चुरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृणाति। सवित्रे सत्यप्रसवाय पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं प्रसूत्ये। दूतान्प्रिहंणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृध्नव १ शुंष्कदृतिर्दक्षिणा समृद्धौ॥११॥

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपञ्चालाः प्राञ्चों यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्माद्वसन्तं व्यवसायादयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्मात्पुरस्ताद्यवानाः सवित्रा विरुन्धते। बार्हस्पत्यं चुरुम्। सवित्रैव विरुध्यं।

ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्तरं द्वादंशकपालम्। तस्माँ अघन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला याँन्ति। सार्स्वतं च्रुं निर्वपति। तस्माँतप्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन विधृता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानि ह्वी १ षि निरुप्याणीत्यांहुः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः इति। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तरं उत्तरेषाम्।

सुंवथ्सरस्यैवान्तौ युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये॥१४॥

हान्द्रम्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठीवत्।

इन्द्रस्य सुषुवाणस्य दश्धान्द्रय वाय पराठपतत्। स यत्प्रथम ।न्रष्ठावत्। तत्कंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कर्कन्धुं। यत्रुस्तः। स सि॰हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूंलः। यत्कर्णयोः। स वृकंः। य ऊर्ध्वः। स सोमंः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुद्धौ। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्थे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावं रुन्थे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्थत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पाणि क्रीणाति। न वा एतदयो न हिरण्यम्॥१७॥ यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुरां। यथ्सौत्रामणी समृद्धे। स्वाद्वीं त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवेनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व

सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवताँभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीं: क्रीतः सोमो वसंति। पुनातं ते परिस्नुत्मिति यजुंषा पुनाति व्यावृत्त्यै। प्वित्रेण पुनाति। प्वित्रेण हि सोमं पुनन्ति। वारेण शर्श्वता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिपवितस्यैतयां पुनीयात्। कुविदङ्गेत्यनिरुक्तया प्राजापत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धैव यजमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यामेवास्में भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ १ सैन्द्रत्वायं॥ २०॥

यत्रिषु यूपेंष्वालभेत। बहिर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्।

एक्यूप आर्लभते। एक्धैवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। नैतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशाः ह्येते। युव॰ सुराममिश्वेनेतिं सर्वदेवत्ये याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वां एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्ं। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता।

यदि ब्राह्मणं न विन्देत्। वृल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्च पुरोडाशांश्च भवन्ति समृद्धौ। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥ इन्द्रिये एवास्मै समीची दधाति। परस्तादनयाजानां परोडाशैः प्रचरित। पशवो

इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचंरति। पृशवो वै पुरोडाशाः। पृश्नेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं प्रसूत्ये। वारुणं दशंकपालम्। अन्तृत एव वर्रणमवं यजते। वर्डवा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्ध सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यथ्सौँत्रामुणी

समृद्धै। बार्ह्स्पत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लेभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैव यज्ञस्य व्यृद्धमपिं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भवति। न ह्यंतस्य ग्रहंं गृह्णन्तिं। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णाया र् समवनयति॥२४॥

शृतायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्तरा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। शृतमानं भवति। शृतायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तिन्नदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। यर सोमोंऽति पर्वते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्थे। तिसृभिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मे भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समर्वनयति धारयंतीन्द्रियाणि चुत्वारि च॥-

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रंमते। अथैषोऽभिषेचनीयंश्चतुस्त्रिष्ट्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्श्चद्वे देवताः। ता पृवाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्ट्शः। तमेवाऽऽप्नोति। स्ष्शूर पृष स्तोमानामयंथा-पूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै युज्ञः। यावान्पवंमानाः। अन्तः श्लेषंणुं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पवंमानाः। तेनाऽसर्श्वरः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनेवाग्निष्टोमेनुर्प्नोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृश्चवं उक्थानिं। यदुक्थ्यो भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥
सामाः प्रश्चं उक्थान्यं वा

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवित। वाग्वै वायुः। वाच एवैषों ऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजाना रं सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतमु त्यन्दश् क्षिप् इत्याह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवैतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अऋन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय् इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रंथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुर्द्वतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुर्गृत्तमा भविति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैन स्व उपनमिति। यः सामेभ्य एतिं। पापींयान्थ्सुषुवाणो भविति। पुतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भविन्ति॥३१॥

तैरेव स्वान्नेतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिंश्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिंश्लोक ऋंध्रोति। उभयोरेव लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविर्शोऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भवति। एकविर्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकवि १ शः। राष्ट्र १ संप्तद्शः। विशं एवैतन्मध्यतों ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा

पृष विशां प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यतें। यद्वा एनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्सुंवर्गं लोकम्भ्या रोहित। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत। अतिजनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहित। अथो अस्मिन्नेव लोकं प्रतिविधत्यनुन्मादाय॥३३॥ अक्राज्यों भवंति दश्येयं माद्येशीर्ण पा। [८]

इयं वै रंजता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवेनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। वरुंणस्य वा अभिष्च्यमांनस्याऽऽपंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंघ्नन्। तथ्सुवर्ण् १ हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानिर्घाताय। शतमांनो भवति शतक्षेरः। शतायुः पुरुंषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चा वर्चा वर्षा वर्षा वर्षा प्रवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा वर्षा प्रवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्षा वर्

अप्रंतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांजुसूर्येन् यजंत इतिं। युदा वा

पृष एतेनं द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्सरमाँप्रोति। यावंन्ति संवथ्सरस्याहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंभवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥

नानैवाहोंरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंभवति। व्यष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतिं तिष्ठति। अमावास्यांयां पूर्वमहंभवति। उद्दृष्ट उत्तंरम्। नानैव मासयोः प्रतिं तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव समानपक्षे पुंण्याहे स्यातांम्। तयोः

कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपुश्व्यो द्विरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्यंते छन्दंसी। गायुत्रं च त्रैष्टुंभं च। जगंतीम्न्तर्यन्ति। न तेन् जगंती कृतत्यांहुः। यदेनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीति। यदा वा पुषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सर्वनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्व्यः। व्यंष्ट्रिवा एष द्विरात्रः। य एवं विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्यंवास्मां उच्छति। अथो तमं एवापं हते। अग्निष्टोममंन्त्तत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः।

देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

वर्रुणस्य जामि वा ईंश्वर आँग्नेयमिन्द्रंस्य यश्चिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रंतिष्ठितो दर्श॥१०॥ वर्रुणस्य यदिश्विभ्यां यश्चिषु तस्मादुद्वंतीः सुप्तत्रिर्श्यत्॥३७॥ वर्रुणस्य प्रति तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्ञिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तैंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंऽस्या ओषंधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासां ज्रम्बा रुप्यन्त्यैत्। तेंंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भागधेयंमिच्छमाना इति पितरोंऽब्रुवन्। किं वो भागधेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वत्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भांगधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्षि। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येतिं।

सौंऽब्रवीद्वरं वृणै। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चराणीति। तस्मौद्धथ्यं जातं दश रात्रीर्न दुहिन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चरित। वारेवृत्र्ष्ट्रं ह्यंस्य। तस्मौद्धथ्यः सर्रसृष्टध्यः रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥ अलिस्वेद पातृं एकं पा

प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपाँस्त। सौंऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंवरुरुंथ्समानोऽन्वैंत्। तमंवरुधं नाशंक्नोत्। स तपोऽतप्यत। सौंऽग्निरुपांरमतातांपि वै स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृष्ट। तस्माद्रराटे केशा न संन्ति। तद्ग्रौ प्रागृह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तिद्वंचिकिथ्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विचिकिथ्सति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवः स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। करोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्ं। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥ भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहुंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पश्चममंजुहोत्। सोंऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिर्वे मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भागधेयमि जीनिष्य इतिं। तुभ्यमेवेद १ ह्याता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भाग्धेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मादि श्रिहोत्रमुंच्यते। तद्ध्यमानमादित्यौं ऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतिदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यंं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं साय ह्यंते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेयः

स्यौत्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं ज्होतिं॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्ये प्रांतर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजा-पंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स एतदिग्निहोत्रं मिंथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यज्ञंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वै स प्राजांयत। यस्यैवं विदुष उदिते सूर्ये-ऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्यः राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावाऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तं दहशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्येते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्रिरन् समारोहित। तस्मौद्धूम एवाग्नेर्दिवां ददशे। यद्ग्रये

सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुहुयात्। आऽग्नये वृश्चेत। देवतांभ्यः समदं दध्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव साय होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिंरग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्या साय हूंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निज्यांतिरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजातासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजाता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमृत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यदुदिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रुताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्नन्त। ताहगेव तत्। काऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्स न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव सम्प्रिति। अथो यथा प्रार्थमौष्मं परिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥ अमूह विचिक्थमंत्र जुहोत्वामंस्जनाप्रहोतः सूर्याय प्रार्जुहोत् जुहित सम्पर्धते ह्यते स्थापयित सम्प्रति हे चं॥———[२]

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पत्नी स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमपिं दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गांरान्निरूह्याधिं श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुर्मो वा पुषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमेव हि पंश्वयम्। न प्रतिषिश्चेद्वह्मवर्च्सकांमस्य। सिमंद्धिमेव हि ब्रंह्मवर्चसम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्व्यम्। यज्जुहोति। तद्भेह्मवर्चिस। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्यांतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथों देवत्रैवैनंद्गमयति॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासयेंत्। यजंमान शुचाऽर्पयेत्। यदंक्षिणा। पितृदेवत्य ई स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥ पत्नी १ शुचा ऽपंयेत्। उदीचीन् मुद्धां सयित। एषा वै देवमनुष्याणा १ शान्ता दिक्। तामेवैन्दनूद्धां सयित शान्त्ये। वर्त्म करोति। यज्ञस्य सन्तंत्ये। निष्टंपति। उपैव तथ्स्तृंणाति। चतुरुन्नंयित। चतुष्यादः पशवंः॥२०॥

पृश्नेवावं रुन्थे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच् उन्नंयित। प्रजायां अनूचीन्त्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजाऽर्धुका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्यै। नाहोंष्यनुपं सादयेत्। यदहोंष्यनुपसादयेत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मै वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स एता समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयोऽधियन्त॥२२॥

यदेन र समयंच्छत्। तथ्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। समेवैनं यच्छति। आहुतीनां धृत्यैं। अथो अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका र सिमधमाधाय द्वे आहुती जुहोतिं। अथ कस्यार्र

समिधिं द्वितीयामाहंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्थ्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र् स्मिधंमाधायं। यजुंषा-ऽन्यामाहृंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्धंती आहृंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पीर् वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोति। तस्मौद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयित॥२४॥

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थस्यादितिं। कनीयस्तस्य पूर्वर् हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अजुहवुः। तत्नस्तेऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयंत् पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्वर्षे हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुरा अजुहवुः। तत्तस्ते पर्राऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परै्व भविति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवैनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुर्मृच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं कामित। अवाचीन र सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाति। कुर्धं प्रातः। प्र जंनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ के द्वे आहुंती भवत इतिं। अग्नौ वैश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्रूयात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्।

यत्तृष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यित्रमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यिद्वतीयम्। तत्पितृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमिति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपित स्वगाकृंत्यै। उिद्दंशित। स्प्तर्षीनेव प्रीणाति। दक्षिणा पूर्यावंति। स्वमेव वीर्यमनुं पूर्यावंति। तस्माद्दक्षिणोऽर्ध आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं पूर्यावंति। हुत्वोप सिर्मन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य समिद्धौ। न ब्रुहिरनु प्र हेरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्निहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहत्यम्। यज्ञस्य सन्तत्यै। अपो नि नयिति। अव्भृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभुवुन्भुवृति जुहुयात्रंयति मार्ष्टि द्विः प्रार्खाति प्राजापुत्यमाचामतीन्थेऽकः॥_______________________________

रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

ब्रह्मवादिनो वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमिति। वथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानाम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तिरिक्षमाग्नीद्भम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहिः॥३४॥

वनस्पतंय इध्मः। दिशंः परिधयंः। आदित्यो यूपंः। यजमानः पृशुः। समुद्रो-

ऽवभृथः। संव्थ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बंहि्ष्यं दत्तं भवित। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥ अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददाति। सा दक्षिणा। यावंन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदिग्निहोत्र सर्वस्यैव संमवदायांजुहवुः।

तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यन्निति। यथ्सायं जुहोति।

यजेमानस्यापेराभावाय। यत्प्रातः। अह्नं एव तद्धुताद्याय। यजेमानस्यापेराभावाय।

यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं

मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेजस्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मे पृशूनवं रुन्थे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। द्ध्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधं। इन्द्रियाव्यंव भंवति। यवाग्वां ग्रामंकामस्योषधा वै मंनुष्याः। भागधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्यंव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयित। चतुंरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरित। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्वाक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योपसदो वेदं। उपैनमुप्सदो नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदंः॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुपसदों नमन्ति। विन्दतं उपसत्तारम्ं। यो वा

अंग्रिहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्भारं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। प्राणो वा अंग्रिहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वषद्भारः॥४२॥ य पृवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्र्यावांणश्चाग्निहोत्रिणो

य पृवं वेदं। तस्य त्वेंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्र्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न तुर्पयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्त्र्पयेंत्। तृप्ता एनं प्रजयां पृशुभिंस्तर्पयेयुः। सजूर्देवैः सायं यावंभिरितिं सायः सम्मृंशति। सजूर्देवैः प्रात्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रात्यावांणः॥४३॥

तानेवोभया इस्तर्पयति। त एनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्पयन्ति। अरुणो हं स्माहौपवेशिः। अग्निहोत्र एवाह सम्यं प्रांतर्वज्रं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीया स्मो भ्रातृंव्या इति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। स्मिथ्संप्तमी। स्प्तपदा शक्वरी। शाक्वरो वर्ज्यः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांतर्वज्रं यजमानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥ वर्षः प्रातरहताबाय जायते कथेऽसामा कंरालेश वा अग्निहोत्रस्यांपुसर्वं वपद्वारक्षं प्रातृव्योणे वक्वसीणं वा [५]

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मृन्वन्में जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्याँऽऽत्मृन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेँऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहौषीदात्मृन्वन्में जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मृन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानामग्निः। तनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा १ हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्नमायन्। स आदित्यौऽग्निमंब्रवीत्। यत्रो नौ जयौत्। तन्नौ सहासदितिं। कस्यै कोऽहौषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क् इतिं।

प्राणानांमहमित्यग्निः॥४६॥

त्नुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौंषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद् गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्निः समर्धयति। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदे। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्ये-ऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवान्। तेन् त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्ये-ऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवंति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौऽन्यदांलुम्भ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि पूर्यावंतित। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्यमात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांहुर्यावंतित। ततो वे स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जयित। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उत्तेकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवित। असौ

ह्यांदित्यों ऽग्निहोत्रम्॥४९॥

त्रुवै गुपुर्विर्भवृत्यविता भवेत्येकं चा----------------[६] रौद्रं गर्वि। वायुव्यमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमधि

राष्ट्र गावा वायुव्यमुपसृष्टम्। आर्युन दु्धमानम्। साम्य दुग्यम्। वारुणमाय श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र शर्रः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। स्वितुः प्र क्रान्तम्। द्यावापृथिव्य ई ह्रियमाणम्। ऐन्द्राग्रमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वाऽऽहुंतिः। प्रजापंतेरुत्तरा। ऐन्द्र हृतम्॥५०॥

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मृनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याञ्चेष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्यं। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किन्ष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्यं। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुत्रीयमानम्। बृहस्पते्रत्रीतम्। सवितुः प्रक्रौन्तम्। द्यावापृथिव्य ई हियमाणम्॥५२॥

पुन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोति। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां प्राभिः। प्र सुंवर्गं लोकं जानाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां प्राभिमिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥ वर्षेष्द्वयमाणआवते हे वं॥——[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकौंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकंः। स्कृदेकंः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाधीताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्याः। तूष्णीमुत्तंरा। उभे एवधीं अवं रुन्धे। अग्निज्यीतिज्यीतिंरग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयति। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जायते॥५५॥

यस्यौग्निहोत्रमहुंत् स्यार्ऽभ्युंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय प्राङ्क्दाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिमेतोरासीत। स यदा ताम्येत्। अथु भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिवैं भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवैनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥५६॥ पूर्णां जांके कांमानः॥——[९]

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्ध्याः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। निहितो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्ध्याः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। प्रथमिष्ममूर्चिरा लंभते। आदित्यास्तर्द्धाग्नः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। सर्व एव सर्वेश इध्म आदींप्तो भवित। विश्वे देवास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वेष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भविति। नित्रामुर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽचिंरुदेति। प्रजापंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्र हृतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। ब्रह्मन्नेवास्यांग्निहोत्र हृतं भवति। वसुषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रे प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतासु हृतं भवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उ चैनदेवं वेद॥५९॥ आदित्यासार्द्धाग्निस्तं प्रवास्यांग्निहोत्र हृतं भवति देवेषु च्लारि च (यद्विज्ञाहितः प्रथमर सर्व प्रव तित्रपमङ्गापः शरोऽङ्गाप् ब्रह्म वसुंख्यो॥॥-[१०]

ऋतं त्वां सत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सत्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः सत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनांऽऽदित्यं प्रातः सः। यावदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिर्न रिष्टिः। नान्तो न पंर्यन्तौंऽस्ति। यस्यैवं विदुषौंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

भुस्ति द्वे चं॥**______[११**]

अङ्गिरसः प्रजापंतिरुग्निः रुद्र उंत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौँऽग्निहोत्रप्रायणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मुन्बद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वै यद्ग्निमृतं त्वां सुत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृश्नेव यत्रिमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसर्वो दक्षिणतः पृष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तं मर्नसा-ऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा असृजत। ता अस्माथ्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहुत्वम्। यः कामयेत् प्रजायेयेति। स दर्शहोतारं मर्नसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दर्शहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजांयते। मनंसा जुहोति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजा-पंतेरास्यै। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनाद्धि प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना सृष्ट्यै॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वै योनैः प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यस्मादेव योनैः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो देक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानार् सृष्टानां धृत्यै। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वारसं यशो नर्च्छत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तुम्बमुद्भर्थ्यं। ब्राह्मणं दंक्षिणुतो निषाद्यं। चतुंर्होतॄन्व्याचंक्षीत

पृतद्वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुर्होतारः। तदेव प्रकाशं गमयति। तदेनं

प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्गथ्य व्याचेष्टे॥४॥ अग्निवान् वै देर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपास्ते।

ब्राह्मणो वै प्रजानामुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशे ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट इति। वर्स्तस्मै देयेः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्ये॥५॥ अग्निमादधानो दशंहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजातमेवैनमा धत्ते। तेनैवोद्दृत्यांग्निहोत्रं

जुंहुयात्। प्रजातमेवेनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वृपस्यं दशहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजातमेवेनं निर्वृपति। सामिधेनीरं नुवृक्ष्यं दशहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतन्ते। अथो युज्ञो व दशहोता। युज्ञमेव तन्ते॥६॥ अभिचरं दशहोतारं जुहुयात्। नव व पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दशमी।

सप्राणमेवैनंम्भि चंरित। एतावृद्वे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरित। स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवैनं निर्ऋत्या ग्राहयित। यद्वाचः ऋूरम्। तेन वर्षद्वरोति। वाच एवैनं कूरेण प्र वृश्चिति। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

दशहेला पृष्ठी कृष्ये वार्ष कर्ष पृष्ठ लेत्ते निर्ऋतिगृहीतं पश्च वा

[१]

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंज्येति। स एतं चतुंर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वै स दंरशपूर्णमासावं-सृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपांकामताम्। तौ ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। दर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंर्होतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीये जुहुयात्। दर्शपूर्णमासावेव सृङ्घाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानिं सृज्येतिं। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वै स चातुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपाकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चेहोतार् मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयं जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानार् सृष्टानां धृत्यै। सोऽकामयत पशुबन्धर सृंज्येतिं। स पृतर षड्ढोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो व स पंशुबन्धमंसृजत। सोसमाध्सृष्टोऽपांक्रामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं यृक्ष्यमाणः। षङ्कोतारं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयें जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोऽकामयत सौम्यमंध्वर स्रिजेयेति। स पृत स्प्तहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो व स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सों ऽस्माथ्सृष्टोऽपां क्रामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहेस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर स्पृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभंवत्। यथ्संम्भारा भवंन्ति। युज्ञस्य प्रभूँत्यै। आतिथ्यमासाद्य व्याचेष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयंज्ञो वा एषः। योऽप्र्र्लोकंः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचेष्टे। युज्ञमेवाकंः। प्रजानां प्रजननाय। उपसथ्सु व्याचेष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतेनम्। स्व पुवैनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। स त्रिवृत् स्तोमंमसृजत। तं पश्चद्शः स्तोमो मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चांपरपक्षश्चांभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्त। अपर्पक्षमन्वसृंराः। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्र्यादिति॥१४॥

तं पूँर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भंवति। यं कामयेत् पापीयान्थस्यादिति। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मांत्पूर्वपक्षोऽपरपक्षात्कंरुण्यंतरः। द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

प्रजापंतिर्वे दशंहोता। चतुर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवंः संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः पृशवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया ५ सं वेदं। बहोरेव भूयाँन्भवति। प्रजापितिर्देवासुरानंसृजतः। स इन्द्रमि नासृजतः। तं देवा अब्रुवन्। इन्द्रं नो जनयेतिं। सौंऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्मा इस्तपुसाऽसृक्षि। पुविमन्द्रं जनयध्वमितिं॥१६॥

ते तपोऽतप्यन्त। त आत्मन्निन्द्रमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांगधेयंमभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्संवथ्सरम्। प्रजाः पशून्। इमाँ लोकानित्यं बुवन्। तं वै माऽऽहुत्या प्र जनयतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तं चतुर्होत्रा प्राजनयन्। यः कामर्यंत वीरो म् आजांयेतेतिं। स चतुंर्होतारं जुह्यात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। वयं पूर्वे सुवर्गं लोकिमयाम वयं पूर्व इति॥१८॥

त अदित्या पृतं पश्चेहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुव्गं लोकमायन्। यः सुंवर्गकामः स्यात्। स पश्चेहोतारं पुरा प्रांतरनु-वाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। संवथ्सरो वै पश्चेहोता। संवथ्सरः सुंवर्गो लोकः। संवथ्सर पृवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवर्गं लोकमेति। तेंऽब्रुवृन्निङ्गेरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्था क्वं वः सद्भो ह्व्यं वंक्ष्याम् इति। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायृत्रियां त्रिष्टुभि जगत्यामिति। तस्माच्छन्दः सु सद्भा आदित्येभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा ह्व्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मे प्रजा बिलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदे। द्वादेश् मासाः पञ्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकविश्षः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदे। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥ स्यादितं संवध्यो जनवध्यमितीत्यंव्यादृतवः पदः॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेयेति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं

विधायं। दशंहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः स्रुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। पुतावान् यज्ञऋतुः। स चतुर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिनिति। तस्य सोमों हुविरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूरंषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सौंऽन्तिरिक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामानि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुविरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन् प्रजाः पृशवृश्छन्दा रेसि प्राजायन्त। य एवमेताः प्रजापेतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजाता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां प्रशुभिंमिथुनैजांयते। स पश्चंहोतारमसृजत। स ह्विनीविंन्दत। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। पृतत्ते ह्विरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तद्स्याप्रिंयमासीत्॥२४॥ तदुर्वर्ण् हरंण्यमभवत्। तदुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् हिरंण्यमभवत्। तथ्सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एवः सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्णं आत्मनां भवति। दुर्वर्णों ऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मांथ्सुवर्ण् हरेण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियं गच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव सुवर्गं लोकमैत्। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्योऽसुरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रिष्शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविष्शेन रुचंमधत्त॥२६॥

स्प्तद्रशेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेंन यजंते। स्प्तहोंत्रैव सुंवर्गं लोकमेंति। त्रिणवेन स्तोमेंनैभ्यो लोकेभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रिष्ट्रशेन प्रति तिष्ठति। एकविष्रशेन रुचं धत्ते। स्प्तद्रशेन प्र जांयते। तस्मांथ्सप्तद्रशः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तद्रशः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धत्ते प्रजांत्यै॥२७॥ बुन-दृद्धः ब्री व्यहिष्टेश्वेष्टे प्रजीते॥———[४] देवा वै वर्रणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवताये दक्षिणामनयत्। तामंक्लीनात्। ते उब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्लेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य

तेऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिगृह्णाम। तथा नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीति। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाष्ठीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णाति। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिर्ण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिर्ण्यम्। स्वयैवैनंद्देवत्या प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास इत्यांह। सौम्यं वे वासंः। स्वयैवैनंद्देवत्या प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वे गौः। स्वयैवैनं देवत्या प्रतिगृह्णाति। वर्रुणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषिमत्यांह। प्राजापत्यो वे पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनवे तल्पमित्यांह। मानवो वे तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायांङ्गीरसायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आंङ्गीर्सः॥३०॥

अन्यैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वै देवत्या रथंः। स्वयैवेनं देवत्या प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवाऽऽत्मन्धत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं पुवैनं कृत्वा। सुव्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं पृवैषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वै कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमाविशेत्यांह। समुद्र इंव हि कामः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्तिं। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिंगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णातिं। स एवैनंमुम् प्रिंशोके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा तें काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानोऽमुष्मिं श्लोके दिश्वणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरं। य एवं विद्वान्दिश्वणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रतिं गृह्णाति॥३३॥

अन्तो वा एष यज्ञस्ये। यद्दंशममहंः। दशमेऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्थते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥

अन्नमेवावं रुन्धते। मनसा प्रस्तौति। मनसोद्गायित। मनसा प्रति हरित। मन इव हि प्रजापितः। प्रजापित्रास्यै। देवा वै सूर्पाः। तेषिम्य राज्ञी। यथ्सपिराज्ञियो ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंश १ सित् शान्त्यै। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुरहोतारः। दृश्मेऽहु १ श्वतुर्होतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रंकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। वार्चं यच्छति। युज्ञस्य

धृत्यैं। यज्ञमान्देवत्यं वा अहं। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अह्ना रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वाचं विसृजेत्। अह्भ्रातृंव्यायोच्छि १षेत्। यत्रक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृजिति। पृतावंन्तमेवास्मे लोकमुच्छि १षित। यावंदादित्यौऽस्तमेति॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समिश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मादाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मादाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते॥३८॥

मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजतः। स इन्द्रमिष् नासृंजतः। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजतः। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यतः। तेनोदय्यासुरान्भ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदे। अभि भ्रातृं व्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्ये। सुवृगं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिं होके व्यक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीरसं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हृव्यं वहिति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नंमित। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इति। स वाचस्पते हृदिति व्याहरत्। तस्मात्पुत्रो हृदयम्। तस्मादस्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कांमयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥

देवा वै चतुंरहोतृभिर्यज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भ्रातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्चतुंरहोतृभिर्यज्ञं तनुते। वि पाप्मना भ्रातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयित। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयित। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढोंता। प्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्ति॥४२॥

ऋजुधैवैनममुं लोकं गमयति। चतुर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुर्होता। यशं पुवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयति। सुवुग्यों वै पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गमयति। ग्रहाँनगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वै

सप्तहोंता॥४३॥

इन्द्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुर्होतृननुसवनं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पुश्निः। उपैन सोमपीथो नमिति। बहिष्युवमाने दर्शहोतारं व्याचेक्षीत। माध्यं दिने पर्वमाने चतुर्होतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कौतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसवनमेवैना ईस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पशुभिः। उपैन सोमपीथो नमिति। देवा वै चतुंर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिपरिमितुं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तथ्सहासदितिं। सोमश्चतुंर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥ इन्द्रंः सप्तहौँत्रा। प्रजापंतिर्दशंहोत्रा। तेषा् सोम र राजांनं यशं आर्च्छत्।

तन्त्रंकामयत। तेनापाँकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैषुत्वम्। निविद्धिर्न्यवेदयन्। तन्निविदाँन्निवित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठोऽभूत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनेरिम स्रुंबामहा इतिं। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्दस्त्वम्। साम्रा समानंयन्। तथ्साम्नंः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छिति। यशं एवैनंमृच्छिति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागच्छतः। सोमो हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेति। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यंः। यशं एवैनंमृच्छिति॥४९॥

ड्दं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तिरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मौत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भूयो-ऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादिग्निरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादर्चिरंजायत। तद्भूयो-ऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयोऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भूमिव समहन्यत। तद्वस्तिमीभनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनिमव् हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दर्शहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दर्शहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिल्लिमांसीत्। सोऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्पस्वंवापंद्यत। सा पृथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरक्षमभवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

यदरोदीत्। तदनयो रोदस्त्वम्॥५३॥

य पृवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदिन्ति। पृतद्वा पृषां लोकानां जन्मं। य पृवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपांहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा अंसृजत। तस्मांदिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनाद्धेना असृंजत॥५५॥ ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपांहत। सा जोथस्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रे घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सुन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेति। स तपों-ऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पुते वै प्रजापंतिर्दोहाः। य पुवं वेदं। दुह पुव प्रजाः। दिवा वै नोंऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पुवं देवानां देवत्वं वेदं। देववांनेव भेवति। पुतद्वा अंहोरात्राणां जन्म। य पुवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽधि मनोऽसृज्यत। मनेः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनेस्येव पंरमं प्रतिष्ठितम्। यद्दिं किं चं। तदेतच्छ्वोवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युच्छति। प्रजायते प्रजयां पृश्भिः। प्रपंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्रोति। य पृवं वेदं॥५९॥

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजावुरं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां

देवानामधिपतिरेधीतिं। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमसिं। वयं वै त्वच्छ्रेया ५ सः स्म इतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वमसिं वयं वै त्वच्छ्रेया ५ सः स्म इतिं मा देवा

अंबोच्नितिं। अथु वा इदं तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। पृतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिर्भविष कोऽह स्यामित्यंब्रवीत्। पृतत्प्रदायेति। पृतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्भवीषीति। को ह वै नामं प्रजापंतिः। य पृवं वेदं॥६१॥

विदुरेनं नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मिति। स चन्द्रं म आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चुन्द्रवांनेव भेवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत् इति। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमन्द्रियं द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्यंव भंवति॥६३॥

अयं वा इदं पंरमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनंः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। परमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमुन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तात्। रुद्रा देक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वं देवा उत्तरतः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः पराश्चम्। य एवं वेदं। उपैन १ समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्याय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणुतः पर्यायन्। स दंक्षिणुतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पश्चात्पर्यायन्। स पश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पश्चात्। उत्तरतः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तरतः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत। ताः स्वंतोमुखो भूत्वा-ऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्याय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्याय। अन्नाद एव भवति॥६७॥ असीद्वेदं चन्नमुस्तं य एवं वेदीन्नया्व्यंव भवति प्रत्यश्चं मुखं दक्षिण्तो मुखं पुश्चान्नवं च॥————[१०]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं दशहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का। तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्थ्स्यामितिं। स दशहोतारं प्रयुंक्षीत। बहोर्व भूयाँन्भवति। सोऽकामयत वीरो म आजायेतेतिं। स दशहोतुश्चतुंरहोतारं निरिमिमीत। तं प्रायुंङ्का॥६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजायेतेति। स चतुर्होतार् प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जायते। सोऽकामयत पशुमान्थ्स्यामिति। स चतुर्होतुः पश्चंहोतार् निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थ्स्यामिति। स पश्चंहोतार् प्रयुंश्चीत॥६९॥ द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

पशुमानेव भंवति। सोंऽकामयतर्तवों मे कल्पेरन्नितिं। स पश्चंहोतुः षङ्कोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंत्त्व्युतवौंऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेंतर्तवों मे कल्पेरन्नितिं। स पट्टोतारं प्रयुक्षीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोमपः सोमयाजी स्याम्। आ में सोमपः सोमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति सोमपः सोमयाज्यभवत्। आऽस्य सोमपः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोमपः सोमयाजी स्याम्। आ में सोमपः सोमयाजी जांयेतेतिं। स सप्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोमप एव सोमयाजी भवति। आऽस्यं सोमपः सोमयाजी जायते। स वा एष पशुः पंश्रधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पुद्भिर्मुखेन। ते देवाः पुशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमायन्। तेंऽमुप्मिँ होके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीरसं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं। तस्य वा इयं क्रुप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं स्द्र्यो देवेभ्यो हृव्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नंमित। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवति। अग्निहोत्रं वै दर्शहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासो चतुरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्यौ-ऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवति॥७३॥ अमिन्तः व प्रवंहतारं प्रवंहतारं

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतार् तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा वै वर्रुणमन्तो वै प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिरकामयतान्येवैन्तस्य वा इयं क्रृष्तिस्तस्मांत्तेपानाङ्ग्योतिर्युयद्स्मिन्नांदित्ये स पङ्कांतुः सुप्तहोतार् त्रिसंप्तिः॥७३॥ प्रजापंतिरकामयतान्येवैन्तस्य वा इयं क्रृष्तिस्तस्मांत्तेपानाङ्ग्योतिर्युयद्स्मिन्नांदित्ये स पङ्कांतुः सुप्तहोतार् त्रिसंप्तिः॥७३॥ प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनो वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन् चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षङ्कोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य पृवं चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदं। ऋधोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदं। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं क्रृप्तिं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदं। आयतंनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदं॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशहोता चतुरहोता। पश्चहोता षड्ढोता सप्तहोता। अथ कस्माचतुरहोतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुरहोता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुप्देशनात्। य प्विमन्द्रक्ष् श्रेष्ठं देवतानामुप्देशनाद्धेदं। विसिष्ठः समानानौं भवति। तस्माच्छ्रेष्ठंमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्।

अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छति जनतांमायतः। अथो एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं॥३॥

बुध्यन्ते। अयमागर्न्। अयमवांसादिति॥३॥

समहांता प्रतिष्ठा वेदं बुध्यन्ते पद्गाः———————[१]

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्थ्सप्तदेशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव सिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनाँ भूत्वा प्रतिगृह्णाति। आत्मनो-ऽनाँत्यै। यद्येन्मार्त्विज्याद्वृतः सन्तं निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्ताँत्प्रत्यिङ्ग्रिष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयित। यद्येनं पुनरुप् शिक्षेयः। आग्नींध्र एव जुंहुयाद्दशहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविंग्राहम्। प्राणानेवास्मैं कल्पयित। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृतुमुखऋतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्मैं कल्पयित। कल्पन्तेऽस्मा ऋतवः॥५॥

क्रुप्ता अंस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढोंता वै भूत्वा प्रजापंतिरिद॰ सर्वमसृजत। स

मनोऽसृजत। मनसोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दा ईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि साम। तथ्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यजू ईष्यसृजत। यजुभ्योऽधि विष्णुम्। तद्विष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादधि पशूनंसृजतः पशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तदिन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनं नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यशस्वी भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमुत्तान एवाऽऽङ्गीरसः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिंगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चे प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमुत्तानस्त्वाँऽऽङ्गीरसः प्रतिंगृह्णात्वित्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उंत्तान आँङ्गीरसः। अनयैवैनत्प्रतिंगृह्णाति। नैन ५ हिनस्ति। बुर्हिषा प्रतींयाद्गां वाऽश्वं वा। एतद्वै पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्यंति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥

यो वा अविद्वान्निवृत्तयंते। विशीर्षा सपाँप्माऽमुष्मिँ ह्रोके भंवति। अथ यो विद्वान्निवृत्तयंते। सशीर्षा विपाँप्माऽमुष्मिँ ह्रोके भंवति। देवता वै सप्त पृष्टिंकामा न्यवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तिरक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाँः। अग्निर्म्यवर्तयत। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिभिरपुष्यत्। वायुर्न्यंवर्तयत। स मरीचीभिरपुष्यत्। अन्तिरक्षं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रिश्मिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्म्ऋतुभिः संवथ्सरेणांपुष्यत्। तान्योषान्युष्यति। याङ्स्ते-ऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमंन्द्रियस्यापाँकामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽर्धिमंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमंन्द्रियस्या- ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अर्धमंस्येन्द्रियस्यापंकामति। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रिय-स्यापाकामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णाति। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थिमिन्द्रियस्यापाकामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चंतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त॥१२॥

चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रितिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। चतुर्थमेस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै वर्रुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पृश्चमिनद्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स पश्चमिनद्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। पृश्चमिनद्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥

अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षृष्ठमिंन्द्रियस्यापांक्रामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षृष्ठमिंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। षृष्ठमिंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। षृष्ठमिंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स संप्तमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। सप्तमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। य पुवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। सप्तममस्येन्द्रियस्यापंकामित। तस्य वा उत्तानस्याँऽऽङ्गीरसस्याप्रांणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनद्रियस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सोंऽष्ट्रमिनिद्वयस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। अष्ट्रमिनिद्वय-स्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अष्टममंस्येन्द्रियस्यापंकामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवा-ऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिंगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वाऽऽङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णात्वत्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अन्यैवैनृत्प्रतिंगृह्णाति। नैनरं हिनस्ति॥१६॥

त्रित्यस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधृतार्थं प्रतिगृह्णाति पृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्मिनिन्द्र्यस्यापाँकामत्यितिगृह्णीयाच्वत्वारिं च (तस्य वा अ्ग्रेर्ह्रिरण्यू सोमंस्य वासुस्तदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन वर्रणस्यार्थं प्रजापंतेः पुरुषं मनोस्तल्पन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्राण्यद्वे। अर्थं तृतीयमष्टमं तचतुर्थं तां पंश्चमर पृष्ठर संप्तमन्तम्। तदेतेन द्वे तामेतेनैकं तमेतेन त्रीणि तदेतेनेकम्॥॥——[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृजन्तेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृजन्तेतिं। सोमेन वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिना-ऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

केन्तूनंकल्पयन्तेतिं। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्मप्तहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वित्रितिं। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेनेमाँ श्लोकान्थ्समंतन्वित्रितिं॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपृते दीक्षंते। अवान्तरमेव स्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्यमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यज्ञो वा अर्यमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रशश्संन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य एवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं यज्ञो निर्मितः। स य पृवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृन् वेदेतिं। स ह्येव भूयो वेदं। यश्चतुंर्होतृन् वेदं। यो वै चतुंर्होतृणा् होतृन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥ सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दर्शहोतृणा् होतां। सोम्श्चतुंर्होतृणा् होतां। अग्निः पश्चहोतृणा् होतां। धाता षड्ढांतृणा् होतां। अर्थमा सप्तहोतृणा् होतां। पृते वै चतुंर्होतृणा् होतां। पृते वै चतुंर्होतृणा् होतां। तान् य पृवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नमित्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

अर्थुव्यार्थुव्वित्येव वेदांति सर्व् दिशोऽभि जंयति (वे तर्न स्वर्क्कृत्वा)॥

[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्र स्ता स हृदंयं भूतों ऽशयत्। आत्मृन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंशृण्वन्। ता अग्निहोत्रेणेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धमुपौहन्। तस्मांदग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वोऽह्वंयत्। अग्निर्वायुगंदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंश्वण्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। त उपौहङ्श्वत्वार्यङ्गांनि। तस्माद्दर्शपूर्णमासयौर्यज्ञकृतोः। चृत्वारं ऋत्विजः। पश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंश्वण्वन्। ते चातुर्मास्येरेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्। तस्माचातुर्मास्यानां यज्ञकृतोः॥२४॥

पश्चर्त्विजः। षुद्गत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंश्रण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपर्यावंर्तन्त। त उपौंहन्थ्स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवांश्चं प्राणम्। तस्मौत्पशुबन्धस्यं यज्ञऋतोः। षडुत्विजः। सप्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपूर्यावर्तन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षण्यान्प्राणान्। तस्माध्यौम्यस्याध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भवन्ति। दुशुकृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंशृणोत्। तत्कर्मणैव संवध्सरेण सर्वैर्यज्ञऋतुभिरुपं पर्यावर्तत। तथ्सर्वमात्मानमपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मांथ्संवथ्सरे सर्वे यज्ञऋतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता षड्ढोंता सुप्तहोता। एकंहोत्रे बुलि १ हंरन्ति। हरंन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐनमप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥ चुन्द्रमाश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरंध्वरेणं यज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त सप्तहोंता चुत्वारिं च॥

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नंमस्त्वितिं। सोंऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीतिं। स पुता इश्चतुं रहोतृ नात्मु स्परंणानपश्यत्।

तानंजुहोत्। तैर्वे स आत्मानंमस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। एकंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। चत्र्होतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाप्नोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारि चाऽऽत्मनोऽङ्गानि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। समित्पंश्चमी। पश्चेंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानिं। लोमं छवीं मारसमस्थिं मञ्जानम्॥२८॥

तानिं चाऽऽत्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षड्ढ्रोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानि चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। द्विर्जुंहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। सप्तहोंतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्। सप्त चाऽऽत्मनंः शीर्षण्यांन्प्राणान्थस्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति।

द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवथ्सरम्। सर्वं चाऽऽत्मानमपंरिवर्गं स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥ अ्ग्रिहोत्रं मुज्जानुन्द्विर्जुहोत्यपंरिवर्गक् स्पृणोत्येकं च॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोऽभवत्। तस्माथ्स्र्यंन्तर्वन्नी। हरिणी सती श्यावा भवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मौत्तान्तः कृष्णः श्यावो भवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य एवमसुंराणामसुरत्वं वेदं। असुंमानेव भवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितृनं-मुजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ं। स पितृन्थ्सृङ्घाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत।

तन्मनुष्याणां मनुष्यत्वम्। य एवं मनुष्याणां मनुष्यत्वं वेदे। मनुस्येव भविति। नैनं मनुर्जहाति। तस्मै मनुष्यान्थ्ससृजानायं। दिवां देवत्राऽभवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानां देवत्वम्। य एवं देवानां देवत्वं वेदे। दिवां हैवास्यं देवत्रा भविति। तानि वा एतानि चत्वार्यम्भा १सि। देवा मनुष्याः पितरोऽसुराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भविति। य एवं वेदे॥३३॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायंरियात्। न पुराऽऽयंषः प्र मीयेत। पृशुमान्थस्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भविति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अुग्नेः पंवते। अग्निम्भि

पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तांद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रतिं नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानांम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ यद्दंक्षिणतो वातिं। मात्रिश्वैव भूत्वा दंक्षिणतो वांति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश् आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीतिं। स वा एष मांतिरश्वैव। अथ् यत्पश्चाद्वातिं। पर्वमान एव भूत्वा पश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥ अथ यदुंत्तरतो वाति। सृवितेव भूत्त्वोत्तरतो वाति। सृवितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ य एनं दक्षिणत आयन्तंमुपवदंन्ति॥४०॥

य पुवास्यं दक्षिणतः पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एनं पश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य पुवास्यं पश्चात्पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पश्चादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य पुवास्यौत्तर्तः पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तर्त इतरान्पाप्मनः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषेत। मृण्टयेदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरिति। स यान्दिशं स्निमेष्यन्थ्स्यात्। यदा तान्दिशं वातो वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वां कीर्तिर्गच्छिति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। य एवं

वेदं॥४२॥

वेद सम्पंवत आदित्यात्पंवते वात्या बाँत्येष पर्वमान एव दक्षिणत आयन्तंमुप् वदंन्त्युत्तर्तः पाप्मानुस्ताः स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥————[९]

प्रजापंतिः सोम् राजानमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्ते-ऽकुरुत। अथ ह सीतां सावित्री। सोम् राजानं चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इतिं। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तांद्धाख्यायं। चतुर्होतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पत्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। तार होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। तर होवाच। भोगं तु म् आचंक्ष्व। एतन्म् आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उ ह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुह् स्त्रियो भोगमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामितिं॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थांगरमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दर्शहोतारं पुरस्तौद्याख्यायं। चतुंर्होतारं दक्षिणतः। पश्चेहोतारं पश्चात्। षङ्कोतारमुत्तरतः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पत्निभिश्च मुखेऽलुङ्कत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भंवति॥४६॥

ब्रह्मांत्मुन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं दशुम हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो ह वै नामैषः। तं वा एतं दर्शहृत सन्तम्। दर्शहोतेत्याचंक्षते परोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मुन्नात्मुन्नित्यामंत्रयत। तस्मै सप्तम १ हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स सप्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो ह वै नामै्षः। तं वा पृत स्प्तहूंत सन्तम्। सप्तहोतेत्याचंक्षते परोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुन्नात्मुन्नित्यामंत्रयत। तस्मै षुष्ठ १ हृतः प्रत्यंशृणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढंतो ह वै नामैषः। तं वा पृत षड्ढंतु सन्तम्। षड्ढोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै पश्चम ह्तः प्रत्यंशुणोत्। स पश्चंहतोऽभवत्। पश्चंहतो ह वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहत् ५ सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते परोक्षंण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुन्नात्मुन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं चतुर्थ ह्तः प्रत्यंशृणोत्। स चतुंर्हृतोऽभवत्। चतुंर्हृतो ह वै नामैषः। तं वा एतं चतुंर्हृत्र् सन्तम्। चतुंर्होतेत्याचंक्षते परोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंब्रवीत्। त्वं वै मे नेदिंष्ठ र हृतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयैनानाख्यातार् इति। तस्मानु हैना्र्श्रम्तंर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्माँच्छुश्रूषुः पुत्राणा ५ हर्घतमः। नेदिष्ठो हर्घतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मणो भवति। य एवं वेदं॥५०॥

देवाः पड्ढंतोऽभवृत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते पुरोक्षंणाश्रौषीः पद्वं॥

ब्रह्मबादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्यान्तस्य वे ब्रह्मबादिनो यदशहोतारः प्रजापितृर्व्यस्रं प्रजापितिः पुरुषं प्रजापितरकामयत् स तपः सौँउन्तर्वान्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् राजानं ब्रह्मात्मन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चं प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणतः पंश्वाशत्॥५०॥

ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। शृत्रूयतामा भंरा भोजनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पृत्य स्पुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा स्सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघा स्ति॥१॥

ताइस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नोऽिभदासंति। समानो यश्च निष्ठ्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञातवीर्यः। वृत्रहा पुरुचेतनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मुन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं गुवेषंणु हिरिभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबांधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्ं। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्थिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृंणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य। उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभांहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुंः। त्वामंग्ने हिवष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यैं त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुंरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तुनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रंक्षुत्वर्वतः। पूषा वाजर्ं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मा अभंयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां यज्ञं वितन्वते। चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

अग्री रक्षा रेसि सेधित। शुक्रशोंचिरमर्त्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्रे रक्षां णो अर्ह्सः॥६॥

प्रतिं ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठैरजरों दह। अग्ने हश्सि न्यंत्रिणम्ं। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षयें शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वर हि विश्वभेषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावर्तः। दक्षंं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपंः। यददो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात आवांतु भेषजम्। शम्भूमंयोभूनों हृदे॥८॥

प्र ण आयू ५ षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् हव्यमूहिषे। अया नों धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नमः। कामों भूतस्य भव्यस्य। सुम्राडेको विराजित॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वशी। कामस्तदग्रे समंवर्तताधिं। मनसो

रेतः प्रथमं यदासीत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रशिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगो मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रणो विश्ववेदाः। मृन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिः। देवा असादया इह। अग्ने ह्व्याय वोढंवे। व्रतानुबिभ्नंद्वतपा अदाभ्यः। यजां नो देवा अज्ञरंः सुवीरंः। दधद्रव्नानि सुविदानो अंग्ने। गोपाय नो जीवसे जातवेदः॥११॥

जियारं सत्युमित्रां अप्रवारीं हो सर्ग् अरहंसो वातो हुदे राजत्युक्तिरंगः सुविदानो अंग्न एकं वा [१]

चक्षुंषो हेते मनसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमग्ने मेन्या मेनिं कृणा यो मा चक्षुंषा यो मनसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुममेनिं कृणा यित्कश्चासौ मनसा यचं वाचा। यज्ञैर्जुहोति यज्ञंषा हिविभिं:॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना

निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृतः ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाश्चौ त उभौ बाह्। अपनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मंणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। यज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापृत्ररातयः। अन्तिं दूरे सतो अग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्ज्रेण। कृत्या हिन्म कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्रों निपीयंति। अद्या तिमन्द्र वर्ज्जेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्ने श्वेकमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषा रेसि तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सर्चेतसौ सरेतसौ। उभौ मामवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भवतम्द्य नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥

व्यंथिष्ठाः॥१९॥

चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

वयमारुहेम। अर्था देवैः संधमादं मदेम। उदुत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमश्रृंत। अवांधमानिं जीवसें॥१७॥ वय सोम व्रते तवं। मनंस्तनूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपर्ली। उदश्शेंन पतिविद्यें जिगाय। त्रिष्शदंस्या ज्ञघनं योजंनानि। उपस्थ इन्द्र रथविरं बिभर्ति। सेनां ह नामं पृथिवी धंनञ्जया। विश्वव्यंचा अदितिः सूर्यत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा दर्दाना॥१८॥ सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छतु। आत्वांऽहार्षमन्तरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचिलः।

विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रवा पृथिवी। ध्रुवं

विश्वमिदं जगंत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशामयम्। इहैवैधि मा

तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देवयानंः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं

पर्वत ड्वाविंचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रम् धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि सञ्जयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं हृविषां। तस्में देवा अधिब्रवन्। अयं च ब्रह्मण्स्पतिः॥२०॥

जुष्टीं नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्वरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदंधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरंस्वती। वाजेंभिर्वाजिनींवती। यज्ञं वेष्टु धिया वसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न

आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्नौ। अयांमि सुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रांिय यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतो हवामहे। यो गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नों युज्ञं विंह्वे जुंषस्व। अस्य कुंमों हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मुन्द्रः कुविरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्तें केतुरंभविद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रें प्रथमो देवतानाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद हिवरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत्र हि शंक्रा। विश्वेदिवैर्यक्तियैः संविदानो। दीक्षामस्मे यजमानाय धत्तम्। प्र तिद्वष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंच्रो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमंणेषु। अधि क्षियन्ति भुवंनानि विश्वाः। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥

प्रयः स्त्राचा मनसा यजातै। पृतावंन्त्त्रर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य की्रयो जनांसः। उरुक्षिति र सुजनिमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चसं महित्वा। प्र विष्णुरस्तु तवसस्तवीयान्। त्वेष इ ह्यस्य स्थविरस्य नामं॥२५॥

होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य महा। श्रिया त्वंग्निमितिथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्धस्थिवंरिभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंणु शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रंः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भिः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमहाँम्। अविन्दुज्योतिर्बृह्ते रणाय। अश्विनाववंसे निह्वये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रातुर्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्रयं नो अस्तु। आवां तोके तनये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥

त्वः सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षों विश्ववेदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिहृत्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्यंभवो नृचक्षाः। अषाढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजाः सुंक्षितिः सुश्रवंसम्। जयंन्तं

त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यों घृतासुंतिः। विभूतद्यम्न एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमां यज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवीयसे। सुमज्ञानये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य मह्तो महि ब्रवांत। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ र ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥ इमा धाना घृतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र र सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा

ड्मा धाना घृंतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्रश्रं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदर्थं शश्सिष्य हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषो हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिश्चार् सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु॥३०॥ हरितर्पमिक्ष्यं। अन्वेषणिए। तेषभो जन्तेनाम्। राज्यं क्ष्णीनां प्रकृत हर्न्यः।

हरिवर्पसङ्गिरंः। आचेर्षणिप्रा वृष्भो जनानाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रेः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपमद्भिक्। युक्ता हरी वृष्णायाँह्यर्वाङ्। प्र यथ्सिन्धेवः प्रस्वं यदायन्। आपः समुद्र रथ्येव जग्मः। अतिश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी १

सोमः पृणति दुग्धो अर्शः। ह्यांमसि त्वेन्द्रं याह्यवीङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अंव पृतंनासु प्रयुथ्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिवृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्त्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णः। अहेडमान् उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो युज्ञियांनाम्। या ते काकुथ्सुकृता या वरिष्ठा। यया शश्चित्पबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरस्थात्। सन्ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयें। प्रात्यांवांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्हि यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्र सन्ति क्वयंः पूर्वभाजः। प्रात्यंजध्वमृश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वा यजमानो वनीयान्॥३३॥

वर्षावाणे गंच्छते ने वर्षामांभिशीर्यमेम सुप्रथं भजामहे विशन्तु युद्धवंडिच्छं पिवाषः पद्वा —————[३]

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सरूपा नामं ते माता। सरूपो नामं ते पिता। सरूपाऽस्योषधे सा। सरूपिमदं कृधि॥३५॥ समथ्सुं। घ्रन्तं वृत्राणिं सञ्जितं धर्नानाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृश्चिमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविंश्चन्ति वनस्पतीन्॥३६॥ प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सुदृङ्कासी। विशो

विश्वा अनुं प्रभु। समथ्सुं त्वा हवामहे। समथ्स्वग्निमवंसे। वाजयन्तों हवामहे।

नक्तं जाताऽस्योपधे। रामे कृष्णे असिक्रि च। इद॰ रंजनि रजय। किलासं

पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं च। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्जुतां

वर्णः। परौ श्वेतानि पातय। असितं ते निलयनम्। आस्थानमसितं तर्व॥३४॥

वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गेच्छध्व र संवेदध्वम्। सं वो मना रेसि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वे। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः सिनितः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतो अभि स॰ रेभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानं नः स्वैः। संज्ञानमरंणैः। संज्ञानमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञानरं सविता करत्। संज्ञानमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते व्यम्॥३९॥

अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय नव्यंसे। रक्षा मार्किनों अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गर्वामृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया ह्स्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचीवस्तवं दुर्सनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभ्रुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुश्चत। ऋतस्युर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। यज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येंन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्चत्। द्रुपदादिवेन्म्म्मचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनंसः। उद्वयं तमंस्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अर्गन्म ज्योतिरुत्तंरम्॥४३॥ वर्ष कृष् वन्स्तींश्वानत्ममित वर्ष भरिदत्याश्च वर्ष च॥——[४]

वृषा सो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्युः श्तायुः। स मा वृषाणं वृष्भं कृणोतु। प्रियं विशार सर्ववीरर सुवीरम्। कस्य वृषां सुते सर्चां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रृहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डुपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मर्नः॥४४॥

तः स्प्रीचींकृतयो वृष्णियानि। पौइस्यांनि नियुतः सश्चरिन्द्रम्। स्मुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंस्ङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरयन्थ्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्नं पृथिवीमृत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांतस्तिवंषीभिरिन्द्रः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुमः पर्वतानाम्। आ नों अग्ने सुकेतुनां। रियं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसें। त्वश् सोम महे भगम्। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसें। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजार्रसि चित्रा विचंरन्ति तुन्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच्रु सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यश्चित्रां वदित् त्विधीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययाँ। द्यां वंर्षयतमरुणामंरेपसम्। अयुंक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य निष्ठियंः। ताभियाति स्वयुंक्तिभिः। विहेष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितं देव वस्वंः। दविंध्वतो रुश्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावांधुस्तमों

अपस्वंन्तः। पूर्जन्यांय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छत्। अच्छां वद त्वसंं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नम्साऽऽविंवास। किनेक्रदद्वृष्मो जीरदांनुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥ यो गर्भमोषंधीनाम्। गवां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्। तस्मा इदास्ये

या गभुमाषधानाम्। गवा कृणात्यवताम्। पुजन्यः पुरुषाणाम्। तस्मा इदास्य हृविः। जुहोता मधुमत्तमम्। इडाँ नः संयतं करत्। तिस्रो यदंग्ने शुरद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचेयः सप्यन्। नामांनि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रेश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्तः स्वस्तयै। ययोरिदं

विश्वं भुवंनमा विवेशं। ययोरान्न्दो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिंन्धते। स्तृणन्तिं ब्र्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनाँ। हथो वृत्राण्यंप्रति। युवर हि वृत्रहन्तंमा। याभ्यार् सुव्रजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यैं। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

गु इत्रे गविष्टिषु तन्तुं गर्भुः सुजीताः सखी सम ची। उत नेः प्रिया प्रियास्तुं। सप्तस्वसा सुजीष्टा। सर्रस्वती स्तोम्यांऽभूत्। इमा जुह्वानायुष्मदा नमोभिः। प्रति स्तोमर्थ सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणि पदा विचेत्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णोः पदे पर्मे मध्व उथ्मः। कृत्वादा अस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्सुरेक्णाः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्र्हिः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सिवतः। प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सिवतः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। शुचिंमुर्केर्बृह्स्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानी। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एति। सक्तिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिं ज्ञघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भंर। प्रयपस्यित्रंव स्वथ्यौं। वि नं इन्द्र मृधों जिह। कर्नीखुनदिव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामंस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह माँ। मोदः प्रमोद आंनुन्दः॥५५॥ मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कार्मस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमिह। पृशूनाः रूपमन्नस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्ं। यथा स्त्री तृप्यंति पुःसि प्रिये प्रिया। एवं भगस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुराह् तत्। हन्तेति सत्यं चन्द्रमाः। आदित्यः सत्यमोमिति। आपस्तथ्सत्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दिक्षणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिवदेन्त्रन्यमस्मात्। वैश्वान्रात्पुरएतारम्भेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृतममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृंता पुरूणिं। वैश्वांनर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

सुष्टुतैतुं॥६०॥

नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षित। देवा ॥ याभिर्यजंते दर्दाति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जुते। न स । स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभयं तस्य ता अनुं। गावो मर्त्यस्य वि चंरन्ति यज्वंनः॥५९॥ रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षिभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पशवों वदन्ति। सा नों मन्द्रेष्मूर्जं दुहांना। धेनुर्वागुस्मानुप

अन्तरिक्षुं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृहती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्कंरः।

यद्वाग्वदंन्त्यिवचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानांं निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र् ऊर्जं दुदुहे पयार्श्स। क्रं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्श्य समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिश्श्वतंस्रः॥६१॥

ततंः क्षरत्यक्षरम्ं। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकंर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गणवान्थ्सजातवान्। अस्य सुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपत्ना वाचं मनसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। सुषा सपत्ना श्वशुंरो-ऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयतु जरहंषाणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातो। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्टमोजः। सहस्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदग्न्द्याम्॥६२॥

ध्रायंत्र्येष्ठाशं वहस्पति ज्ञावंत्रतान्त्वो भगस्य व्याण्यकः पृथ्वि यज्वंन एत प्रदिश्वक्षतंश्चे वाजंसाते च्लारि च॥———[६]

वृषाँऽस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषाऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यों हितो बृहन्नामं। वृष्भस्य या ककुत्। विषूवान् विष्णो भवतु। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंबीतु जनैंभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चंस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्मं कृण्। यः सुशृङ्गः सुवृष्मः।

कुल्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमााः। अर्क्नरेणेव सुर्पिषां। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्ं। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेर्रयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमांतीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृंणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेहि प्र भेरा सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ् तिष्ठ शुष्मैंः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जंय। शत्रूंन्थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधों नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्ने प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवितीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जिज्ञेषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्येषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्रेष्ट् सुवंर्म्हत्।

वृत्रहा पुरुचेतनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहारंसि। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वा॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोतु। अयं कृतुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्भिदिथ्सोमंः। ऋषिर्विप्रः कार्व्यन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्भिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिह् वर्चा सि धेहि। अवर्चसं कणुिह शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षुत्रस्यं कुकुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अय र राजाँ प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनर्ज्मि त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन् जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृष्भः स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानवानांम्। उत्तरस्त्वमधेरे ते सपत्नाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः स्अयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बुलिमंग्रे अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्रे मिह् शर्म भुद्रम्। यो देह्यो अनमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्रीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निः। विशंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्रे अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो ब्भूथं। ईडेन्यों वपुष्यों विभावां। प्रियो विशामितिथिर्मानुषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा ततान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनार्हित् ब्रह्मंणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्मं सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मंणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तेवः। ऋत्विजो ये हिविष्कृतः। शृङ्गाणीवेच्छुङ्गिणा १ सन्देदिश्रिरे। चुषालेवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा १ सः। नमः सर्खिभ्यः स्न्नान्माऽवंगात। अभिभूरग्निरंतर्द्रजारंसि। स्पृधों विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहंतिं मामिहष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशांनं त्वा भुवंनानामिभिश्रयम्। स्तौम्यंग्न उरुकृतरं सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्नारं अभिभूरंसि। जुिह शत्रूर् रप् मृधों नुदस्व॥७३॥

स प्रंत्वन्नवीयसा। अभ्रै द्युम्नेनं स्यता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवं नु स्तोमंमुग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसोः कुविद्वनातिं नः। स्वारुहा यस्य श्रियों दृशे। रियर्वीरवंतो यथा। अग्रे युज्ञस्य चेतंतः। अदाभ्यः पुरपृता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव् सोमाय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् शुचितम्ं वस्। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूर्षस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणंः। नव र ह्विर्जुंषस्व नः। ऋतुभिः सोम् भूतंमम्।

तद्ङ्ग प्रतिहर्य नः। राजैन्थ्सोम स्वस्तयेँ। नव्र्इस्तोम्ज्ञवर् ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तञ्ज्षेतार् सचैतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम्द्य। इन्द्रौग्नी वृत्रहणा जुषेथौम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। युज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुमन्तर सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंर्पयत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुव्विदो हि जंजिरे। एदं ब्रहः सुष्टरीमा नवेन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वे देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी समीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मै पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिंममृतं नवेन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्त्रामेतु पृष्टिः। इमं युज्ञं जुषमाणे नवेन।

समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभानुर्घृतास्ंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव इस्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां हिवः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भद्रान्नः श्रेयः समंनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पिंतो आ विंशस्व। शं तोकार्यं तनुवें स्योनः। एतम् त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरस्वत्या अधिमनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपतिः शतर्ऋतुः। कीनाशां आसन्मरुतः सुदानंवः॥८०॥ पुरुषता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृतुन्नवेन मीयसे स्योनश्चत्वारिं च॥

जुष्टश्चर्क्षुपो जुष्टींनरो नक्तञ्जाता वृषास उत नो वृषाँऽस्य श्युः सप्रंत्नवदष्टौ॥८॥

जुष्टों मन्युर्भगो जुष्टीं नरो हरिवर्पसङ्गिरः शिप्रिन्वाजानामुत नंः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशीतिः॥८०॥

जुष्टंः सुदानंवः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयज्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इथ्सर्वं व्यांनशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो हृविः। मनंसिश्चत्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धि देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम हवमं। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् युज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद हिवः। विराट्टेवी पुरोहिता। हव्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा सि देवाः पंरमे जनित्रें। सा नो विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिंरमृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमहि। मा नों हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा व्यम्। जीवा ज्योतिंरशीमिह। सुवर्ज्योतिंरुतामृतम्। श्रोत्रेण भृद्रमुत शृंण्वन्ति सृत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश आ शृंणोिम। येन प्राच्यां उत दंक्षिणा। प्रतीच्ये दिशः शृण्वन्त्यंत्तरात्। तिदच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्। अरात्र नेिमः पिर् सर्वं बभूव॥३॥

उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वन्तः। इद र राष्ट्रमा विश सूनृतांवत्। यो रोहितो विश्वमिदं ज्जानं। स नो राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहर्ररोहर रोहित आर्ररोह। प्रजाभिवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। ताभिः सर्रब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहार्षीद्राष्ट्रमिह रोहितः। मृधो व्यास्थदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतींभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचक्राणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रमुनत्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वथ्समनु तास्त आऽगुंः। तास्त्वा विंशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येंतु रोहिंतः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्विमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृंणीथ शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिङ्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अहर्ष्हृद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंहर्हत्। तेन सुवंः स्तिभतं तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तिरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुवरन्वंविन्दन्। सुशेवं त्वा भानवो दीदिवा सम्। समंग्रासो जुह्वो जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। स संमग्ने युवसे भोजनािन। अग्ने शर्ध महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमािनं सन्तु। स अप्तर्थ सुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा स्ति॥७॥

अस्तेतु गहिते नाको महारिक्षाः—————[२]

पुनर्न् इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि श्वक्रो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणुतां याचितो मनः। श्रुष्टी नों अस्य हुविषों जुषाणः। यानिं नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानिं। अनेनं हुविषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परिं। सर्वाभ्योऽभयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधें त्वा। पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसें। आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृंख्ये। इन्द्रंस्य युञ्जते धियंः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धदंये निविष्टम्॥९॥

सेदग्निर्ग्नी १ रत्यें त्युन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेति। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं हिवषां वयम्। विश्वा आशा मधुंना स१ सृंजािम। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यर्जमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥

अर्गृभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः सहस्री। पूषा नो गोभिरवंसा सरस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनक्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगरं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिर्ददिन्द्रेः सहस्रम्। मित्रो दाता वर्रुणः सोमो अग्निः॥११॥

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामंं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा प्रथंश्च। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहः कुशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानि चकारं प्रथमानि वज्री॥१२॥

अह्न्निह्मन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निह्ं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टांऽस्मे वज्र स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथम्जा महीनाम्॥१३॥

यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आथ्सूर्यं

जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रूत्र किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वज्रेण मह्ता वधेने। स्कन्धारंसीव कुलिशेनाविवृक्णा। अहिं शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरं तुविबाधमृजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहांया अर्तिः। वसुर्दधे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यंया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिष्ध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इध्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुज्जिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यजिष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलां गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंदमृतेषु भूषन्। अश्विंना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद स्ससा। पूषा रक्षितु नो र्यिम्॥१६॥

इमं युज्ञमुश्विनां वुर्धयंन्ता। इमौ रुयिं यर्जमानाय धत्तम्। इमौ पुशूत्रंक्षतां

विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रतें मृहे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सृत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं तें हृव्यं घृतवंथ्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १षिं। इमानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिवंय १ सुभगांसः स्याम॥१७॥
व्यक्षतामुजीपं व्यंपति रक्षतु ने रूपिर सोभंगानिक वा

यज्ञो रायो यज्ञ ईंशे वसूनाम्। युज्ञः सुस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। यज्ञ इष्टः

पूर्विचित्तिं दधातु। यज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं यज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं ब्रहिरितें ब्रही इप्यन्या। इमं यज्ञं विश्वें अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥ तं त्वां भग् सर्व इज्ञोहवीिम। स नो भग पुरएता भंवेह। भग् प्रणेत्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग प्र

नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वेतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वेतीः समा उपयन्त्यापः।

इष्टं पूर्त १ शर्श्वतीना १ समाना १ शाश्वतेन। हिवषेष्ट्वा ८नुन्तं लोकं पर्मा रुरोह॥१९॥

इयमेव सा या प्रंथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणिं कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसांरौ

वयत्स्तन्नमेतत्। स्नातनं वितंत्र षण्मयूखम्। अवान्याः स्तन्तून्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्या वृष्टिं ये विश्वे मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमिद्धः। पृतं जुषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभिंरूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पित् सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष सपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यः॥२१॥ हिरंण्यवाशीरिष्रिः सुंवर्षाः। बृह्स्पितः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सिखंभ्य आसुतिं करिष्ठः। पूष् स्तवं व्रते वयम्। नरिष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह

स्मंसि। यास्ते पूषत्रा वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरिक्षे चरन्ति। याभिर्यासि दूत्या स्पूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अरण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शृक्टीरिव सर्जिति। गामङ्गेष् आ ह्वंयति। दार्वङ्गेष् उपावधीत्। वसंत्ररण्यान्याः सायम्। अर्त्नुक्षदितिं मन्यते। न वा अरण्यानिर्हिन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य ज्रग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बहुन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥

स्याम कृषेह युवानः शुन्यरिक्वमांने द्रयवे विपंदते व्यवीर व॥

[६]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्रमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रुणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवे ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतिरंक्षः सह वार्तन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशोः। वार्तपत्नीर्भि सूर्यो विच्ष्टे। तासाँ त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्मांद्द्रितादवंर्त्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋत्ये चोर्दमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे संकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नस्रंजन्न्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेत्रियाज्ञांमिश्र्सात्। द्रुहो मुश्चािम् वर्रणस्य पाशांत्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर रियइ स्तुंवते कीरयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमिभ ये रक्षंमाणाः। येनं हृता दीर्घमध्वांनमायन्। अनुन्तमर्थमिनंवथ्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोऽसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो

गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स॰शोर्भमाना कन्यंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदानि देवा अयम्स्मीति माम्। अह १ हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रमः। वाचं मनिस् सम्भृताम्। हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। आ भूतिं भूतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्योच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चेरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गमन्त्यन्तमः॥२९॥

क्रोप्यवंतं विच्छुभेऽस्ववामहे च्वारि च॥——[६]

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां क्रतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं शृतशांरदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरसि विश्वायुंरसि।

सर्वायंरिस सर्वमायंरिस। सर्वं म् आयंर्भूयात्। सर्वमायंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नपितः। ब्रह्मं क्षत्र स्वाहाँ॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरण्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंन्नादोऽन्नंपतिः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपतिः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां। वरुणः सम्माद्थ्सम्मादंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपितः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पितिर्ब्रह्म ब्रह्मंपितः। ब्रह्मस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्र राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विशंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पशूनां मिथुनानार्थं रूपकृद्रूपपंतिः। रुपेणास्मिन् युज्ञे यजमानाय

पशून्दंदातु स्वाहां॥३३॥

च स्वाहा साम्राज्यमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहा विशंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहां चृत्वारि च (अग्निः सोमो वर्षणो मित्र इन्द्रो बृहुस्पतिः सिवृता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा दर्शा॥॥—————[७]

स ईं पाहि य ऋंजीषी तर्रत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौत्रिभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्राः अभि तृन्धि वाजान्। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युप्नः सुवंवद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद्र लोककृत्। सङ्गे समर्थ्सु वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वसु। इन्द्रं वय शुनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजै्रू नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। स्नुचा जुंहुत नो हविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानिं घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुंषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमें धा ऋषंयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूँ णुंहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयें ऽव बद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयन्नृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंण्ं चक्षुंस्तुन्वां विदेय। एवा वंन्दस्व वर्रुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्स्सत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाकं सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुर्ण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषुजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषुजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपंश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्ग् सरस्वति। या सरंस्वती वैशम्भुल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपितिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। या ते अग्ने यिज्ञियां त्नूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सीद स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहि। उपावरोह जातवेदः पुन्स्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आयुंः प्रजा॰ र्यिम्स्मासुं धेहि। अर्जस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मुघवानमुग्रम्। सुत्रा दर्धानुमप्रतिष्कुत्॰ शवारेसि। मर्श्हेष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वज्री। त्रिकंद्रुकेषु मिह्षो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबिद्धिष्णुंना सुतं यथा-ऽवंशत्। स ईं ममाद मिह कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रंः। विदद्यतीं स्रमां रुग्णमद्रैंः। मिह् पार्थः पूर्व्य स्मिद्धियंकः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जानतीगौत्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विद्। आये विश्वौः स्वपत्यानि चुकुः। कृण्वानासो अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहृतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो द्भीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रिभे गा इंन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षारंसि सेध। अस्मार्थ्समुद्राह्वंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वाँ। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जिर्तारंमिङ्गः। इन्द्रः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवृथ्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदिदांस ज्येष्ठम्। संवृथ्सर् शुनवृथ्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनाँ। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीद्वृषाँ। अश्वायन्तो गृव्यन्तो वाजयंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उ। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन् ह्वेम॥४५॥ अर्थुत ह्विगांयत यरमबर्पणीना वैश्रमाल्या हांसीत्वपुर वेवहंती नस्तम् पर्द॥———[८]

प्राण उदेहि पुन्रा नो भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूंनार् स ईँ पाह्यष्टो॥८॥ प्राणो रेक्षत्यगृंभीता धाराव्या मुरुतो दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारिरशत्॥४५॥ प्राणः श्नर हवेम॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणं। अमृतांम्मृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजािम् स॰ सोमेन। सोमोंऽस्यश्विभ्यौं पच्यस्व। सर्रस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो विश्वता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हिवः॥१॥

द्धन्वा यो नयों अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रिभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शर्श्वता तना। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखा। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥

इन्द्रंस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्ष्त्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमंः सुत आसृंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यजंमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैषां कृणुत् भोजंनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न जग्मः। उपयामगृंहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्ते जंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। ते जो ऽसि ते जो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वां देवहिंत सदः कृतम्। मा सर्मृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि सीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदाय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मृन्युरंसि मृन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतित्रण सिस्हम्। सेमं पात्व रहंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्कः। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्कः॥५॥

हावः प्रत्यहरूक्तोम् अतिद्रतो गृह्णस्वविष्विक् पर्वं च॥

[१]

सोमो राजाऽमृतर् सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। विपानर् शुक्रमन्धंसः। इन्द्रस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोममुद्यो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अन्धः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥

त्रुङ्गांङ्गिर्सो धिया। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अन्नांत्पिर्सुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षत्रम्। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृंतः। उल्बं जहाति जन्मंना। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तास्ती प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमौ व्यंपिबत्। सृतासृतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। स्त्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धा स्त्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पंरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। विपान १ शुक्रमन्यंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयो- ऽमृतं मधुं॥८॥

सुरावन्तं बर्हिषद ५ सुवीरम्। युज्ञ ६ हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दर्धानाः सोमं

दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजंमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुरंया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजंमानं मदेन। सरंस्वतीमृश्विनाविन्द्रंमृग्निम्। यमृश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सरंस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्रमन्त १ शुक्रं मध्मन्तिमिन्दुम्। सोम् १ राजांनिम्ह भंक्षयामि। यदत्रं रिप्त १ रिस्तंः सुतस्य। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदस्य मनसा शिवेनं। सोम् १ राजांनिम्ह भंक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुंषा। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्यवै। अग्न आयूर्षि पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवजनाः। जातंवेदः प्वित्रंवृद्यत्ते प्वित्रंमुर्चिषिं। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुंनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यमराज्ये। तेषां लोकः स्वधा नर्मः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा् श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ छोके शत र समाः। द्वे स्रुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेज्ञथ्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद र ह्विः प्रजनंनं मे अस्तु। दशंवीर र सर्वगंण इ स्वस्तये। आत्मसिनं प्रजासिनं। पृशुसन्यभयसिनं लोक्सिनं। अग्निः प्रजां बहुलां में करोतु। अत्रं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं दीधर्थ्स्वाहाँ॥१३॥

सीसेन तन्त्रं मनसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं कवयो वयन्ति। अश्विनां यज्ञः संविता सरेस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वर्रुणो भिष्उयन्। तदंस्य रूपमृत्ः शचीभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः स॰रराणाः। लोमानि शष्पैर्बहुधा न तोकाभिः। त्वगंस्य

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

मा रसमंभवन्न लाजाः। तदिश्वनां भिषजां रुद्रवर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थि मञ्जानं मास्रेरेः। कारोतरेण दर्धतो गर्वां त्वचि। सरस्वती मर्नसा पेश्रलं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वर्षुः। रसंं परि्स्रुता न रोहिंतम्। नुग्नहुर्धीर्स्तसंरुन्न वेमं। पर्यसा शुक्रममृतंं जनित्रम्। सुरंया मूत्रांज्जनयन्ति रेतंः। अपामंतिं दुर्मतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातर्थं सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदंयेन सत्यम्। पुरोडाशेन सविता जंजान। यकृत्क्रोमानं वर्रणो भिषज्यन्। मतंस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुदुघा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्लीहा शचींभिः। आसन्दी नाभिंरुदरं न माता। कुम्भो वंनिष्ठुर्जनिता शचींभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतर्धार् उथ्मः। दुहे न कुम्भी इस्वधां पितृभ्यः। मुखु इसदेस्य शिर इथ्सदेन। जिह्वा पवित्रमिश्वना स॰ सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालंः।

वस्तिर्न शेपो हरंसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंर्मृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेंन् तेजों ह्विषां श्रुतेनं। पक्ष्मांणि गोधूमैः क्वंलैरुतानिं। पेशो न शुक्लमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो नसि वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वत्युप्वाकैर्व्यानम्। नस्यानि ब्रहिर्बदेरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णाँभ्याङ् श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न ब्रहिर्श्रुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रियै शिखाँ। सि॰्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिजा तद्श्विनाँ। आत्मान्मङ्गैः समधाथ्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूप॰ शृतमान्मायुंः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतं दर्धाना। सरंस्वती योन्यां गर्भमृन्तः। अश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपा॰ रसेन् वरुणो न साम्नाँ। इन्द्रः श्रियै जनयंत्रपसु राजाँ। तेर्जः पश्ना॰ ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्नुता पर्यसा सार्घं मधुं। अश्विभ्यां

दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

भनेर आगदनर्वसाते ब्याक्रोमः राजां च्लारि चा———[४] मित्रों ऽसि वरुणो ऽसि। समृहं विश्वैद्वैः। क्षुत्रस्य नाभिरसि। क्षुत्रस्य योनिरसि। स्योनामा सीद। सुषदामा सीद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद

धृतव्रंतो वर्रुणः। पस्त्यास्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्मेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्यै भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्तौभ्याम्। इन्द्रस्येन्द्रियेणं। श्रियै यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मै त्वा कायं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूणि। राजां मे प्राणों ऽमृतम्ँ। सम्प्राद्वर्क्षुः। विराद्धोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मृन्युः। स्वराङ्गामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाह् मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो

ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म १ सौं। ग्रीवाश्च श्रोण्यौं। ऊरू अंर्बी जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भ्सत्॥ २४॥ आनुन्दनुन्दावाण्डौ में। भगः सौभांग्यं पसंः। जङ्घांभ्यां पुद्धां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रति क्षत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रति तिष्ठामि गोषुं।

राजा प्राताष्ठतः। प्रात क्षत्र प्रात तिष्ठामि राष्ट्र। प्रत्यश्वषु प्रात तिष्ठामि गाषु। प्रत्यङ्गेषु प्रति तिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रति तिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रति तिष्ठामि यज्ञे॥२५॥
त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृहस्पतिंपुरोहिताः। देवस्यं सिवृतुः

त्र्या देवा एकादश। त्र्यास्त्रे १ शाः सुराधसः। बृह्स्पतिपुरीहिताः। देवस्य सवितुः सवे। देवा देवैरवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयास्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंर्भिः॥२६॥

यजू १ षि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचो याज्यांभिः। याज्यां वषद्वारैः। वष्द्वारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्थ्समंध्यन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिर्ममं। त्वङ्का आनंतिरागंतिः। मा १ सं म उपनितिः। वस्वस्थि। मुज्जा म आनंतिः॥२७॥ पुस्यांस्य सरंस्वत्वे भेपन्येम श्रीरङ्गीन भूसव्वे वृज्ञो यन्तिंभ्रिप्नितिः। वस्वस्थि। स्वाहा म आनंतिः॥२७॥

यद्देवा देव्हेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुञ्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुञ्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकृमा वयम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनसः। विश्वान्मश्चत्व १ हंसः। यद्वामे यदरंण्ये। यथ्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्र्ये। एनंश्चकुमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यावयजंनमसि। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुञ्ज॥ २९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचेरुरंसि निचङ्कुण। अवं देवैर्देवकृंतमेनोंऽयाट्। अव् मर्त्यूर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्वित्रः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाऽऽज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयं तमंस्स्पिरं। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तंरम्। प्रतियुतो वर्रणस्य पार्शः। प्रत्यंस्तो वर्रणस्य पार्शः। एधौऽस्येधिषीमिहं। सुमिदंसि॥३१॥

तेजों ऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वार अग्न आगंमम्। तं मा सर्सृज वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवर्ति पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहाँ॥३२॥

स्यु एतरिस वक्षम वृषं मृश्व मलविव सुमिर्विष जगुन्नि च॥

[8]

होतां यक्षथ्मिमधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्थ्सिमध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षुत्तनूनपातम्।

ऊतिभिर्जेतांरमपंराजितम्। इन्द्रं देव संवर्विदम्। पथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश १ सेन तेजंसा॥ ३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदिडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनममंर्त्यम्। देवो देवैः सवीर्यः। वर्ज्रहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यर्ज। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंि

वृष्मं नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। सुयुग्भिंर्बर्हिरासंदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदोजो न वीर्यम्। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रयन्तामृतावृधंः। द्वार इन्द्राय मीढुषैं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुघं मातरौं मही। सवातरौ न तेजंसी।

वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा। भिषजा सखांया। हविषेन्द्रं

भिषज्यतः। कुवी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरंस्वती भारंती॥३६॥

म्हीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं सुयजं घृत्तिश्रयम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्द्वन्स्पतिम्। शृमितारं शतक्रंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्अन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्व्यं मध्ना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विन्द्र्र् स्वाहाऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहां स्वाहां कृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा अर्ज्यपान्। स्वाहेन्द्र होत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होत्र्यजं॥३८॥

समिंद्ध इन्द्रं उषसामनींके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रि रशता

वर्ज्ञबाहुः। ज्ञ्घानं वृत्रं वि दुरो ववार। नराशरसः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रति य्ज्ञस्य धामं। गोभिर्वृपावान्मधुना सम्अन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंजति प्रचेताः। ईडितो देवैरहरिवार अभिष्टिः। आजुह्वांनो हविषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञंबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हिर्वान्न इन्द्रंः। प्राचीन स्मीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमान स्योनम्। आदित्येर्क्तं वस्ंभिः सजोषाः। इन्द्रं दुरंः कवष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनंयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुद्धे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुक्ते। दैव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मर्धुना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिर्ह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूर्तिः। त्वष्टा दधदिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिंष्टुर्यशसें पुरूणिं। वृषा यजन्वृषंणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैंः। त्मन्यां समञ्जर्छंमिता न देवः। इन्द्रंस्य हब्यैर्जुठरं पृणानः। स्वदांति हब्यं मधुंना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रं। वृषायमांणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतुप्रुषा मधुंना हव्यमुन्दन्। मूर्धन् युज्ञस्यं जुषता ७ स्वाहाँ ॥ ४२ ॥ शर्धमानो महोंभिः पत्नींर्घृतेनं चुत्वारिं आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ सध्रीचींः। सत्यमित्तन्न त्वावा ५ अन्यो अस्ति।

इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहुन्नहिं पिर्शयांनुमर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत् शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्से। मिहं क्षत्रं जनाषाडिंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये च नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

रेवतींनां चत्वारिं च

प्राक्तों र्भृतम्। राया ब्र्हिष्मतो ऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र सङ्घाते। विङ्वीर्यामंत्रवर्धयन्। आ वृथ्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवं बुर्हिरिन्द्र र सुदेवं देवैः। वीरवंथस्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीविशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजां। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याचा द्वेषा सि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजांमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवांक्षीत्। सग्धिर् सपीतिम्न्या। नवेन् पूर्वं दयमाने। पुराणेन् नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहुंती वसु वार्याणि। यजमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंशश्सावाभाँष्टां वसुवार्याणि। यजमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पतिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञश्सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशरसंः। त्रिव्रूथस्निवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शतेनं शितिपृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदस्य होत्रमर्हितः। बृह्स्पितिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पतः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रेणाप्रात्। आऽन्तिरक्षं पृथिवीमंद्दश्हीत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजे। देवं ब्रुहिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासस्थिमन्द्रेणासंन्नम्। अन्या ब्रुही इप्यभ्यंभूत्। वसुवने वसुधेयस्यं वेतु यजे। देवो अग्निः स्विष्टकृत्।

देविमन्द्रमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्विन्थ्स्विष्टकृत्। स्विष्टम् करोतु नः। वृस्वने वसुधेर्यस्य वेतु यर्ज॥४९॥

वियन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज गृहान् वेतु यर्जाभृथ्यद्वं (देवं ब्र्हिर्देवीद्वरिं देवी उपासानक्तां देवी जोष्टीं देवी ऊर्जाहंती देवा देव्या होतारा शिक्षितो देवीस्तुस्रस्तिस्रो देवीं कर्जाहंती वेता वियन्तु वृत्वैत्ववर्धयदवर्धयित्रियंतामेकोंऽ वर्धयश्र्श्वतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृथ्सेन् देवीरयावीप रहुताऽस्पृक्षच्छ्वतेन् दिवश् स्वासुस्थश् स्विष्टश् शिक्षिते शिक्षिते ।।।

होतां यक्षथ्मिमधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैर्भेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविर्मेषो न भेषजम्। पथा मधुंमृताभरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदेरैरुप्वाकांभिर्भेष्जं तोकांभिः। पयः सोमः पिर्सुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षं नराशरसं न नुग्नहुम्। पित्र सुरांये भेष्जम्। मेषः सरस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनोर्व्पा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदेरैरुप्वाकांभिर्भेष्जं तोकांभिः। पयः सोमः पिर्सुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं॥५१॥ होतां यक्षिदिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋषभेण् गवेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सृष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्दुर्गे दिशः। कवष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधें। दुहे

कामान्थ्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥ वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेष्जैः। शूष्ट् सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षित्तिस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिमन्द्रें हिर्ण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। पयः सोमंः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मिन्द्रंमश्विनां। भिषजुं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभुसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। श्मितार श्रातक्रंतुम्। भीमं न मन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्।

स्वाह्य छागंमिश्विभ्यांम्। स्वाहां मेष सरंस्वत्यै। स्वाहंर्षभिमन्द्रांय सि १ हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाह्य प्रियं न भेषु जम्। स्वाह्य सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्र १ सुत्रामाण सिवतारं वर्रणं भिषजां पितम्। स्वाह्य वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषु जम्। स्वाहां देवा स् औज्यपान्॥ ५८॥

स्वाह् । त्रिश्च होत्राञ्चंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमः पिर्स्नुतां घृतं मध्रं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्श्विना सरंस्वतीमिन्द्रः सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भेः सुताः। शष्येर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। श्रुक्ताः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मध्रश्चतः। तानश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताः सौम्यं मध्रं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होत्र्यजं॥५९॥

समिद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घुर्मो विराट्थ्सुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती।

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

सोम र शुक्रमिहेन्द्रियम्। तुनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजार्सीन्द्रियम्। इन्द्रांय पथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहं:॥६०॥

अर्थातामृश्विना मर्थु। भेषुजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरिश्वनाविषम्। समूर्ज् सर रियं देधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोमर् शुक्रं पंरिस्नुतां। सरंस्वती तमार्भरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

कुवष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुघैं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमिश्वना। दिवेन्द्र र सायमिन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नों अश्विना दिवाँ। पाहि नक्त ई सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातमिन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं पंरिस्रुता सोमम्। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्। अश्विंना भेषुजं मधुं।

भेषजं नः सर्रस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्। रूप र रूपमधः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शृश्मानः परिस्नुता। कीलालमिश्विभ्यां मध्। दुहे धेनः सर्रस्वती। गोभिर्न सोममिश्वना। मासरेण परिष्कृता। समधाता सर्रस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधु॥६३॥

नुमृङ् पाले सरस्वत्यः सुर्वेऽहो च।————[१२] अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्राय

जिभिरे। यमृश्विना सर्रस्वती। हृविषेन्द्रमवंर्धयन्। स बिभेद वृलं मुघम्। नर्मुचावासुरे सर्चां। तिमन्द्रं पशवः सर्चां। अश्विनोभा सर्रस्वती॥६४॥

दर्धाना अभ्यंनूषत। हिवषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। सृविता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां हिविष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वर्रुणोऽदर्धत्। यजमानाय दाशुषे। आदेत्त् नमुचेर्वसुं। सुत्रामा बर्लिमिन्द्रियम्॥६५॥

वरुंणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दर्धाना

यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्। हृविषेन्द्र सरंस्वती। यज्ञमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नरां। सरंस्वती हृविष्मंती। इन्द्र कर्मस् नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृंत्रहा शृतक्रेतुः। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्॥६६॥

देवं बर्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारो अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। प्राणं न वीर्यन्त्रिसि। द्वारो दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सर्रस्वती। बलुं न वार्चमास्यें। उषाभ्यां दधिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सर्रस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यां दधिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य

वियन्तु यजं॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांऽवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जः। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जः॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्रस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याँम्। इन्द्रांय दधिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिवरूथः सर्रस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधिदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपणी अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पृतः। इन्द्रांय पच्यते मध्। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वन्स्पतिनी दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजे। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमृश्विभ्याम्। ऊर्णम्रदाः सरस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सदं। ईशायैं मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रमिश्वनां। वाचा वाच सरंस्वतीम्। अग्नि सोम सिवष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रंः सुत्रामां सिवता वर्रणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्निगां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्जुमपंचिति स्वधाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिस्ट्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रीभ्यां दध्रिस्ट्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंश्यां दध्रिस्ट्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंश्यां दध्रिस्ट्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वनस्पितः पद्वं (देवं व्रुहिर्देवीद्वरिरं देवी उपासांविश्वनां देवी जोष्ट्रीं देवी उज्जीहंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारेंदेविस्तिश्वस्तिस्रो देवीदेव इन्द्रो नराशश्सों देव इन्द्रो वनस्पितेंदेवं वर्रुहिर्विर्विरित्तिश्वस्तिस्रो देवीदेव इन्द्रो नराशश्सों देव इन्द्रो वनस्पितेंदीं वर्रुहिर्विरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। स्विभागिः वेवं वर्रुहिः सरंस्वत्यिन्ति सर्विवयन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषकपूर्वं दह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिस्ट्रियम्। सौत्रामुण्याश् स्तृतासुती। अञ्चन्त्ययं यजमानः॥)॥———[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अयः स्तासुती यर्जमानः। पर्चन्यक्तीः। पर्चन्युरोडाशान्। गृह्णन्यहान्। बुध्नत्रिक्षिभ्यां छागुः सरंस्वत्या इन्द्राय। बुध्नन्थ्यरंस्वत्यै मेषिमन्द्रांयाश्विभ्याम्। बुधन्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्याः सरंस्वत्यै।

सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन सरस्वत्या इन्द्राय॥७३॥ सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्ष्भेणाश्विभ्याः सरंस्वत्यै। अक्षु इस्तान्में दुस्तः प्रतिंपचताग्रंभीषुः। अवीं वृधन्त ग्रहैंः। अपांतामिश्वना सरंस्वृतीन्द्रंः सुत्रामां वृत्रुहा। सोमान्थ्सुराम्णंः। उपो उक्थामुदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्ग्षैः। त्वामुद्यर्षं आर्षेयर्षीणां नपादवृणीत। अय स्तासुती यर्जमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इतिं। ता या देवा देवदानान्यदुं। तान्यंस्मा आ च शास्वं। आ च गुरस्व। इषितश्चं होतरसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥७४॥

उशन्तं स्त्वा हवामह् आ नों अग्ने सुकेतुनाँ। त्वश् सोंम महे भगं त्वश् सोंम प्रचिंकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरंः सोम पूर्वे त्वश् सोंम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतों हवामहे। नराशश्से सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शं चतुष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥ अ्ह्होमुचंः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्। वान्यांये दुग्धे जुषमाणाः करम्भम्। उदीराणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जातवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्केः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। सत्यैः कव्यैः पितृभिर्घर्मसद्भिः। हव्यवाहंमुजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं हविषां सप्यन्।

होतां यक्षिद्विडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषिमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्दं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छुचिव्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यं गर्भमिदितिर्दधे॥७७॥

उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंती १ समृण्वतु॥ ७६॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिहं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वा-ऽऽज्यस्य होतुर्यजे। होतां यक्षदींडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तेमम्। इडांभिरीड्यं सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृथ्सं गां वयो दर्धत्॥७८॥ वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्ं। पूष्णवन्त्ममंर्त्यम्। सीदंन्तं ब्रहिषिं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृहतीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षुद्धचंस्वतीः। सुप्रायुणा ऋतावृधंः॥७९॥ द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पुङ्किं छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशिल्पे बृंहती उमे। नक्तोषासा न दंर्श्ते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुमं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥ पृष्ठ्वाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षुत्प्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यशः। होतांरा दैव्यां कवी। सयुजेन्द्रं वयोधसम्। जगेतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजे। होता

यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययीः। भारंतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहिन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि बिभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्वतऋतुम्। हिरंण्यपर्णमुक्थिनम्ं। रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्ं। कुकुमं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽ-ज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वरुणं भेषजं कृविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्ं। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्मं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धहतावृथं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधस् वेत्वाऽऽउपस्य होत्र्यजं स्प्त चं (इडस्प्वेंऽग्निङ्गंयुत्रोध्यविम्ं। शुचंव्रत्र् शुचंमुण्णिहन्दित्युवाहमं। ईडेन्य्ः सोमंमनुष्ठभं त्रिव्धसम्। सुव्रृह्णिदंममृतेन्द्रं वृह्तीं पश्चविम्। व्यवंस्वतीः सुप्रायणा द्वारौं बृह्णाणः पृङ्किमिह तुर्युवाहमं। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्टुभं पष्टवाहमं। प्रचेतसा सुयुजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्गाहमं। पेशंस्वतीस्तुम्नः पतिं विराजिम्ह धेनुत्र। सुरेतंसुन्त्वष्टांयं पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाणुत्र। श्वतकेतुं भग्मिन्द्रं कुकुर्भमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमतिच्छन्दसं वृहहंपुभं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं द्शेहीन्द्रयमृष्ठं नव दश् गां न वयो दर्धदिन्द्रस्यदे सर्वं वेतु॥॥————[१७]

सिमंद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविर्गीर्वयो दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तनूपाच सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयो दधुः। इडांभिर्ग्निरीड्यः। सोमो देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधुः। सुब्र्हिर्ग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबर्हिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पुङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गीर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यही सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयां दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहिन्द्रियम्। अनुङ्गान्गौर्वयां दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारती मुरुतो विशः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधुः। त्वष्टां तुरीपो अद्भुतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधुः। शृमिता नो वनस्पतिः। स्विता प्रसुवन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुः। स्वाहां यज्ञं वर्रुणः। सुक्षुत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहद्षेषुभो गौर्वयो दधुः॥८७॥

दधुः॥८७॥ अमर्त्यस्तुर्युवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहह्रोर्न वयो दधुश्रृत्वारि च॥—————[१८]

वसन्तेन्त्नां देवाः। वसंवस्त्रिवृतां स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्रद्रशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्ं। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमें सप्तद्रशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेण विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। शार्देन्तुना देवाः। एकविश्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेन श्रिया श्रियम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। हेमन्तेन्तुना देवाः। मरुतिस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन शक्वरीः सहंः। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। शैशिरेण्तुना देवाः। त्रयस्त्रिश्थे १ शेऽमृत ई स्तुतम्। स्त्येन रेवतीः क्षत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥ साम साद्रे स्तुतः सहं ह्विरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

देवं ब्रहिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उष्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जः। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जः॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितृमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जः। देवं बर्हिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। ककुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जः। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जः॥९४॥

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसेंन मित्रीऽसि यदैवा होतां यक्षथ्यमिभेन्द्रर् समिंद्ध इन्द्र आचर्षणिप्रा देवं बुर्हिरहोतां यक्षथ्यमिभोऽग्निर समिंद्धो अग्निरिश्वनाऽश्विनां हुविरिन्द्रियं देवं बुर्हिर सर्रस्वत्युग्निमुद्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे समिंद्धो अग्निः समिभां वसन्तेनुर्तुनां देवं बुर्हिरिन्द्रं वयोधसं विरश्नतिः॥२०॥ स्वाद्वीं त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्राज्याय पूतं प्वित्रेणोपासानक्ता बदैरेरथातां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाह्ङ्कां देवी देवं वयोधसं चतुर्नवितः॥९४॥ स्वाद्वीं त्वां वेतु यजं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमों भवति। ब्रह्मवर्च्सं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्धे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्च्सं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्धे। रथन्तर सामे भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्निश्नंतः। एतद्वै ब्रंह्मवर्च्सस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रंह्म-वर्च्समवं रुन्धे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वेनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराशृ सेषुं। एकांदश् दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सवने सन्नेषुं नाराश् स्सेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश् सेषुं। त्रयंस्नि श्राथ्सम्पंद्यन्ते। त्रयंस्नि श्राद्वे देवताः। देवतां एवावं रुन्धे। अश्वंश्चतुस्त्रि शः। प्राजापत्यो वा अश्वः॥३॥ प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्धे। कृष्णाजिनेंऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन्ष् समर्धयति। आज्येनाभिषिश्चिति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥ होतां भवति यजेतु वा अर्थां द्याति॥ (१)

यदाँग्रेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यंस्य। पृष्टिमेवावं रुन्थे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणि विक्रोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यहैंश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मारुतः। मारुतो हि वेश्यः। सप्तैतानिं ह्वी १ पि भवन्ति। सप्तगणा वे मुरुतः। पृश्चिः पृश्चौही मारुत्या लभ्यते। विश्वे मुरुतः। विश्वे एवैतन्मध्यतोंऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतों-ऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मेऽध्यभिषिश्चित। स हि प्रजनियता। द्प्राऽभिषिश्चित। ऊर्ग्व अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जैवैनंमन्नाद्येन समर्धयति॥६॥

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथु यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथु यद्वांर्हस्पत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पतीयम्। अथु यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथ् यथ्मारस्वतः। एतिष्क प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वारुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वारुणः। अथ् यद्यावापृथिव्यः। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावापृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भागधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा पृषोऽनुमानायं। अनुमतवज्ञः सूयाता इति। अष्टावेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षेरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्सम्वं रुन्थे। हिरंण्येन घृतमृत्पुंनाति। तेजस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतदंख्सामयो रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मन्नेवनमृख्सामयोरध्यभिषिश्चिति। घृतेनाभिषिश्चिति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

न वै सोमंन् सोमंस्य स्वौऽस्ति। ह्तो ह्येषः। अभिषुंतो ह्येषः। न हि ह्तः सूयतें। सौमी एत्वंशामा लंभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। सौम्यर्चा-ऽभिषिश्चिति। रेतोधा ह्येषा। रेतः सोमः। रेतं एवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राज्यसूयंमृते सोमम्। तथ्सर्वं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा एसिक्षिति एस्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनुं मदेम सोम॥१०॥

क्षा सोमः सम् वेषः——[४]

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्ट्यां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्रस्यर्चाऽभिषिश्चिति। मनुष्यां वै नराश्रसः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यत्किं चं राजुसूर्यमनुत्तरवेदीकम्। तथ्सर्वं भवति। ये में पश्चाशतंं दुद्ः। अश्वांना स्ययस्तुंतिः। द्युमदंग्ने मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

पुष गोस्वः। षृद्धिर्श उक्थ्यो बृहथ्सामा। पर्वमाने कण्वरथन्त्रं भविति। यो वै वाजपर्यः। स सम्राट्थ्सवः। यो राजसूर्यः। स वरुणस्वः। प्रजापितिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवित॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। तिद्धे स्वाराँज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्धे स्वाराँज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। तिद्धे स्वाराँज्यम्। अनुद्धते वेद्ये दक्षिणत आहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रंथन्त्रम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोरेवैन्मनंन्तर्हितम्भिषिंश्चिति। पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्गिर्शः सर्वः। रेवज्ञातः सहंसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वारांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वारांज्यमेवैनं गमयति॥१५॥

भुवृति रथन्तरमाहैकं च॥**—**

सि॰हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिंरग्नौ ब्रांह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा नु आगुन्वर्चसा संविदाना। या राजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अर्श्वस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनिं द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विषिरश्वेषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगन्वर्चसा संविदाना। रथें अक्षेषुं वृषभस्य वाजें। वातें पर्जन्ये वर्रुणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां जुजानं। सा न आगन्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्त ॥ श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत आयुंष्मन्त ॥ श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। तेर्जसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्। ओर्जस्वच्छिरो अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्कः।

ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पर्यस्वदस्तु मे मुखम्ँ। पर्यस्विच्छरों अस्तु मे। पर्यस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पर्यसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥ आयुंरसि। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मिच्छरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्न आयुंषे वर्चसे

कृधि। प्रिय रेतो वरुण सोम राजन्। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासा रूचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। सुमुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिव विश्वतंः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिंषा

विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्च्सायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्ठौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥ गोष्यांजस्वतः श्रण्म्योजीऽम् तन् प्रवेष्क्षाम् पर्यम् सम्प्रिष्ण् माऽसंहिभ्र्यक्षिये रस्ते हे चं॥———[७]

अभिप्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्ं। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित स्वरोचाः। महत्तदस्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मदत्वनु बृह्स्पतिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभि्रनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता्रः सोमों अग्निः। आऽयं पृणक्तु रजसी उपस्थम्॥२४॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजा-पंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमिवित्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतिन्त। अन्नमेवैनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतिन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्थे। सर्वान्युरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति। यद्धिरंण्यं ददांति। तेज्स्तेनावं रुन्थे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यं तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥

पृष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोदनं

प्राश्ञाति। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एत र सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्शनीयो भवति। य एवं वेद। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्यों ऽवभृथा (३) ना (३) इतिं। यद्देभंपुञ्चीलैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। एभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथों अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्देभंपुञ्चीलैः प्वयंति। अपामेवैनं तेजंसा वर्चसाऽभिषिञ्चति॥२९॥

भवन्त्रशृंभवरुष्यं वर्दनि दर्भ यद्देभंपुञ्जिलैः प्वयत्येकं चा

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स पुतं पंश्वशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स पंश्वशार्दीयेन यजेत। बहोरेव भूयाँन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

बहुर्भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पृञ्चशार्दीयों भवति। पञ्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पञ्चौक्षरा पृङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्धे। सप्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्यौ॥३१॥

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनुं वर्ज्रमुद्यत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाह्वयत। यत्कयाशुभीयं भवंति शान्त्यै। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लंभ्यन्ते। एवं द्वितीयै। एवं तृतीयै॥३२॥

एवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्येतदहेः। वर्षिष्ठः समानानाँ भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारौज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्रमः स्वारांज्यमगच्छत्। स्वारांज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन् वै मुरुतों देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्ति। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तद्शः प्रजापितिः। प्रजापितेरेव नैतिं॥३४॥

अस्या जरांसो दमा म्रित्राः। अर्चर्धूमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वृनुर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्धे। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हरिंरुन्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां ददृशे सुवर्चाः। पूर्वापुरं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदर्धज्ञायते पुनः। त्रीणिं शता त्रीषहस्राण्यग्निम्। त्रि॰शर्चं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः सिमंध्यते। क्विर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां ज्उरम्। पूतदंक्षः क्विकंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिणिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वां। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजामः। ईडें अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रसप्तो वि चं यत्कृतं नंः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥ श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वह्निभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषि। मित्रो वरुणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वंषामिदितिर्यिज्ञयांनाम्।

विश्वेषामितिथिर्मानुषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भेवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमितिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवो दिधरे यज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्र आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा १ शुचंयश्चकिरे कवे। त्वा १ रातिषाचो अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य साधंनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वदेव धीमिह् प्रचेतसम्। जीरं दूतममर्त्यम्॥४०॥
प्रवाहसम्सप्रवृत्वयम्बा भिक्षमण् प्रवेतसमेकं च॥
[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छै। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिगा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सचाँ। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तमः। विद इन्द्रंः शतक्रंतुः। उपं नो हरिंभिः सुतम्। स सूर

आज्नयं ज्योतिरिन्द्रम्। अया धिया तरिण्रिद्धिबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्त्रिधो अस्रो अद्विविभेद। उतत्यदाश्विश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषीष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र र सुहवर हवामहे। अर्होमुचर सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं

वर्रण स्मातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तयें। मृहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्सर्खिभ्यश्चरथ समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्द्दीद्यांनः साकम्। सूर्यमुषसं गातुमग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि विद्वान्। सुर्वर्वज्ञ्योतिरभय स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्र स्थविरस्य बाहू। उपस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वाभिरूतिभिः सुजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हर्यश्व याहि। वरीवृज्थस्थविरेभिः

सुशिप्र। अस्मे दधद्वृषंण १ शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्। दुदुहे विज्रणे

मधुं। यथ्सींमुपह्वरे विदत्। तास्तें विज्ञन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियुतो विश्ववाराः। अहरहर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमां ते धियं प्रभेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमृंथ्सवे चं प्रसवे चं सास्हिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदं ननृं॥४५॥ वृक्षणमयथ्यक्ति जीजपुर्वः सुप्त चं॥————[१३]

प्रजापंतिः प्रशूनंसृजत। तेंंऽस्माथ्सृष्टाः परांं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नोंत्। तानुक्थेंन् नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्योंड्शिना नाऽऽप्नोंत्। तान्नात्रिया नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्यन्थिना नाऽऽप्नोंत्। सौंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईपसेतिं। तानग्निस्निवृता स्तोमेन नाऽऽप्नोंत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्रशेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वान्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्स्तेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मात्पृशवः प्रप्रेव भ्रश्रेरन्। स एतेनं

यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्यामृत्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमाँऽऽप्नुवन्। यं कामं कामयंते। तमेतेनाँऽऽप्नोति॥४८॥
स्तोर्मन नाऽऽप्नोदवारया नवं वा [१४]

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकेर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सवितः सर्वताता। दिवेदिव आ सुवा भूरि पश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामिधंपितिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्शत्। येभिर्द्याम्भ्यिपर्शत्युजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपार समब्यंयत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समिङ्गि। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृदृशे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कुलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समिङ्गि॥५०॥

आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलं चित्रभांनु। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मित्राजांनुमधि विश्वंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधि॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधिं भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासाँ त्वा सर्वासाः रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंम र रथीनाम्। वाजाना सत्पतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांदिभिषिश्चन्तु गायत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोंऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चादिभिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। विश्वें त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चं त्वाऽनुष्टुभेन् छन्दंसा। बृहस्पतिंस्त्वोपरिष्टादभिषिंश्चतु पाङ्केन छन्दंसा॥५३॥

अरुणं त्वा वृकंमुग्रङ्क्षं जङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रे अर्चिषः। सूर्यंवन्तं मुघवानं विषासिहम्। इन्द्रं मुक्थेषुं नामहूर्तम १ हुवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसं नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने अवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हुवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥

बुभुवार्ययुक्तेम्ममंग्र इह वर्षम् समीक्षे वैयाप्रेऽपि राष्ट्रवर्षः पाईन क्रन्दंगीपवंहरामि॥

[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं स्अरंन्तौ। दूरेहेंतिरिन्द्रियावाँन्पत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रंयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वजंहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वश्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता स् सोमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सिवता सवेन ॥ ५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंम १ रथीनाम्। वाजांना १ सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृप्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तित्पता द्योः॥५७॥

तद्भावांणः सोम्सुतों मयोभुवंः। तदिश्वना शृणुत र सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उद्त्रिमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सिर्हर हिन्वन्ति मह्ते सौभंगाय। समुद्रं न स्हुवंन्तस्थिवारसम्। मुर्मृज्यन्ते द्वीपिनंमुफ्स्वंन्तः। उदसावेतु सूर्यः। उदिदं मामुकं वर्यः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्नुना मम्। अहं वाचो विवार्यनम्। मिय वागस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषार राजां भूयासम्॥५८॥

[१६]

द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वर्पनस्य नान्यः। आ रोह् प्रोष्टं विषहस्व शत्रून्। अवास्त्राग्दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा॥५९॥ देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायंः। अथामुच्यस्व वरुणस्य पाशांत्। येनावंपथ्सविता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदमस्योर्जेमम्। र्य्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशाननं गाद्वर्चं पृतत्। तथां धाता करोतु ते।

ये केशिनंः प्रथमाः सत्रमासंत। येभिराभृंतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि

बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेंणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः।

तुभ्यमिन्द्रो बृह्स्पतिः। स्विता वर्च आदेधात्॥६०॥
तेभ्यो निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सह सृंजाथ। बलं ते बाहुवोः संविता देधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा

स॰सृंजाथ। यथ्सीमन्तुं कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वाँ क्षुरः परिवृवर्ज् वपर्इस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौङ्स्येंनेम॰ स॰ सृंजाथो वीर्येण॥६१॥

अवांस्रान्येक्षा वृशिनी ह्यंप्राऽदंशहुवर्ज वप से हे हे चे। [१७] इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विंघनमंपश्यत्।

तमाऽहरित्। तेनायजता तेनैवासान्तर सई स्तम्भं व्यहन्। यद्यहन्। तिर्ह्विघनस्ये विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृव्यर हते। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायेयुः। यो वाँ ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांद्शे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्विष्शे। औद्भिंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्यौद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बुलि हर्रन्ति॥६३॥

हर्रन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षत्राण्यादंत्त। न वा इमानि क्षत्राण्यंभूवन्निति। तन्नक्षत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेर्जं इन्द्रियं दंत्ते। य एतेन् यर्जते। सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्यातांम्। एवमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यः। एवं छन्दा स्ति। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीरभ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां प्रशुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं वै क्षुत्रं विशा। विशेवैनं क्षुत्रेण् व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै ग्रामणीः संजातेः। स्जातरेवैनं व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनो नुदते॥६६॥ व्यतिषक्ताभेरेवास्यं पाप्मनो नुदते॥६६॥ व्यतिषक्ताभेरेवास्यं पाप्मने विश्वतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मभिः।

त्रिवृद्यदाँभ्रेयौँऽग्निमुंखा ह्युब्धिर्यदाँभ्रेय आँग्नेयो न वै सोमेंन् यो वे सोमेंनेष गॉस्वः सि्र्हेऽभि प्रेहिं मित्र्वर्थनः प्रजापंतिस्ता आँदुनं प्रजापंतिरकामयत बहोभूयांनगस्त्योस्या जरांसुस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्न्व्याघ्रांऽयमुभिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥ त्रिवृद्यो वै सोमेनायुंरिस बहुर्भवित् तिष्ठा हरी्रथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् पट्थ्यप्टिः॥६६॥ त्रिवृत्याप्मनों नुदते॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियृवधः सुमेधाः। श्वेतः सिंषिक्ति नियुतांमिभिश्रीः। ते वायवे समंनसो वित्रस्थः। विश्वेन्नरेः स्वपृत्यानि चक्रः। रायेऽनु यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृहती मंनीषा॥१॥

बृहद्रीयं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कृविः कृविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शृतिनीभिरध्वरम्। सहस्रिणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन् हृविषि मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजसातौ। प्रजापंतिं प्रथम्जामृतस्यं। यजांम देवमधिं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वन्निधिपाः पुंराणः। देवानां पिता जनिता प्रजानांम्। पतिर्विश्वंस्य जगंतः पर्स्पाः। हविर्नो देव विहवे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं नों देव। प्रतिंहर्य ह्व्यम्। प्रजापतिं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यज्ञध्वम्। स नों ददातु द्रविंण र सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशें शतदाय उक्थ्यंः। यः पंशूना र रक्षिता विष्ठिंतानाम्। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं॥४॥

सहस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजसो विमानम्। सप्तचंक्र रथमविश्वमिन्वम्। विषूवृतं मनसा युज्यमानम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिष्टमम्। दिव्यन्यः सदेनं चक्र उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तिरक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिंन्वतु विश्वमिन्वः। र्यि॰ सोमों रियपितिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरनुर्वा। बृहद्वंदेम विदथें सुवीरौः। विश्वौन्यन्यो भुवंना जजानं। ते शुक्रासः शुचंयो रिम्वन्तः। सीदंत्रादित्या अधि ब्रहिषि प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंमस्मे। आ नः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पिथिभिदिवयानैः॥७॥

अस्मे कामं दाशुषं सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधतामतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतमाना अमृधाः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काममवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्ं। स्तीणं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता यज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधेन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्थसत। आदित्याः कामं हृविषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवं भरध्वम्। हृव्यं मृतिं चाग्नये सुपूतम्॥९॥ यो दैव्यांनि मानुषा जनूर्षे। अन्तर्विश्वांनि विद्वाना जिगांति। अच्छा गिरों

यो देव्यानि मानुषा जनूर्षे। अन्तिविश्वानि विद्यना जिगाति। अच्छा गिरो
मृतयो देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर्रं सुप्रतीक्र्डं स्वश्रम्ं।
ह्व्यवाहंमर्गतें मानुषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्यंयोध्यमीवाः। अनंग्नित्रा अभ्यंमन्त
कृष्टीः। पुनर्स्मभ्यरं सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिर्जरंभिर्यजत्र॥१०॥
अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्वं पृथ्वी

बंहुला नं उर्वी। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वृच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तंः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। हविर्भरंन्त्यग्नये घृताचीं।

वसूयवों वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शरू गोनाम। असमभ्यं

इन्द्रं नरों युजे रथम्ं। जुगृभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

चित्रं वृषंण १ रियन्दाः। तवेदं विश्वमिभितः पश्चयम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यंस्य। गवांमिस गोपंतिरेकं इन्द्र। भृक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वः। सिमेन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः। स१ सूरिभिर्मघवन्थ्स १ स्वस्त्या। सं ब्रह्मणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥ सं देवाना १ समृत्या यिज्ञयांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बः पुरुहूत तेनं। अस्मे धेहि यवमद्रोमंदिन्द्र। कृधीधियं जरित्रे वाजरत्नाम्।

आ वेधस्र स हि शुचिः। बृहुस्पितः प्रथमं जार्यमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। सप्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि स्प्तरंश्मिरधम्त्तमार्रसि॥१३॥ बृहुस्पितः समंजयद्वसूनि। महो ब्रजान्गोमतो देव एषः। अपः सुवृक्तिभिः। सरस्वतीमा विवासम धीतिभिः॥१४॥ सोमों धेनु र सोमो अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं केर्मण्यं ददातु। सादन्यं विदथ्य र सभेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मै। अषांढं युथ्सु त्व र सोम ऋतुंभिः। या ते धार्मानि हविषा यर्जन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तरिक्षम्। त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥ या ते धार्मानि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तेभिर्नो विश्वैः

सुमना अहेडन्। राजैन्थ्सोम प्रति हव्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदंस्य प्रियम्। प्र

तद्विष्णुंः। परो मात्रया तनुवां वृधान। न तें महित्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे तें विद्य

रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। परमस्यं विथ्से॥१६॥

सिषांस्-थ्सुव्रप्रंतीत्तः। बृहस्पित्र्हन्त्यमित्रंमुर्केः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे।

आ नों दिवः पावींरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नों नेषि। इय॰

शुष्मेंभिर्बिस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणां तंविषेभिंरूर्मिभैंः। पारावदघ्रीमवंसे

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। आभिः स्पृधीं मिथतीरिर्षण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृण्वे अध जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृणुते युधा गाः। यदा सत्यं कृणुते मृन्युमिन्द्रः॥१७॥

विश्वं दृढं भयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यानाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मेनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवसे नूतंनाय। उग्र सहोदािम्ह त हंवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मृन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवर्धित्रिन्द्रं मुरुतिश्चिदत्रे। माता यद्वीरं द्रधनृद्धिनिष्ठा। क्वंस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक समर्धत्ताहिहत्यै। अह इ ह्युंग्रस्तिविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनमं वध्स्रैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। मुरुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन् भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनंवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृत्रतूर्ये॥२०॥

अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रेः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उ वीर्यावान्। स एकराजो जगतः परस्पाः। यदा वृत्रमतंर्च्छूर इन्द्रेः। अथाभवद्दमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता र ह्विर्नः। वृत्रं तीत्वा दान्वं वर्ज्रबाहुः॥२१॥

दिशोंऽह १ हर् हर् हेता ह १ हेणेन। इमं यज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाश्ं प्रतिं गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमतं रच्छूर् इन्द्रः। अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रों देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रों देवानां मभवत्पुरोगाः। इन्द्रों यज्ञे ह्विषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय शर्म य १ सत्। यः सप्त सिन्धू १ रद्धात्पृथिव्याम्। यः

सप्त लोकानकृणोद्दिशंश्व। इन्द्रों ह्विष्मान्थ्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञमिहोपं

यासत्॥ २२॥ वुवर्थ विथ्स इन्द्रंस्तुरायांस्तु वृत्रतूर्ये वर्ज्नबाहः पृथिव्यात्रीणि च॥-

इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषि्रः सुंव्र्षाः। तस्यं वय सुंमृतौ युज्ञियंस्य। अपि भुद्रे सौमनुसे स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्मं त्रिवरूथं वि य ५ सत्। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रई स्तुहि वुज्रिणुङ् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हिवर्नः॥२३॥

हत्वाऽभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरं वजिणमप्रतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुह्तमिन्द्रम्। य एक इच्छ्तपंतिर्जनेषु। तस्मा इन्द्रांय हविरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमधिपाः पुरोहितः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिविषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण १ रियन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाद ५ हदिभमातिहेन्द्रः। स नों हिवः प्रति गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नो अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहन्नहिम्। इन्द्रो यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्जबाहुः। सेदु राजाँ क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥ अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृषभेणा पुरोंभेत्। सं वर्जेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिरुच्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नों युज्ञमागंतं विश्वधेना। प्रजावंदुस्मे द्रविंणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥ ता नो अमीवा अप बाधंमानौ। इमं युज्ञं जुषमांणावुपेतम्। विष्णूंवरुणा युवमध्वरायं नः। विशे जनाय महि शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्जयू हविषां वृधाना। ज्योतिषाऽरातीर्दहतुन्तमा रसि। ययोरोजंसा स्कमिता रजारंसि। वीर्येभिर्वीरतंमा शविष्ठा। याऽपत्यें ते अप्रतीत्ता सहोभिः। विष्णूं अगुन्वरुंणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामींवार सेधतर रक्षसंश्च। अथांधत्तं यजंमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्मा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतंमा शिचेष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतये हिवः। मही न द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवतार शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्धोक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृणुध्वर् सदेने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिह वां वरूथम्। स इथ्स्वपा भुवनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी जजानं। उर्वी गंभीरे रजंसी सुमेकें। अवर्शे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिं द्वे अचेरन्ती चर्रन्तम्। पृद्धन्तं गर्भम्पदीदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थै। तं पिपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यावापृथिवी सृत्यमस्तु। पितृर्मातृर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानामवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम्। उर्वी पृथ्वी बहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमसा यज्ञे अस्मिन्। दधाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती। द्यावा

रक्षेतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंधयोऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमराज्ञीरश्वावती १ सोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥ ह्विनौ वाद्वभूव गुविं पूर्वहृताव्वकैरेरविस्मयः वा [४]

शुचिं नु स्तोम् श्वथंद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृंत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनंयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विद्ये सुवीराः। स ई स्त्येभिः सर्खिभिः शुचद्भिः। गोधायसं विधनसैरंतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रिविणं व्यानट्। ब्रह्मणस्पतेरभवद्यथावशम्। सत्यो मृन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञथ्स दिवे वि चांभजत्। मृहीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धांनो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रह्मा शूश्वद्रातहंव्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्प्र सृर्ंसते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमंस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्याम रथ्यो विवस्वतः। वीरेषुं वीरा॰ उपपृङ्धि नस्त्वम्। यदीशानी ब्रह्मणा वेषि मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवासति। श्रृद्धामंना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूष्त्रावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पृथामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उभे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरति प्रजानन्। पूषा सुबन्धुंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पतिंर्म्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदुः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस् स्वश्चम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः।

धियं जिन्वो विश्वे भुवने अर्पितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्वरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिरं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सृत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रमृकं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहारंसि सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मृखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥ वक्षः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्मं शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषे

यच्छुताधि। अस्मभ्यं तानिं मरुतो वियंन्त। र्यिं नों धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतों रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नंमन्ति। इमे शश्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहंव। प्रप्नं जायन्ते अकंवा महोंभिः। पृश्वेः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिंमिक्षुः। अनुं ते दायि मह इंन्द्रियायं। सूत्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यें। अनुं क्षुत्रमनु सहों यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यें। य इन्द्र शुष्मों मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व १ हि दृढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न रार्थः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विष्रूष्णं यदस्तिं। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध् उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवातः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र १ सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम

विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीषु। प्र धृंष्णुया नयिति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्त्रादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमेंत्वर्वाङ्। इन्द्रं सुम्न सुवंविद्धेह्यस्मे॥३९॥

ब्राहेंबि्थहांऽजिन्ह पूर्णेद्वरीवृजल्खादयां वः पान्त्यस्याभिर्मवं च॥————[५] आ देवो यातु सिवता सुरत्नेः। अन्तरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या

पुरूणिं। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ञतो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सविता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्रस् तिविषीं दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ साविषद्वसुंपतिर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मृत्भोजंनमधंरासतेन। विजनाँञ्छावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथ् हिरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्विद्दशंः सिवृतुर्देव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थुः। वि सुंपूर्णो अन्तिरक्षाण्यख्यत्। गृभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः किश्चिकत। कृतमान्द्या रशिमर्स्या तंतान॥४१॥ भगं धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराश रसो ग्रास्पितिनी अव्यात्। आ ये वामस्यं

सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वरुणः स्जोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। करैन्थ्सुषाहां विथुरं न शवः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। श॰ सरेस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वे। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य देवाः। ते सौभगं वीरवृद्गोमृदप्नः। दर्धातन् द्रविणं चित्रम्स्मे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवा अच्छा ब्रह्मकृतां गणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतो अश्विनापः। यक्षि देवान्नंब्रधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्यौः पिंतुः पृथिवि मातुरध्रुंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते सुजोषाः। अस्मभ्यु शर्म बहुलं वि यन्ता विश्वे देवाः शृणुतेम १ हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्या उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हव्यजुंष्टिम्। नर्मसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥ अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुपारा। युवं वस्नांणि पीवसा वंसाथे। युवोरच्छिंद्रा मन्तंवो हु सर्गाः। अवांतिरत्मनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ई्रमा त्स्थुषी्रहंभिर्दुदुहे। विश्वाः पिन्वथ स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठ न्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततों नो

मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवारसं स्याम। आ नो मित्रावरुणा

ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गव्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥ आ नो जनै श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रषंवे देवायं स्वधाम्ने अषांढाय सहंमानाय मीढुषे। तिग्मायुंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। श्रत हिमां अशीय

अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोक। आ ते पितर्मरुता समुम्रमेतु। मा नः सूर्यस्य

भेषजेभिः। व्यस्मद्वेषो वितरं व्यन्हां। व्यमीवाङ्श्वातयस्वा विषूचीः॥४७॥

स्न्हशों युयोथाः। अभि नों वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमिह रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हृंणीषे न हर्श्से। हावनश्रूनों रुद्रेह बोंधि। बृहद्वंदेम विद्यें सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्ट्रमार्हंन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥ वर्षा ववतं प्रत्न विर्वं श्रुत ववतं प्रत्न ववतं ववतं प्रत्न ववतं विष्ठ विष्य विष्ठ विष्य विष्ठ विष्य विष्ठ विष

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्यंति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तों युगानिं। वितन्वते प्रति भुद्रायं भुद्रम्। भुद्रा अश्वां हृरितः सूर्यंस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नुमस्यन्तों दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवत्वं तन्मंहित्वम्। मध्या कर्तोवितंत् स् सञ्जेभार॥४९॥ यदेवर्यं क दरितः सध्स्थांत। अद्योशी वासंस्त्रत्वे सिमसौं। तस्त्रिक्य

यदेदयुंक्त ह्रितः स्थस्थात्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मैं। तिन्मित्रस्य वर्रुणस्याभिचक्षे। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थे। अनुन्तमृन्यद्रुशंदस्य पाजः। कृष्णमृन्यद्धरितः सं भेरन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः

पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नों मित्रो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुंः पृथिवी उत द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिभ्राजिमानः। नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसा। शं नो भव चक्षसा शं नो अह्नाँ। शं भानुना शर् हिमा शं घृणेने। यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुर्मित्रस्य वर्रणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तिरक्षिम्। सूर्य आत्मा जगंतस्तस्थुषश्च। त्वष्टा दधत्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दशेमन्त्वष्टंर्जनयन्त गर्भम्। अतेन्द्रासो युवतयो बिभेर्त्रम्। तिग्मानीक्ड् स्वयंशस्ं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यो वर्धते चारुंरासु। जिह्मानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थे॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि्र्हं प्रतिजोषयेते। मित्रो जनान्प्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजनिष्ट वेधाः। तस्यं वय र सुंमृतौ युज्ञियंस्य। अपि भुद्रे सौंमनुसे स्यांम। अनुमीवास इडंया मदंन्तः। मितज्मंवो वरिमन्ना पृंथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुंपक्ष्यन्तः॥५३॥

व्यं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई॰ शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदथें अपस्वजीजनन्। अरंजयता॰ रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रतिं प्रियं यंजतं जनुषामवंः। महा॰ आंदित्यो नर्मसोपसद्यः। यात्यज्ञंनो गृणते सुशेवंः। तस्मां एतत्पन्यंतमाय जुष्टम्ं। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ वा॰ रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंर्तनिः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्साऽऽयातु युक्तः। विशो येन गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयातम्वांक्। दस्रां निधिं मधुंमन्तं पिबाथः। वि वा रथो वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तौन्दिवो बांधते वर्तनिभ्यौम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता

परितिक्ययायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचीभिः। परिघ्र सवां मनावां वयोगाम्। यो ह्स्यवा र्रे रिथरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियाति वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुर्णसो अस्रिधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दुःसनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वचः सप्यंति। तस्मै धत्तः सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां हिविषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतः रक्षतं पातमःहंसः॥५७॥

विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्धीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमव्सं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यः। अग्नीषोमाविम १ सु मेऽग्नीषोमा ह्विषः प्रस्थितस्य॥५८॥ जुभार बोर्भेक्ष्पस्य उप्रथ्यते वह्याने व्यां वादमानः समुद्रेऽ४हंमः प्रस्थितस्य॥——[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यों अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नमदन्तंमिद्मे। पूर्वमग्नेरपिं दहृत्यन्नम्ं। यत्तौ हांसाते अहमुत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृशवः सुजम्भम्ं। पश्यंन्ति धीराः प्रचरन्ति पाकाः। जहाम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वशमिचंरामि॥५९॥

स्मानमर्थं पर्येमि भुअत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। पर्गके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वेदिवेः पितृभिर्गुप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्परोप्यते। शृत्तमी सा तन्में बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसः। नैतद्भूयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नमपानमांहुः। अन्नं मृत्युं तम् जीवातुंमाहुः। अन्नं ब्रह्माणी जरसं वदन्ति। अन्नमाहुः प्रजनंनं प्रजानाम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इथ्स तस्यं। नार्यमणं पुष्यंति नो सखायम्। केवलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षन्नस्मि। मामदन्त्यहमंद्रयन्यान्॥६१॥

अह॰ सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वाचंमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादिधे निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा॰ षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं गन्ध्वाः पृशवों मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागृक्षरं प्रथमजा ऋतस्यं। वेदांनां माता-ऽमृतंस्य नाभिः। सा नों जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। अवंन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषयो मञ्जकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच १ ह्विषां यजामहे। सा नों दधातु सुकृतस्यं लोके। चत्वारि वाक्परिंमिता पदानि॥६३॥

यजामहा सा ना द्यातु सुकृतस्य लाका चृत्वार् वाक्पारामता प्दाानाद्या तानि विदुर्बाह्मणा ये मेनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मेनुष्यां वदन्ति। श्रद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रद्धयां विन्दते हुविः। श्रद्धां भगस्य मूर्धनि। वचसा वेदयामसि। प्रियः श्रद्धे ददंतः। प्रियः श्रद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥ इदं में उदितं कृधि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चित्रिरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृधि। श्रद्धां देवा यजंमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धाः हंदय्यंयाऽऽकूंत्या। श्रद्धयां ह्यते हिवः। श्रद्धां प्रातर्हंवामहे॥६५॥

श्रुद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रुद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रुद्धाः देवानिधं वस्ते। श्रुद्धाः विश्वमिदं जगंत्। श्रुद्धां कामस्य मातरम्। हृविषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रंथमं पुरस्तात। वि सीमृतः सुरुचो वेन आवः। स बुिश्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्ति वृथ्सम्। ब्रह्म सन्तुं ब्रह्मंणा वृधयंन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मंणः क्षुत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनाः। अन्तरंस्मित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्। तेन कोंऽर्हति स्पर्धितुम्।

ब्रह्मन्देवास्त्रयंस्त्रि श्वत्। ब्रह्मनिन्द्रप्रजापती। ब्रह्मन् हु विश्वां भूतानि। नावीवान्तः समाहिता। चतस्त्र आशाः प्रचेरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नेयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंत्रुजर् सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्भंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भुद्रमंक्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहांनाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोंभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥ गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास इन्द्रेः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्रीलं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भुद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सुभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस १ रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईंशत माऽघश ५ सः। परिं वो हेती रुद्रस्यं वृश्यात्। उपेदमुंपपर्चनम्।

आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्ष्मस्य रेतंसि। उपंन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

च्याम् कर्नांग्रेऽन्यानर्पता प्रवान् यज्वंस् हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीर्मर्ग् पिवंन्तीः पर्द॥—————[८]

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामौत्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न ममे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परिं यात् अर्म्यां। दिवो न र्श्मी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुंवन्ती भुवंना क्विक्रंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो हतामंती। पतीं द्युमद्विश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरैण्या। ता नोऽवतं मित्मन्ता मिहंव्रता। विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिंरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मन्स्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवों नृद्यः सप्त बिंश्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्श्ततं वपुः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमिन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो

भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासार् राजां। यासां देवाः शिवेनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भुद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा पुरो यत्। किमावंरीवः कुह् कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किर्मासीद्गह्नं गभीरम्। न मृत्युर्मृतुं तर्हि न। रात्रिया अह्रं

आसीत्प्रकेतः। आनींदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँ खान्यं न प्रः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रे प्रकेतम्। सिल्लि सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्रत्नमंहिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि॥७४॥ मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयो मनीषा। तिरश्चीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्वदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तांत्। को अद्धा

वेंद क इह प्र वोचत्। कुत आजाता कुर्त इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य

विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदिं वा द्धे यदिं वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेद यदिं वा न वेदं। किङ्स्विद्वनुङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनंसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्ठतृक्षुः। मनींषिणो मनंसा विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातरृष्णिं प्रातरिन्द्र हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरृश्विनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र हवेम। प्रातर्जितं भगंमुग्र हुवेम। व्यं पुत्रमदितेयों विधर्ता। आधिश्चद्यं मन्यंमानस्तुरिश्वंत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भग्मां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्रणो जनय् गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिनृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्नौम्। उतोदिता मघवुन्थ्सूर्यस्य। व्यं देवानार् सुमृतौ स्योम। भर्ग एव भर्गवा । अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग् सर्व इञ्जोहवीमि। स नो भग पुर एता भंवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। द्धिकावेव शुचंये प्दायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगं नः। रथमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमंतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतं दहाना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदो नः॥७९॥

पीवौन्नामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः श्चिं नु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽन्नं प्राणमन्नन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवौन्नां यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमांसां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं रूश्मयो यस्यं केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभिर्भिसंवसानः। अग्निर्नों देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृहती चित्रभानुः॥१॥

सा नों यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेम श्ररदः सवींराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणिं प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति हिवषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥ यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय राजन् प्रियतंमं प्रियाणांम्। तस्मै ते सोम

प्रमुश्चमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश र सन्नुदतामरांतिम्। पुनर्नो देव्यदिंतिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो हिवर्षा यजामः। एवा न देव्यदितिरनुर्वा। विश्वस्य भूत्री जर्गतः प्रतिष्ठा। पुनेर्वसू

देवानां पतिंरघ्रियानांम्। नक्षंत्रमस्य हविषां विधेम। मा नः प्रजा॰ रीरिषन्मोत

वीरान्। हेती रुद्रस्य परिं णो वृणक्तु। आर्द्रा नक्षंत्रं जुषता १ हिवर्नः॥३॥

हिवषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानः। तिष्यं नक्षेत्रमभि सम्बंभूव। श्रेष्ठो देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यंः पुरस्तांदुत मध्यतो नंः। बृहस्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्यः स्याम। इदः सर्पेभ्यों हविरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥ ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नेः सूर्पासो हवुमार्गमिष्ठाः। ये रोंचुने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्श्चरंन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मधुंमञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमिष्ठाः। स्वधाभिर्यज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अग्निद्रग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। याः श्चं विद्य याः उं च न प्रविद्या म्घासुं यज्ञः सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदंर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप् संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सिक्षता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रमुजर्रं सुवीर्यम्। गोमदर्श्ववदुप् सन्नुंदेह। भगो ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगो देवीः फल्गुंनीरा विवेश। भगस्येत्तं प्रस्ववं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययेन सुवृता रथेन। वहुन् हस्तर् सुभगं

विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रतिगृभ्णीम एनत्। दातारंम्द्य संविता विदेय। यो नो हस्ताय प्रसुवाति यज्ञम्। त्वष्टा नक्षेत्रमुभ्येति चित्राम्। सुभ संसं युव्ति रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पिर्शन् भुवनानि विश्वां। तत्रस्त्वष्टा तदुं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स्मनोत्। गोभिर्नो अश्वेः समनक्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रम्भ्यंति निष्ट्यांम्। तिग्मर्थंङ्गो वृष्भो रोरुंवाणः। सुमीरयन् भुवना मात्रिश्वां। अप द्वेषा सि नुदतामरातीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तद् निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरमस्मच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा

पुरस्तौत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यौं देवा अधि संवसन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययन्ती दुरितानि विश्वा। उरुं दुहां यजमानाय युज्ञम्॥१२॥

िच्नमीनुर्यजीमाने दश्रत् हुविनः प्रथ्येती ज्यन्त्येश्वती मदेम् रोचमानामर्गतीगोंणे युज्ञम्॥

[१]

ऋद्यास्मं ह्व्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयंन्तः। शृतं जीवेम शृरदः सवीराः। चित्रं नक्षंत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तन्मित्र एति पृथिभिदेवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तरिक्षे। इन्द्रौं ज्येष्ठामन् नक्षंत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्यं ततारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहानाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुर्न्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्रांय ज्येष्ठा मधुंमृद्दहांना। उरुं कृणोतु यजमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षेत्रं पृशुभिः समक्तम्। अहंभूयाद्यजमानाय मह्यम्॥१४॥

अहंनों अद्य सुंविते दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदािम। शिवं प्रजायें शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांसचीर्याः॥१५॥

यासामाषाढा मध्र भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भेवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृश्भ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कृन्यां युवृतयः सुपेशंसः। कृम्कृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् हृविषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु यज्ञम्॥१६॥ यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजय्यस्वंमेतत्। अमुं चं लोकिमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दथात्वहंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ।

तन्नो नक्षंत्रमिनि द्विचेष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

अनुंजानन्तु कामम्ं। शृण्वन्तिं श्रोणाम्मृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंशृणोमि वाचम्॥१७॥

म्हीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना हिवषां यजामः। त्रेधा

विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। मृहीं दिवं पृथिवीम्न्तिरक्षिम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्य श्रक्षेकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजसः प्रस्तात्। संव्थ्सरीणम्मृत श्रिक्ति॥१८॥
यज्ञं नंः पान्तु वसंवः पुरस्तात्। दक्षिणतोऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रमभि

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतों ऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा नो अरातिर्घशृ साऽगन्। क्षत्रस्य राजा वरुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा श्रातिष्वग्वसिष्ठः। तो देवेभ्यः कृणतो दीर्घमायुः। श्रात सहस्रां भेषजानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्रः शृतभिषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेषजानिं। अज

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वां भूतानिं प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रस्वं यंन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभाजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्। त॰ सूर्यं देवमुजमेकपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुयन्ति

सर्वे॥२०॥

अहिंब्धियः प्रथमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोंमुपाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासों अभि रक्षन्ति सर्वें। चत्वार एकंमभि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास इति यान् वदंन्ति। ते बुध्नियं परिषद्य एक्षिवन्तः। अहि एक्षिन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थाम्। पृष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

इमानि हव्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान् पशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वार् अन्वेंतु पूषा। अन्नर् रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर् सनुतां यजमानाय युज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिमिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्र १ हविषा यजन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजो हव्यवाहो। विश्वस्य दूतावमृतंस्य गोपो। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगंवान् विचेष्टाम्। लोकस्य राजां मह्तो महान् हि। सुगं नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्र हिवषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्तं देवा अदंधुः॥२३॥

नवांनवो भवति जायमानो यमादित्या अध्श्रमाँ प्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतो हुवे। ते नो नक्षेत्रे ह्वमागंमेतम्। व्यं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अति पाप्मानमितं मुक्त्या गमेम। प्रत्युंवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमत्तेजं उचरंत्। उपंयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥ प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु 🕹 हवामहे। स नंः सिवता सुवथ्सनिम्। पुष्टिदां

वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदिंतिर्न उरुष्यतु महीमूषु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वर्ष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुनोऽद्यानुंमितरन्विदेनुमते त्वम्। हव्यवाहङ् स्विंष्टम्॥२६॥ अ्ग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतमग्नये कृत्तिंकाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वै

देवानांमन्त्रादः। यथां ह वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव ह वा एष मनुष्यांणां भवति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बायै स्वाहां दुलायै स्वाहां। नितृत्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्यै स्वाहाँ। मेघयंन्त्यै स्वाहां वर्षयंन्त्यै स्वाहां। चुपुणीकांयै स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासार्

उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहाँ प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥ सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना राज्यमभिजंयेयमितिं। स एत र सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीना र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना ५ ह वै राज्यम्भिजंयति। य पुतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहाँ। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥२९॥ रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एत रुद्रायाऽऽर्द्रायै प्रैय्यंङ्गवं

चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह वै भंवति। य एतेनं

हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽर्द्रायै स्वाहाँ।

प्रजापंतये रोहिण्यै चरुं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेनया गच्छत।

उपं ह वा एनं प्रियमावर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं हिवषा यजते। य

पिन्वमानाये स्वाहां पुशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

ऋक्षा वा इयमेलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्रजायेयेतिं। सैतमदिंत्यै पुनंवंसुभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभि प्राजांयत। प्रजांयते हु वै प्रजयां पृशुभिः। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्यै स्वाहा प्रजांत्यै स्वाहेतिं॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतं बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्च्स्यंभवत्। ब्रह्मवर्च्सी हु वै भंवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेति॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सूर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्भं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपानयन्। एताभिर्ह् वै देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंब्यमुपंनयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्पेभ्यः स्वाहांऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहाँ। दन्दशूकैंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रयामेतिं। त एतं पितृभ्यों मघाभ्यः पुरोडाशृ ए षट्कंपालं निरंवपन्। ततो वे ते पितृलोक आंध्र्वन्। पितृलोके ह् वा ऋंध्रोति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहांऽनघाभ्यः स्वाहांऽगदाभ्यः। स्वाहांऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतमेर्यम्णे फल्गुंनीभ्यां च्रं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्याः स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवानाई स्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुनीभ्या इस्वाहाँ। श्रेष्ठ्यांय स्वाहेतिं॥३६॥

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामितिं। स एतर संवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहां हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विंन्देयेति। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायै पुरोडाशंम्ष्टा-कंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र॰ हु वै प्रजां विंन्दते। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्रायै स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजायै स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्ट्यांयै गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचारं

ह् वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्यांयै स्वाहाँ। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमेन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठ्यं ह् वे संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाहा विशांखाभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४०॥

स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४३॥

चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेति॥४२॥ इन्द्रो वा अंकामयत। ज्यैष्ठ्यं देवानांमभिजंययमितिं। स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठाये पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रींहीणाम्। ततो वे स ज्यैष्ठ्यं देवानांमभ्यंजयत्। ज्यैष्ठ्यं ह वे संमानानांमभिजंयति। य एतेनं हिवषा यजंते।

य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहाँ ज्येष्ठायै स्वाहाँ। ज्येष्ठ्यांय

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं

मित्रायांनूराधेभ्यंश्वरं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेष् लोकेष्वभ्यंजयत्।

मित्रधेय १ ह वा एषु लोकेष्वभिजयति। य एतेनं हविषा यजेते। य उ

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेति। स एतं प्रजापंतये मूलाय च्रं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलं हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलाय स्वाहाँ। प्रजायै स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रं कार्मम्भिजंयेमेतिं। ता एतम्ब्रोंऽषाढाभ्यंश्चरं निरंवपन्। ततो वै ताः समुद्रं कार्मम्भ्यंजयन्। समुद्र १ ह वै कार्मम्भिजंयित। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अब्र्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कार्माय स्वाहां। अभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपज्यं जंयेमेतिं। त एतं विश्वेंभ्यो देवेभ्यों-ऽषाढाभ्यंश्वरं निरंवपन्। ततो वै तेऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपज्य्यः हु वै जंयित। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेयमिति। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजिते चुरुं निरंवपत्। ततो वै तद्बंह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक॰ हु वा अभिजंयित। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहाँ। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४७॥

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

स पुतं विष्णंवे श्रोणायें पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वै स पुण्य ह श्रोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य ह वै श्लोक शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य ह वै श्लोक शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य पुतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्लोणाये स्वाहाँ। श्लोकांय स्वाहाँ श्लुताय स्वाहेतिं॥४८॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्य इश्लोक ईशृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं।

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेति। त एतं वसुंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं ह वै संमानानां पर्येति। य एतेनं हृविषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहाँ। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेतिं॥४९॥ इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामिति। स एतं वरुंणाय श्तिभेषजे

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिथिलः स्यामिति। स पृतं वरुणाय शृतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निरंवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वै स दृढो- प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

ऽशिंथिलोऽभवत्। दृढो ह् वा अशिंथिलो भवति। य पुतेनं हृविषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां शृतभिषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेति॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स तेंज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्स्यंभवत्। तेज्ञस्वी हु वै ब्रंह्मवर्च्सी भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेति॥५१॥

अहिर्वे बुध्नियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुध्नियाय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवपत्। ततो व स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ ह व प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुध्नियाय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेति॥५२॥ पषा वा अंकामयत। पश्मान्थस्यामिति। स एतं पष्णो रेवत्यै चरुं निरंवपत।

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थस्यामितिं। स एतं पूष्णे रेवत्यै चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं

चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्यै स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥ अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्य

पुरोडाशंं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रीत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं।

सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहाँऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहाँ। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्यै

स्वाहेतिं॥५४॥ यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं

यमायापभरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पिंतृणाः राज्यमभ्यंजयत्। समानानाः ह वै राज्यमभि जंयति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं वैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽपभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेति॥५५॥

अथैतदंमावाुस्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावाुस्यां। काम् आज्यम्।

चुन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानेर्धमासान्मासांनृतून्थ्संवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सार्युज्य सलोकर्तामाप्रुयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृश्यांयै पुरोडाशुं पश्चंदशकपालुं निरंवपत्। ततो वै सोऽहोरात्रानंर्धमासान्मासां-नृत्न्थ्संवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोत्। अहोरात्रान् ह वा अर्धमासान्मासानृतून्थ्संवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्यः सलोकतांमाप्रोति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदृश्यांये स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। संवथ्सराय स्वाहेतिं॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येवहि। न नांवहोरात्रे

आंप्रुयातामिति। ते पृतमहोरात्राभ्यां चुरुं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेताये च कृष्णाये च। ततो वै ते अत्यंहोरात्रे अंमुच्येते। नैने अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह् वा अंहोरात्रे मुंच्यते। नैनेमहोरात्रे आंप्रुतः। य पृतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहे स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिंमुक्तये स्वाहेति॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसें च्रं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो ह् वे समानानाः सुभगों भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्ये स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्युंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षेत्राय चुरुं निर्वपिति। यथा त्वं देवानामिसी। एवमहं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां हु वा एतद्देवानाम। एव॰ हु वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षेत्राय स्वाहोदेष्यते

स्वाहाँ। उद्यते स्वाहोदिंताय स्वाहाँ। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहाँ। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहाँ। तपंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स एत सूर्यांय नक्षंत्रभ्यश्चरं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमदिंत्यै चुरुं निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पर्श्वदशाहोरात्रे स्प्तदेशोषा एकांद्रशाधेतस्मे नक्षत्राय त्रयोंदश् सूर्यो दशाधेतमिदित्ये पश्चाधेतं विष्णंवे पदश्स्प्त (स्विताऽऽशूनां ब्रीहीणामिन्द्रो महाब्रीहीणामिन्द्रः कृष्णानां ब्रीहीणामेहोरात्रे द्वयानां ब्रीहीणाम्। पितरः पद्वपालश् सविता द्वादेशकपालमिन्द्राक्षी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशकपालं विष्णुस्त्रिकपालमहिर्भूमिकपालम्थिनां द्विकपालं चन्द्रमाः पश्चदशकपालमृत्रिस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकपालमृन्यत्रं चुरुम्। रुद्रौऽर्थमा पूषा पंशुमान्थ्रस्यार् सोमों रुद्रो बृह्स्पतिः पर्यसे वायुः पयः सोमों वायुरिन्द्राक्री मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं युमोऽभिजित्ये त्वष्टां प्रजापंतिः विष्णुः स्व प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

अग्निर्न ऋष्यास्म नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः पद्॥॥ अग्निर्नृस्तन्नो वायुरहिंबुप्रियं ऋक्षा वा इयमथेतत्यौर्णमास्या अजो वा एकंपाथ्सूर्यस्निपष्टिः॥६३॥ अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णांऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पूर्णत्वम्। ब्रह्म वे पूर्णः। यत्पूर्णशाखयां वृथ्सानंपाकरोति। ब्रह्मणैवैनांनपाकरोति। गायुत्रो वे पूर्णः। गायुत्राः पृशवंः॥१॥ तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायुत्री। यत्पूर्णशाखया गाः प्राप्यति। स्वयैवैनां देवत्या प्राप्यति। यं कामयेतापृशः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरत्। अपृशुरेव भवति। यं कामयेत पशुमान्थ्स्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै

बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकम्भि ज्येत्। यदुदींचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदींचीमा हंरति। उभयोंलींकयोर्भिजित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषेमेवोर्जं यजमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पशर्वः॥३॥

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

वायवं पुवैनान्परिं ददाति। प्र वा एंनानेतदा करोति। यदाहं। वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृशूनुपं ह्वयते। देवो वंः सिवता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतम् कर्म। तस्मादेवमांह। आप्यायध्वमित्रया देवभागिमत्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अंयक्ष्मा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश्च हत्यांह गृत्यै। रुद्रस्यं हेतिः परि वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवेनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यर्जमानस्य पृशून्पाहीत्याह। पृशूनां गोपीथार्य। तस्माँथ्सायं पृशव उपसमावर्तन्ते। अनेधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रेपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रपाद्काः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समृष्ट्ये॥६॥

पुशर्वः करोति पुशर्वो देवभागमित्याह करोति नवं च॥

देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्व इत्यंश्वपुर्शुमादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह।

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिंनस्ति। अश्वपृश्वां बुर्हिरच्छैति। प्राजापृत्यो वा अर्थः सयोनित्वायं॥७॥ ओषंधीनामहिर्सायै। युज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजमान एव र्यिं दंधाति।

प्रत्युष्टु रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्रहिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैंति। मनुंना कृता स्वधया वितष्टेत्यांह। मानवी हि पर्शुः स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति कुवर्यः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै कुवर्यः। युज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव युज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्का यतः कुतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्रहिरासद इत्यांह। ब्रहिषः समृंख्यै। कर्मणो-

ऽनंपराधाय। देवानांं परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

स्तम्बं परिंदिशेत्। त॰ सर्वं दायात्॥१०॥
यज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः।
देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं पृवैनंत्करोति। मा त्वाऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि र्सायै।
पर्वं ते राध्यास्मित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिष्मित्यांह। नास्याऽऽत्मनों मीयते।
य एवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शृतवंल्श्ं विरोहेत्याह। प्रजा वै ब्रहिः। प्रजानां प्रजननाय।

सुहस्रवल्शा वि वय रुहेमेत्याह। आमेवैतामा शास्ते। पृथिव्याः सम्पृचः

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं

कंरिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं ब्रहिर्दाति। आत्मनोऽहि ईसायै।

यावंतः स्तुम्बान्पंरिद्शित्। यत्तेषांमुच्छिङ्घ्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एकई

पाहीत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। सुस्म्भृताँ त्वा सम्भरामीत्यांह। ब्रह्मणैवैनथ्सम्भरित॥१२॥

अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्यै सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्ने देवतांना समनहात। साऽऽर्भ्नोत्। ऋद्यै सन्नहाति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजानामपरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजा

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंशात्वित्यांह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृहुस्पतेंर्मूर्भ्ना हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृहुस्पतिः॥१४॥

ब्रह्मंणैवैनंद्धरति। उर्वन्तरिक्षमिन्वहीत्यांहु गत्यै। देवङ्गमम्सीत्यांह।

भृत्यै"॥१७॥

देवानेवैनंद्रमयति। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठ्यै॥१५॥

सयोनिवार्य स्वर्धाकृताऽसीत्यांह वायावेदं भरति जायने बृहस्पतिः समेष्ठे॥

[२]

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः कंरोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्यज्ञमं-सृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्सांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंखं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां पृवैनांनि शुन्धित। मात्तिरश्वंनो घर्मोऽसीत्यांह॥१६॥ अन्तरिक्षं वै मांतिरश्वंनो घर्मः। पृषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्यंषा पृथिव्याश्च सम्भृता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधांया असि परमेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिवै विश्वधांयाः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दृश्हंस्व मा ह्वारित्यांह

वसूनां प्वित्रम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भांगुधेयम्। यत्प्वित्रम्।

तेभ्यं पृवैनंत्करोति। शृतधारः सहस्रंधार्मित्यांह। प्राणेष्वेवायुंर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्धे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यर्जमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयो रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक् ह्यंतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्माद्य सर्वतः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रफ्स इत्याह् प्रतिष्ठित्यै। हुविषो-ऽस्कन्दाय। न हि हुत स्वाहांकृत स्कन्दित। दिवि नाको नामाग्निः। तस्ये विप्रुषो भाग्धेयम्। अग्नये बृह्ते नाकायेत्याह। नाकमेवाग्निं भाग्धेयेन समर्धयित। स्वाहा द्यावापृथिवीभ्यामित्याह। द्यावापृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयित॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयति। अपां चैवौषंधीनां च रस् सर्मृजति। अथो ओषंधीष्वेव प्शून्प्रतिष्ठापयति। अन्वारभ्य वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयंन्त द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

इव हि दुहन्तिं। कामंधुक्ष इत्याहाऽऽतृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यजंमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भद्रमेवासां कर्मा विष्करोति। सा विश्वायुः सा विश्वर्यंचाः सा विश्वकर्मेत्याह। इयं वै विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वर्यंचाः। असौ विश्वकर्मा। इमानेवैताभिलींकान् यंथापूर्वं दुहे। अथो यथा प्रदात्रे पुण्यंमाशास्तै। एवमेवेनां एतदुपंस्तोति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पुशून्दुं-हन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों हविरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौंति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वारभ्योत्तंराः। अपंरिमितमेवावं रुन्धे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वे दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥ २३ ॥

यातयामा हिवषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै हवी १षिं। नेत इंतः पुरोडाश रे हिवषो यामो ऽस्तीति। काममेव दारुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तिष्धि नोत्पुनन्तिं। यदा खलु वै पवित्रमत्येतिं। अथ तद्धविरितिं। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्यांह। अपां चैवौषंधीनां च रस स स स सृजिति। तस्मदिपां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मुन्द्रा धनस्य सातय इत्याह। पुष्टिमेव यर्जमाने दधाति। सोमेन त्वातंनच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमंमेवैनंत्करोति। यो वै सोमंं भक्षयित्वा। संवथ्सर सोम्ं न पिबंति। पुनर्भक्ष्यों ऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमुः खलु वै सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यौऽस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य ई स्यात्॥२६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिद्धे सदेवम्। उदन्बद्भंवति। आपो वै रक्षोघ्रीः। रक्षंसामपहत्यै। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञायैवैनुदर्दस्तं करोति। विष्णों हव्य र रेक्षुस्वेत्यांह गुप्त्यैं। अनिधः सादयति।

वा आपं:॥२८॥

गर्भाणां धृत्या अप्रेपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रेपादुकाः। उपरीव निदेधाति। उपरीव हि स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै॥२७॥
अ्भीत्यांह पृत्ये यजमाने द्यात्यजांमित्वाय स्थापयित दृहे दृहन्ति दृह्यादोधीत् दर्थात्यांह स्याध्यादयित् पश्च च॥———[3]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यैं। यज्ञस्य वे सन्तंतिमनुं प्रजाः प्रश्वो यजमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छिंत्तिमनुं प्रजाः प्रश्वो यजमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरिस यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्यै स्तृणामि सन्तंत्यै त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सं तंनोति। यजमानस्य प्रजाये पशूना सन्तंत्यै। अपः प्रणयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणयति। यज्ञो

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणयिति। वज्रो वा आपंः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणयिति। आपो वै रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपंहत्यै। अपः प्रणयिति। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरित॥२९॥

अपः प्रणयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां पुवाऽऽरभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषाय त्वेत्याह। वेषाय ह्येनदादत्ते। प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्ट् अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपर्पृश्यातीयात्॥३०॥ अध्वर्यं च यजमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं यौरमान्धूर्वति तं धूँर्व यं वयं धूर्वाम इत्याह। द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव धूर्वति। यश्चैनं धूर्वति। तावुभौ शुचाऽर्पयति। त्वं देवानांमसि सिस्नेतमं पप्रितमं जुष्टेतमं विह्नेतमं देवहत्रमित्याह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

सस्तिम् पाप्रतम् जुष्टतम् वाह्नतम् देवहूतम्।मत्याहा यथायजुर्वतत्॥ ३१॥ अहुंतमसि हिवधान्।मित्याहानाँत्ये। दःहंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमा संविंक्था मा त्वां हि सिष्मित्याहाहि स्माये। यद्वे किं च वातो नाभि वातिं। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवांरुणमेवैनंत्करोति। देवस्य त्वा सिवृतः प्रंस्व इत्यांह प्रस्त्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह॥ ३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं पुवैनां जुष्टं निर्वपित। त्रिर्यजुषा। त्रयं इमे लोकाः। पूषां लोकानामाप्त्यै। तूष्णीं चतुर्थम्। अपिरिमितमेवावं रुन्थे। स पुवमेवानुपूर्वश् हवीश्षि निर्वपित॥३३॥

इदं देवानांमिदम् नः सहेत्यांह व्यावृत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह गुप्त्यैं। तमंसीव वा एषों उन्तश्चंरति। यः पंरीणहिं। सुवंरिभ वि ख्येषं वैश्वानरं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यति वैश्वानरं ज्योतिंः। द्यावांपृथिवी हिविषिं गृहीत उदंवेपेताम्। द १ हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। उर्वन्तिरिक्षमन्विहीत्यांह गत्यैं। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनंदुपस्थें सादयति। अग्ने हव्य १ रंक्षस्वेत्यांह गुप्त्यै॥३४॥ युज्ञो वा आपो धार्म प्रणीय प्रचंरत्यतीयादेतद्वाहुभ्यामित्यांह हुवी १ षि निर्वपति गत्यै चुत्वारिं च॥— -[8]

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यृज्ञिय् सदेवमासींत्। तदपोदंत्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्दर्भेर्प उत्पुनातिं। या एव मेध्यां यृज्ञियाः सदेवा आपः। ताभिरवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिवतोत्पंनात्वित्यांह। सिवतृप्रंसूत एवैना उत्पंनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्। तेनैवैना उत्पंनाति। वसोः सूर्यंस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्थ्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं युज्ञं नंयताग्रं युज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव युज्ञं नंयन्ति। अग्रं युज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्याह। वृत्र र

व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टें प्रोक्षांम्युग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥
अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां

हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विवरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं

एवैनानि शुन्धति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अवंधूत्र् रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या पृवैनृत्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवृहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

ऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्त्नूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तृनः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्तिं। अथ वाचं विसृजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥ देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्विरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावांणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों ह्व्य स्पृशमिं शिम्ष्वेत्यांह शान्त्ये। हविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना हि हविष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिर्ह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः।

अधिषवंणमसि वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवैनंत्करोति। प्रति त्वा-

इषमावदोर्जमावदेत्यांह॥४२॥ इषमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वयः संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। मनौः श्रृद्धादंवस्य यजंमानस्यासुरृष्ठी वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुपाश्वंण्वन्। ते पराभवन्। तस्माथ्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानांमुद्धदंता- मुपशृण्वन्ति। ते परां भवन्ति। उुचैः सुमाहंन्तु वा आंहु विजित्यै॥४३॥

वृङ्कः एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृंद्धमसि प्रतिं त्वा वर्षवृंद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृंद्धा इषीकाः समृंद्धौ। यज्ञ र रक्षा इस्यनु प्राविंशन्। तान्यस्ना पशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा १सि निरवंदयते। अप उपंस्पृशित मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविन्तिकत्यांह। पवित्रं वे वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तिरिक्षादिव वा पुते प्रस्कन्दिन्त। ये शूर्पांत्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्कन्दाय। त्रिष्फ्रितीकर्तवा आहा। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं॥४५॥

इान्यामुत्तात प्रमर्था व्यन्त्यत्रं व्यन्ति व्यन्नेऽवित्रस्कन्दाय गृह्णात्यांह व्येत्यांह विजित्या अपंहत्या अस्तन्दाय शिण वा——[५]

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्ये। अदित्यास्त्वग्सीत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या पुवैनुत्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह प्रतिं- ष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चेः पशवो मेधमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने हिवरिधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंद्भे।

ह्विषोऽस्कंन्दाया द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शंम्यामात्रमेकमह्र्वेता श्रम्यामात्रमेकमह्र्वेता श्रम्यामात्रमेकमह्रं। दिवः स्कंम्भिनिरंसि प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्ये। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कंम्भिनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योविधृंत्ये॥४७॥ धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धत्ये॥ देवस्यं

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवनानधिं वपति। धान्यंमिस धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यज्ञंषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्ञुहोति। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजमाने दधाति। दीर्घामन् प्रसितिमायंषे धामित्यांह। आयंरेवास्मिन्दधाति। अन्तिरक्षादिव वा पृतानि प्रस्कन्दिन्त। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रति-गृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हृविषोऽस्कन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मध्यत्वायं॥४९॥

भृष्टिंरिस् ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्यादर् सेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवाऽऽमात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कपालुमुपंदधाति। निर्देग्धर् रक्षो निर्देग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षा ईस्येव निर्देहित। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गार्मिधे वर्तयित॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुष्मिं श्लोक ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तो-ऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदे। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेन द॰हित। धूर्त्रमंस्यन्तिरक्षं दृ॰हेत्यांह। अन्तिरिक्षमेवैतेनं द॰हित। धूरुणंमिस् दिवं द॰हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं द॰हित॥५१॥

धर्मासि दिशों हुर्हेत्यांह। दिशं पुवैतेनं हर्हित। इमानेवैतैर्लीकान्हर्रहित। हर्नेन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्भिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्रें कृपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। एक्मग्रें कृपालमुपंदधाति। एकं वा अग्रें कपालं पुरुषस्य सम्भवति॥५२॥

अथ द्वे। अथ त्रीणि। अर्थ चत्वारि। अथाष्टौ। तस्माद्ष्टाकंपालं पुरुषस्य शिरः। यदेवं कृपालान्युप्दधाति। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितिः सङ्स्करोति। आत्मानमेव तथ्सङ्स्करोति। त॰ सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुर्ष्मिं श्लोकेऽनु परैति। यद्ष्टावुंप्दधांति। गायत्रिया तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥ जगत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उंप्दधंत्कपालांनि। इमाँ श्लोकानंनुपूर्वं दिशो विधृंत्यै द १ हित। अथाऽऽयुंः प्राणान्यजां पृशून् यर्जमाने दधाति। सृजातानंस्मा अभितों बहुलान्करोति। चितः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्याह। देवतानामेवैनानि तपंसा तपित। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घर्मे कृपालान्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदय्चां वि मुञ्जिति। चतुंष्पादः पृश्ववंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥५५॥

वर्त्तृ विविम्वेवेतं द १ हित मुम्भवित् तर सङ्कृतमालान् ब्रावंग् सङ्ख्येत् श्रीणं च॥—————[७]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यांह प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमाह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्याह। आपो वै रेवतीः। पुशवो जगंतीः। ओषंधयो मधुंमतीः। आपु ओषंधीः पुशून्। तानेवास्मां एकधा स॰सृज्यं। मधुंमतः करोति। अन्धः परि प्रजांताः स्थ समुद्भिः पृंच्यध्वमितिं पर्याप्नांवयति। यथा सुवृष्ट इमामनुविसृत्यं॥५७॥

आप ओषंधीर्महयंन्ति। ताद्दगेव तत्। जनंयत्यै त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवैतेनं दाधार। अग्नये लाऽग्नीषोमा भ्यामित्यांह व्यावृत्त्यै। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। यज्ञो वै मखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुरोडाशंः। तस्मदिवमाह॥५८॥

घर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रंथस्वोरु तें यज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पशुभिः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवेन् सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। मारस एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्त्वचा मा १ सं छन्नम्। घर्मो वा एषो ऽशौन्तः॥ ५९॥

अर्धमासैंऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईंश्वरो यजंमान शुचा प्रदहंः। पर्यम्भि करोति। पशुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यम्भि करोति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्यै। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्यांह॥६०॥

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३) रक्षंसामुन्तर्हित्यै। पुरोडाशुं वा अधिश्रित् रक्षा ईस्यजिघा रसन्। दिवि नाको

नामाग्नी रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षाङ्स्यपाहन्। देवस्त्वां सविता श्रंपयत्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेन ई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्निस्ते तनुवं माऽतिधागित्याहाऽनितिदाहाय। अग्ने हव्य रेक्षुस्वेत्याह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। युज्ञमेव हवी इप्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मस्तिष्को वै पुरोडाशंः। तं यन्नाभिं वासयेंत्। आविर्मस्तिष्कंः स्यात्। अभिवांसयति। तस्माद्गुहां मुस्तिष्कंः। भस्मनाऽभिवांसयति। तस्मान्मा १ सेनास्थि छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयति। तस्मात्केशैः शिरंश्छन्नम्। अखंलतिभावुको भवति। य एवं वेदं। पशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायजुष्कंमभिवास्यंः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यर्जमानस्य पशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्याह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥ प्राणाः पशवंः। प्राणैरेव पशून्थ्सम्पृंणक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा पृशवः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजमानमेव प्रजयां पशुभिः समर्धयति। देवा वै हविर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह इति। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तन्ः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियष्यामि। यस्मिन्प्रक्ष्यध्व इतिं। ते देवा

अग्रौ तनूः सन्त्र्यंदधत। तस्मांदाहुः। अग्निः सर्वा देवता इति। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोंऽजायत। स द्वितीयंमभ्यंपातयत्॥६५॥ ततों द्वितों ऽजायत। स तृतीयंमभ्यंपातयत्। ततंस्त्रितों ऽजायत। यदन्यो-ऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यद्गत्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनिं। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंन्नग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः पंरिवित्ते। परिवित्तो वीरहणि। वीरहा ब्रह्महणि। तद्बेह्महणं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि

सूर्याभिनिमुक्ते॥६६॥

निनयत्यवरुद्धौ। उल्मुकेनाभि गृह्णाति शृत्वायं। शृतकांमा इव हि देवाः॥६७॥ अया जिन्वत्यत् विमुख्येवमाहाशांन्त आहु गुर्वे छुत्रं ब्रह्मांबवीह्नित्यंम्भ्यंपातयुथ्स्यांभिनिम्रके देवाः॥————[८]

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इति स्फ्यमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह।

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा इत्यांह। तेजो वे वायुः॥६८॥
तेजं एवास्मिन्दधाति। विषाद्वे नामांसुर आंसीत्। सोंऽबिभेत्। युज्ञेनं मा

तज पुवास्मन्द्याता विषिद्व नामासुर आसात्। साठाबमत्। युज्ञन मा देवा अभिभविष्यन्तीति। स पृथिवीमभ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रो वृत्रमहन्। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयज्ननीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रुजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्शसे वै ब्रुजो गोस्थानः। छन्दा ईस्येवास्मै व्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिंवे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। बुधान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ बंध्नाति पर्मस्यां परावतिं शतेन् पाशैं। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिं मुत्त्ये। अररुवैं नामां सुर आंसीत्। स पृंथिव्यामुपं मुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतोऽररुंः पृथिव्या इतिं पृथिव्या अपाँघ्नन्। भ्रातृं व्यो वा अरुरुंः। अपंहतोऽरुरुंः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृंथिव्या अपंहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पंतिष्यतीतिं। तम्ररुंस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अरुरुंः। अरुरुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयज्ञुर्हंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपंहन्ति। द्वितीय हरित॥७२॥

अन्तरिक्षादेवैन्मपंहन्ति। तृतीय १ हरति। दिव एवैन्मपंहन्ति। तूष्णीं चंतुर्थ १

हंरति। अपंरिमितादेवैन्मपंहन्ति। असुंराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावंद्देवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीतिं॥७३॥

क्यंन्नो दास्यथेतिं। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यंगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंंऽग्निना प्राञ्चोऽजयन्। वसंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्श्चः। आदित्यैरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्तिं॥७४॥

भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंच्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः सव इत्यांह् प्रसूँत्यै। कर्मं कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्मं क्रियतें। पृथिव्ये मेध्यं चामेध्यं च व्यदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदींचीं प्रवणां करोति। मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्यन्सावुन्नयिति। आहुवनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथों मिथुनुत्वायं। उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः पराभवन्ति॥७६॥

मूलं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनत्ति। मूलं वा अंतितिष्टद्रक्षाः स्यन्तिपंपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फोनं छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाः स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुले-ऽन्वंविन्दन्। तस्मांचतुरङ्गुलं खेयां। चृतुरङ्गुलं खेनित। चृतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रतिष्ठायें खनित। यजमानमेव प्रतिष्ठां गमयित। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयर्जनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै प्शवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं प्शुभिः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। एतावंती वै पृथिवी। यावंती वेदिः। तस्यां एतावंत एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदंनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

क्रूरिमंव वा एतत्करोति। यद्वेदिं क्रोतिं। धा असि स्वधा असीतिं योयुप्यते

शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवेनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपों विरिष्शित्रित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामैरंयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥ यददश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तदस्यामेरंयित। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्ये। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्रुहिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंद्धि। पत्नी सन्द्रि। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांये। प्रोक्षंणीरा सांदयित। आपो वै रंक्षोघ्रीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्ये। स्फास्य वर्त्मं स्थादयित। यज्ञस्य सन्तंत्ये। उवाच हासिंतो दैवलः। पृतावंतीर्वा अमुर्ष्मिं ह्योक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्मा द्वहीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवेन मर्पयित॥८२॥ व वाय्यंह पग्वतीत्याहाहं द्वितीयं हर्तीति परिगृह्णते देव्यर्जनी करोति भवन्ति खनत्यकरेतत्कृत्वा रक्षोष्ठीर्पयित॥——[९]

वज्रो वै स्फाः। यद्नवर्श्वं धारयेत्। वज्जैऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तौत्तिर्यर्श्वं

धारयति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदींचश्चाध्राचंश्च। स्फोन् वा एष वज्रेणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयित मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्त। इध्माब्र्हिरुपंसादयित् युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुनत्वायं। अथो पुरोरुचंमेवेतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तौत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

उत्तरस्य कर्मणीऽनुख्यात्य। न पुरस्तात्प्रत्यगुपसादयत्॥८४॥
यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुपसादयौत्। अन्यत्रोऽऽहुतिपथादिध्मं प्रतिपादयेत्। प्रजा
वै ब्र्हिः। अपराध्रयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित।
आहुतिपथेनेध्मं प्रतिपादयित। सम्प्रत्येव ब्र्हिषां प्रजानां प्रजनंनमुपैति।
दक्षिणमिध्मम्। उत्तरं ब्र्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यांत्मन्
उत्तरितरा तीर्थे। ततो मेधंमुपनीयं। यथादेवतमेवैन्त्प्रतिष्ठापयित। प्रति तिष्ठति

प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥८५॥

वृश्चति सादयेदिध्मः पश्चं च॥

[१०]

तृतीर्यस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वे पूँवेंद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्सोंऽपोऽवंधृतुं धृष्टिंदेवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्फामा दंदे वज्रो वे स्फाो दर्श॥१०॥ तृतीर्यस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय पुवित्रवत्यध्वर्षुं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामुन्तर्हित्ये द्वौ वाव पुरुषो यद्दश्चन्द्रमस्चि मेथ्युं पञ्चाशीतिः॥८५॥ तृतीर्यस्यां यजमानः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मौष्टि। स्रुवमग्रें। पुमार्श्समेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुनत्वायं। अथं जुहूम्। अथोपभृतम्। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ ह्योकानंनुपूर्वं कंल्पयित। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्भिः। य एवं वेदं। यदिं कामयेत् वर्षुकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रुतः सम्मृंज्यात्॥२॥

वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनाँग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिंष्टाथ्सम्मृं-ज्यात्। मूलतोंऽधस्ताँत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥ प्राचीमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमेव ह्यन्नम्ह्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। अधस्तौत्प्रतीचीम्। दण्डम्तम्तः। मूलंन मूलं प्रतिष्ठित्यै। तस्मादर्त्नौ प्राञ्च्यपरिष्टालोमानि। प्रत्यञ्चधस्तौत्॥४॥

सुग्ध्येषा। प्राणो वै सुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर्श सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्ये। बाह्यतस्तनुव श्रुभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्मार्ष्टि। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविशति। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवति। य पुवं वेद ॥५॥

जुह्र्मंज्याद्भविति प्रत्यक्ष्प्रसांमार्ष्टि पर्व व॥

[१]

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभि श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्रं नाशयामसि स्वाहेतिं स्रुख्सम्मार्जनान्यग्नौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापृत्यो वेदः। वेदस्याग्रईं सुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषाँ। दुर्भो वृषाँ। तिम्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां प्रशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापाँस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य यज्ञियंस्य कर्मणः सिवेदोहः॥७॥

यद्यंनानि पृशवोंऽभि तिष्ठंयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मार्जियत्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यृज्ञियंस्य कर्मणोऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मै प्रतिष्ठां देवाः समर्भरन्। यद्द्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यितं। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयित॥८॥

प्रति तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। अथौं स्तम्बस्य वा एतद्रूपम्। यथ्मुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बुशो वा ओषंधयः। तासौं जरत्कुक्षे पृशवो न रंमन्ते।

अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो ह वै जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दर्धति। नवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पशवों रमन्ते॥९॥

नुवदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो ह वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यग्नौ प्रहर्रन्ति। तस्मांदेतान्यग्नावेव प्रहंरेत्। युत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पुशूनां धृत्यै। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तन्तिचरो वृषां। पुशून्स्माकुं मा हि ५ सीः। पुतर्दस्तु हुतं तवु स्वाहेत्यंग्निस्म्मार्जनान्युग्नौ प्रहंरति। एषा वा एतेषां योनिः। एषा प्रंतिष्ठां स्वामेवैनांनि योनिम्ं। स्वां प्रंतिष्ठां गंमयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभियंजमानः॥१०॥

वेदस्याग्रई सुख्सुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पुशवों रमन्ते हिश्सीः षट् चं॥

अयंज्ञो वा एषः। योऽपत्नीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्यन्वास्ते। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजनंनाय। यत्तिष्ठंन्ती सन्नह्यंत। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। आसींना सन्नह्यते। आसींना ह्यंषा वीर्यं करोतिं॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदंन्दधीत। देवानां पित्रिया समदंन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनो गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनां केवेलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयिति। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय किमत्यांह। एतद्वे पित्रिये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योर्ऋमेव युंते। यम्नवास्तें। तस्यामुष्मिं छोके भंवतीति योर्ऋण। यद्योक्रम्। स योगंः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य कृष्ट्यै। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंथाति। आशिषं एवास्यां पिरं गृह्णाति। पुमान् वे ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१४॥

अर्थो अर्थो वा एष आत्मर्नः। यत्पत्नीं। युज्ञस्य धृत्या अशिथिलं भावाय।

सुप्रजसंस्त्वा वय स्प्पत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तिमंथुनीकंरोति। कुनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजांत्यै। मृहीनां पयोऽस्योषंधीना रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते॥१५॥

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययातयामत्वाय। पत्र्यवैक्षते॥१६॥

मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। यद्वै पत्नीं यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया प्रवैष यज्ञस्याँन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा प्रतत्करोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्दंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयति। अग्निस्ते तेजो मा

विनैदित्याहाहि ५ सायै। स्फास्य वर्त्मं न्थ्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यज्ञेषेयजुषे भवेत्याह। आ-

पेशलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तें। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

एषा हि विश्वेषां देवानां तनूः। यदाज्यम्। तत्रोभयोमीमा स्सा। जामि स्यात्।

मेवैतामा शास्ते॥१८॥

तद्वा अतः प्वित्राभ्यामेवोत्पुंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें।

यजंमान पुव प्राणापानौ दंधाति। पुनुराहारम्। पुविभव हि प्राणापानौ सञ्चरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचेष्टे। त्रिर्यज्ञंषा।

त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां ह वै योषां सुवर्ण् हिरंण्यं

एषां लोकानामार्स्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामप

यद्यजुषाऽऽज्यं यज्ञंषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पृनात्यजांमित्वाय। अथों मिथुन्त्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नंयति। ओषंधीभिः पशून्। पशुभिर्यजंमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यर्चिस्त्वा-ऽर्चिषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्यांस्या अनंन्तरायाय॥२१॥ इंक्ष्य अक् कृष्य कृष्य वित्यां पर्यांस्या अनंन्तरायाय॥२१॥ देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमंपश्यत्। तेनावैक्षतः।

ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्यंनान्यानिं ह्वी इष्यंभिघारयंति॥२२॥ अथ केनाऽऽज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषोंऽन्धो भवितोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेंक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दार्शस् वा आज्यम्। छन्दार्शस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। चतुंष्पादः प्रावंः। पृश्न्वेवावं रुन्थे। अष्टावंपभृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृशुषं द्रधाति। चतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्शवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। युज्मान्देवत्यां वै जुहूः। भातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयों गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टार्वुप्भृतिं। तस्मांद्ष्टाशंफा। चृतुर्भुवायांम्। तस्मा्चतुंः स्तना। गामेव तथ्स इस्कंरोति। साऽस्मै स इस्कृतेष्मूर्जं दुहे। यञ्जुह्वां गृह्णातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुप्भृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासांमेतन्महिमानं व्याचेष्टे। अग्रे इमं यज्ञं नेयताग्रे यज्ञपंतिमित्याह। अग्रे एव यज्ञं नेयन्ति। अग्रे यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्ये इत्याह। वृत्र हे हिन्ष्यिन्निन्द्र आपो वन्ने। आपो हेन्द्रं विन्नेरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिंताः। अग्निर्देवेभ्यो निर्लायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविंशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठो ऽग्नये त्वा स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदिरसि ब्रहिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। ब्र्हिरंसि स्रुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। यजमानः स्रुचंः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं ब्र्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनंह्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

सह स्रुचा पुरस्तौत्प्रत्यश्चें ग्रुन्थिं प्रत्युक्षिति। प्रजा वै बुर्हिः। यथा सूत्यें काल आपः पुरस्ताद्यन्ति॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्भव बर्हिषद्भ्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तंरस्यै निनंयति सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासानेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धौ। अनंतिस्कन्दन् ह पर्जन्यों वर्षति। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छ्तेत्याह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मौत्पृथिव्या ऊर्जा भुं अते। ग्रन्थिं वि स्र र सयति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छति। तस्मौत्प्राचीन् रेतों धीयते। प्रतीचीं प्रजा जांयन्ते। विष्णोः स्त्रपो-ऽसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञपरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। एतावद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। तस्मिन्प्वित्रे अपं सृजित। यर्जमानो वै प्रंस्त्रः। प्राणापानौ प्वित्रें। यर्जमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णामदसं त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्वास्थ्यं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं पृवैनंथ्स्वास्थ्यं करोति॥३३॥

बुर्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै बुर्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्व स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृशुभिरनंतिदृश्वं करोति। धारयंन्प्रस्तरं पंरिधीन्परि दधाति। यजमानो वै प्रस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं पंरिधीन्परि दधाति। गृन्धर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिदभिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पाति॥३५॥

वीतिहोंत्रं त्वा कव् इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण् समंध्यति। द्युमन्त्र् सिमंधीम्हीत्यांह् सिमंद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह् वृद्धौँ। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यौँ। उदीचीनांग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूनार रुद्राणांमादित्यानार् सदंसि सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदंने प्रस्तुरर सांदयित। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तिरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासांमेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीति। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थसुकृतस्यं लोक इत्यांह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सांदयति। ता विष्णो पाहीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञस्य धृत्यै। पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। यज्ञाय यज्ञंमानायाऽऽत्मनें। तेभ्यं एवाऽऽशिष्माशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थलांह पृथ्यो विद्यंति कृष्ये वीप्यंवर्षसम्मतं करोत्याह पाति नाम्नत्यांह लोके सांदयति पद चं॥———[६]

अग्निना वै होत्राँ। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह् भातृंव्याऽभिभूत्ये। एकंवि श्वातिमिध्मदारूणि भवन्ति। एकवि श्वा वै पुरुषः। पुरुष्याऽऽत्ये। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमास्यः संवथ्सर औप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यः स्मिध्मितं शिनष्टि। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्डा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमाघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितिं मुख्त आरंभते। अथौ प्रजापितिः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्निः सं मृङ्कीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। पुरिधीन्थ्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं।

त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समेछ्ये। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठं न्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तर्दध्वर्युर्य्ज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूंढ्ये। वहंन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवनमिस वि प्रथस्वेत्यांह। युज्ञो वै भुवनम्। युज्ञ एव यजमानं प्रजयां पृश्विः प्रथयित। अग्रे यष्टरिदं नम इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युपभृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत् आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रमिष्मित्याह। अग्निः पुरस्तात्। विष्णुर्यक्तः पृश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रतिप्रोच्यात्या क्रांमित। विजिहाथां मा मा सन्तांष्ट्रमित्याहाहि ईसायै। लोकं में लोककृतौ कृणुत्मित्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंमसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। एतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवा- पंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥

ड्रान्द्रियमेव यजंमाने दधाति। समारभ्योध्वी अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौं। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव यज्ञेन यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहां तो यज्ञां यज्ञपंतिरित्याहानांत्ये। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंध्ये। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यथ्स ईस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्। असईस्पर्शयन्नत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणं दंधाति। पाहि माँऽग्रे दुर्श्वरितादा मा सुचरिते भ्जेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव पवित्रम्। वृजिनमनृतं दुश्चेरितम्। ऋजुक्मं स्त्यः सुचेरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृतादुश्चेरितात्पाति। ऋजुक्में सत्ये सुचेरिते भजति।

तस्मदिवमा शाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्य ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मां उपरिष्टादधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिवाति प्राणं वंधाति हि युजो घारयति नम् इत्यांह पृथाद्वीयांणीत्यांह भा इत्यांह भुजेत्यांह ध्रुवेवासिनंदधाति श्रीणं चा [9] धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्भात्। यद्भाता। यद्याता। यद्भाता। यद्भात्। यद्भात्। यद्भात्। यद्यानानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्।

पुरोडाशंमपुगृह्य सश्चरत्यध्वर्यः॥४९॥

यर्जमानायैव तल्लोक १ शि १ षति। नास्यं प्राणान्थ्सङ्कंर्षति। न प्रमायंको भवति। पुरस्तात प्रत्यङ्कासीनः। इडाया इडामा दंधाति। हस्त्या १ होत्रे। पृशवो वा इडाँ। पशवः पुरुषः। पशुष्वेव पश्नप्रतिष्ठापयति। इडांयै वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजातिं यजमानोऽनु प्र जायते। द्विरङ्गलावनिक्त पर्वणोः। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्यै। सकृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। सकृदिभ घारयति। चतुः सम्पंद्यते। चत्वारि वै पशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पश्नुपं ह्वयते। पशवो वा इडाँ। तस्माथ्सा-उन्वारभ्यां। अध्वर्युणां च यर्जमानेन च। उपंहृतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्यंनौ ह्वयंते होतां। इडाये देवतांनामुपहवे। उपहृतः पशुमान्भविति। य एवं वेदं॥५२॥

यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगधेयम्। यामुपह्वयंते। प्राणाना । सा। वार्चं चैव प्राणा इश्चावं रुन्धे। अथ वा एतर्ह्युपंहृतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहिषदों मीमा ५सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। हिवर्नो निर्वपेति। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यंब्रवीत्॥५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंवक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुंरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं

पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेति वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं कुरोति। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रति तिष्ठति।

बर्हिषदं करोति॥५४॥

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा ब्रहिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मादस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मा १ सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुंरोडाशंं बर्हिषदंं करोतीतिं। चतुर्धा कंरोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजः॥५५॥

ब्रह्मा होतां ऽध्वर्युरग्नीत्। तमभि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इद १ होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदमुग्नीधु इति। यथैवादः सौम्यैऽध्वरे। आदेशमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्ते॥ ताहगेव तत्। अग्नीधे प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्द्धिं यजमान ऋध्नोति। स्कृद्ंपस्तीर्य

द्विरादधंत्। उपस्तीर्यं द्विर्भि घारयति। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिहरति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कामंमुन्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोतां। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवें। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यदध्वर्युः। तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमनुं॥५८॥

अथ स्रुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहित। प्रतिष्ठा वा अंनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ। प्राचीं जुहूमूहित। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्व्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूच एवापोद्धौ सपत्नान् यजंमानः। अस्मिँ होके प्रति तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वस्नंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वाऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथा-यजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्त्रमनिक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचः। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनिक्त। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पुभ्य पृवेनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिक्तः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजसा-ऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनिक्तः। वियन्तु वयु इत्याहः। वयं पृवेनं कृत्वाः। सुवृगं लोकं गमयित॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायैं गोपीथायं। आप्यांयन्तामाप् ओषंधय

इत्यांह। आपं पुवौषंधीरा प्यांययित। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्थे। दिवं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्थे॥६३॥

यावृद्धा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यावृद्धा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चृक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंमें पाहीत्यांह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ध्रुवाऽसीत्यांह प्रतिष्ठित्यै। यं परिषिं पर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥

यथायजुरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिर्वीयमाण् इत्याह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्याह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समित्तिमत्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्त्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ठ्ये॥६५॥

सुचौ सं प्रस्नावयति। यदेव तत्रं ऋूरम्। तत्तेनं शमयति। जुह्वामुंप्भृतम्।

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

अतिरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

यज्मानदेवत्यां वै जुहूः। भातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भातृव्यमुपंस्ति करोति। सङ्स्रावभागाः स्थेत्याह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भागधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भंवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सर्देस सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदेने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै पृशवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृशूनात्मन्धंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेंऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ठ्ये पाहि दुरद्मन्यै पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनि इस्वाहेतीं ध्मसंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचने उभ्याधार्य फलीकरणहोमं जुंहोति।

सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास आर्लभते॥७०॥

वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरितिं पुरस्ताँथ्स्तम्बयजुषों वेदेन वेदि सम्मार्छ्यनुवित्त्यै॥६९॥ अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुनत्वाय प्रजांत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रृंणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव करोति। विन्दते प्रजाम्। वेद १ होता ऽऽहं वनीयाँ थस्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सं तनोत्योत्तरमादर्धमासात्। त १

दधाति। अथो अर्तिरिक्तेनैवार्तिरिक्तमास्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां

तं कालेकाल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतो यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्यज्ञं प्रयुङ्के। देवा गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्यांह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥७१॥

तिष्ठुर्तीमे लोका गंमयति बौर्वृष्टिमेवावं रूचे पूर्वर्थत्या इत्यांहु समिछ्ये भागुभेयंत्रयत्तिमत्यांहु वा इंध्यस् वृक्ष्यात्यत्तिवस्ये लभते यज्ञमानः॥——[९] यो वा अयंथादेवतं युज्ञमुंपूचरंति। आ देवतां भ्यो वृक्ष्यते। पापीयान्भवति।

यो यंथादेवतम्। न देवताभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वा्रुणो वै पार्शः। इमं विष्यांमि वर्रुणस्य पाश्मित्यांह। व्रुणपाशादेवैनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निर्वेनां धाता। पुण्यं कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानौत्यै सुन्त्वायं। समायुषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततों ऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भेवति। अस्मिँ छोके प्रतिं तिष्ठानीतिं। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिंथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रजनयन्। यहै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यतें। ब्रह्मणा वै तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायेन्त्पत्नी सहाप उपंगृह्णीते शान्त्यैं। अञ्जलौ पूर्णपात्रमा नयति। रेतं एवास्यां प्रजां दंधाति। प्रजया हि मंनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

मुख्यं प्रविव्यंस्ते प्रविव्यं प्रविव्यं

पुरिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दतें परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुंरु। उपवेषोपं विङ्कि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथों धनम्। द्विपदों नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्वितिं पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गृहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवस्यन्ति। स्थविमत उपंगूहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टिर्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इति॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरति। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यति। निर्बाध्येन

ह्विषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽतिं रोचनायावंत्। सूर्यो असंद्विव। पुरमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा स॰शितः। शुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोंऽसाववंधिष्मामुमित्यांहु स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पुमर्यज्ञो घृतं चे देवासुराः स एतमिन्द्र आपौ देवीर्ग्निना धिष्णिया अयु स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥ प्रत्युष्टमर्यज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानामूर्जा पृथिवीमथो रक्षसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकाले नर्वसप्ततिः॥७९॥ प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्ञन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्कंरम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायायोगूम्। कामाय पुङ्श्चलूम्। अतिंकुष्टाय मागुधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नुर्मायं रेभम्। निर्रष्ठायै भीमृलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीष्खम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधायै रथकारम्। धेर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमाय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

सुन्धयें जारम्। गेहायोंपपतिम्। निर्ऋंत्यै परिवित्तम्। आर्त्यें परिविविदानम्।

अराध्यै दिधिषूपतिम्। पवित्रांय भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदुर्शम्। निष्कृंत्यै पेशस्कारीम्। बलांयोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्ट्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मत्तम्। गुन्धुर्वाफ्सुराभ्यो व्रात्यम्। सुर्पदेवजनभ्योऽप्रतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानैभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्नामम्। स्वप्नायान्थम्। अर्धर्माय बिध्रम्। स्वप्नायान्थम्। अर्धर्माय विध्रम्। स्वप्नायाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मुर्यादाये प्रश्जिववाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनह्रंदयम्। वैर्रहत्याय् पिशुंनम्। विवित्त्ये क्षत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह्यरम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्ं। ब्रुध्नस्यं

विष्टपांय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। जुवायाँश्वपम्। पृष्ट्यै गोपालम्। तेर्जनेरेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरायै कीनाशम्। कीलालाय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तधम्। अध्यक्षायानुक्षतारम्॥९॥

भागदुघम्। वर्षिष्ठाय नाकांय परिवेष्टारम्॥८॥

मृन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वपुषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्यै कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

यम्यै यमसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवथ्सरायं पर्यारिणींम्। परिवथ्सराया-विजाताम्। इदावथ्सरायापस्कद्वंरीम्। इद्वथ्सरायातीत्वंरीम्। वथ्सराय विजंर्जराम्। संवथ्सराय पर्लिक्कीम्। वनाय वनुपम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥ सरोंभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नृड्वलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय केवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनेभ्यः पर्णकम्। गृहाँभ्यः किरातम्। सार्नुभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूंरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भूषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणवध्मम्। आक्रन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरस्परायं शङ्ख्ध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥

बीभ्थ्सायै पौल्कसम्। भूत्यै जागर्णम्। अभूत्यै स्वपनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्युद्धा अपगुल्भम्। स्र्श्रारायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पुश्श्वलूमा लेभते। वीणावादं गणेकं गीताये। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्माये भद्रवृतीम्। तूणुवृध्मं ग्रांमुण्यं पाणिसङ्घातं नृत्ताये। मोदायानुक्रोशंकम्। आनुन्दायं चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

तलवम्॥१५॥

अक्षराजार्य कित्वम्। कृतार्य सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवद्र्शम्। द्वाप्रायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं च्रकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यः सैलगम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुपे गोविकर्तम्। क्षुत्तृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मा्र्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठंते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिणमा लंभते। अग्नयेऽर्स्सलम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वश्यनिर्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदानः संमानं तान् वायवैं। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनेश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आलंभते। अतिंहस्वमितंदीर्घम्। अतिंकृशुमत्यर्श्सलम्।

अतिंशुक्रुमतिंकृष्णम्। अतिंश्रक्ष्णुमतिंलोमशम्। अतिंकिरिट्मतिंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिर्मतिंमेमिषम्। आशायैं जामिम्। प्रतीक्षायैं कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमाय सुन्धये नुदीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्ये भाया अर्मेभ्यो मुन्यवे युम्ये दर्शदशु सरौ-यो द्वादेश प्रतिश्रुत्काये बीभ्थ्साये दर्शदशु हसाय सुप्ताक्षंगुजायु त्रयोदशु भूम्ये दर्श वाचे पडथु नवैकान्नविश्वतिः॥१९॥

ब्रह्मणे युम्यै नवंदश॥१९॥

ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां तनुव्मनाँताँ प्रपेद्ये। इदम्हं पंश्चद्रशेन् वर्ज्रेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अग्र आयांहि वीतयें। गृणानो हव्यदांतये। नि होतां सिथ्स बुर्हिषिं। तं त्वां सुमिद्धिरिङ्गरः।

घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोचा यविष्ठ्य। स नः पृथः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नम्स्यंस्तिरः। तमार्रसि दर्शतः। सम्ग्रिरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः सिमध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा व्यं वृषन्। वृषांणः सिमधीमहि॥३॥

अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेदसम्। अस्य युज्ञस्यं

सुऋतुम्। स्मिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। सिमंद्धो अग्न आहुत। देवान् यक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रंयत्यध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वस्तुं सुषण्नानि सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥

श्वाव्यंमिधमुद्धार्ते सुष्ठ वं॥
[२]

अग्ने महा असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंस शितो घृताहं वनः। प्रणीर्यज्ञानौम्। र्थीरेध्वराणौम्। अतूर्तो होतौ। तूर्णिर्ह्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानौम्॥५॥ चम्सो देवपानः। अरा इंवाग्ने नेमिर्देवा इस्त्वं परिभूरेसि। आ वह देवान् यर्जमानाय। अग्निमंग्न आवह। सोम्मावह। अग्निमावह। प्रजापितिमावह।

अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवार आँज्यपार आवंह। अग्निर होत्रायाऽऽवंह। स्वं मंहिमानुमावंह। आ चाँग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडामहै देवा ईडेन्यान्। नमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

स्मिधो अग्र आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्र आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्र आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्र आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहा-ऽग्निम्। स्वाहा प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौ। स्वाहैन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा अाज्यंपान्। स्वाहाऽग्नि होत्राञ्जंषाणाः। अग्र आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययां। समिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो

अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व॰ सोमासि सत्पंतिः। त्व॰ राजोत वृंत्रहा। त्वं भुद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु। अग्निः प्रत्नेन जन्मना। शुम्भानस्तन्व्ड् स्वाम्। क्विविंप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्टां वयम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु॥९॥

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पतिः पृथिव्या अयम्। अपार रेतार्रस जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधषे

मुवा युजस्य रजस्त्र नृता। यत्रा नियुद्धः सचस शिवामः। दिव मूधान दाधव सुवर्षाम्। जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नों अस्तु॥१०॥

वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। स वेंद पुत्रः पितर् समातरमै। स सूनुर्भुवथ्स भुंवत्पुनंर्मघः। स द्यामौर्णोदन्तरिक्ष् स सुवेः। स विश्वा भुवो अभव्थ्स आभवत्। अग्नीषोमा सर्वेदसा। सहूंती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथुः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्ऋतू अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे र्भिशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावमुंश्चतं गृभीतान्। इन्द्रौग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वौश्चेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रा यो अग्नी सहुरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन १ सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत् शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भर् दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतीनाम्। महा १ इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा १ ईव। स्तोमैंर्वथ्सस्यं वावृधे। महा १ इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृतः कर्तृभिभूत्। पिप्रीहि देवा र उंशतो यंविष्ठ। विद्वा र ऋतू र ऋतु पते यजेह। ये दैव्यां

ऋत्विज्रस्तेभिरग्ने। त्व॰ होतॄंणाम्स्यायंजिष्ठः। अग्निः स्विष्टकृतम्। अयांड्ग्निर्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्थ्सोमस्य प्रिया धामांनि॥१४॥

अयांडुग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्रजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांडग्नीषोमंयोः प्रिया धार्मानि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धार्मानि। अयाडिन्द्रंस्य प्रिया धार्मानि। अयाँण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयाँहेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंदग्नेर्होतुंः प्रिया धामानि। यक्षथ्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता ५ हविः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्ट्व हे यज्वा। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥ अस्त्वधत्तुर् र्यिं चंर्षणिप्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषः पद्धं॥

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौं ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सरखां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतमुपंहृतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव उपहूताः। उपहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपितं वर्धान्। उपहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावरी। देवी देवपुत्रे। उपहूतोऽयं यजमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपहूतः। भूयंसि हिवष्करण उपहूतः। दिव्ये धामन्नुपहूतः। इदं में देवा हिवर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपहूतस्योपहूतः॥१८॥

महर्षमा ह्वयामुपहूतः हिवष्करण् उपहृतक्षत्वारि वा——————————[८]

देवं ब्रहिः। वृसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशर्सः। वृसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मुन्द्रः कविः। सृत्यमंन्मायुजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिंप्रेः। ये ते होत्रे अमंथ्सत। ता र संसुनुषी होत्राँनदेवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होता-ऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥१९॥

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व॰ सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् यज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्तांम्। शृङ्गये जीरदांन्। अत्रंस्नू अप्रवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भुवौं मयोभुवौं। ऊर्जस्वती च पयंस्वती च। सूप्चरणा चं स्विधचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिदः ह्विरंजुषत॥ २१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापितिरिदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमाविदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। महोन्द्र इदः ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त् महो ज्यायोऽक्रत। अग्निरहोत्रेणेद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृध्द्धोत्रांयान्देवङ्गमायाम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। सजातवनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयो हिवष्करणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यदनेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। वयमुग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अ॰हंसस्पाताम्। इह गतिर्वामस्येदं चं। नमो देवेभ्यः॥२४॥ अभूयं कृतांवकृत्मिप्रिदे हिवरंज्यत महेन्द्र इद॰ हिवरंज्यत सजातवन्स्यामा शाँस्ते वीतं च श्रीणि च॥——[१०]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे॥२५॥ व्यक्षं गरिष्णे॥————————————————[११]

आप्यायस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुशतीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिष व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्रा वियन्तु देवपंत्रीः। इन्द्राण्यंग्राय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी शृंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यांनाम्। यिजेष्टः स प्र यंजतामृतावां। व्यमुं त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकेर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हपत्यािन सन्तु। तिग्मेनं न्स्तेजंसा स शिंशािध॥२७॥

उपंहूत रथन्तु र सह पृंथिव्या। उपं मा रथन्तु र सह पृंथिव्या ह्वंयताम्।

उपंहूतं वामदेव्य स्हान्तिरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य स्हान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सरखां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतुमुपंहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावरी। देवी देवपंत्रे। उपंहूतेयं यजमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूता। दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मित्रुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥ महरूपंग ह्यामुपंहूतः सुपुत्र पदं॥——[१३]

पश्चमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

सृत्यं प्रवोऽग्ने मुहानृग्निर्होतां सुमिथोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्थोपहूतं देवं बुर्हिरिदं द्यांवापृथिवी तच्छुं योरा प्यायस्वोपहूत्त्र्रयोदश॥१३॥ सृत्यं वयश् स्याम वृष्टिद्यांवा त्रिर्शात्॥३०॥ सत्यमुपंहता॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मध्ना दैव्येन। यदूर्धस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुर्स्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात। ब्रह्मं वन्वानो अजर्र सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बार्धमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सनिता यद्श्विभिः। वाघद्विर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्यश्हंसो नि केतुनां। विश्वश् समृत्रिणं दह। कृधी न ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिनत्वे अह्नाम्। समयं आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्। युवां सुवासाः परिवीत् आगांत्। स उ श्रेयाँन्भवित जार्यमानः। तं धीरांसः क्वय उन्नयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वाहुतः। अग्निर्य्ज्ञस्यं हव्यवाद। तः स्वाधो यतः स्रुंचः। इत्था धिया यज्ञवन्तः। आचं कुरिग्नमूतयेँ। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वस् सुषण्नानि सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

प्रवार ववः स्वहितोऽहो ववः स्वहितोऽहो ववः (१)

होतां यक्षदिग्नि स्विधां स्विधां सिष्ट्रं नाभां पृथिव्याः संङ्गथे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तनूनपांत्मिदितेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्पथो अनक्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्रराश १ सं नृशस्त्रं नृशः प्रणेत्रम्। गोभिर्वपावान्थ्स्याद्वीरैः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदिग्निम्ड ईडितो देवो देवा आवंक्षदूतो हंव्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञमुपेमां

देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्धर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदा अस्मिन् युज्ञे वि च प्र चं प्रथताः स्वास्थयं देवेभ्यः। एमेनदृद्य वसंवो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्षद्दुरं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् युज्ञे विश्रयन्तामृतावृधो वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृहती सुपेशंसा नृइः पतिंभ्यो योनिं कृण्वाने। सङ्स्मयमाने इन्द्रंण देवैरेदं बर्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होतर्यजी। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा मन्द्रा पोतांरा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः कंरदिषा स्वीभेगूर्तमन्य ऊर्जा सतंवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाँ ज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्पसाम्पस्तमा अच्छिद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांरमचिंष्टुमपांक रतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपुमकामकर्शन सपोषः पोषैः स्याथ्सुवीरो वीरैर्वेत्वा-

ऽऽज्यंस्य होत्रर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पितंमुपावंस्रक्षिद्धयो जोष्टार श्राशम्त्ररं। स्वदाथ्स्विधितर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यों ह्व्यावाङ्गेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदिग्नि स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहां मेदंसः स्वाहां स्तोकाना स्वाहां स्वाहां स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा अाज्यपान्थ्स्वाहाऽग्नि होत्राञ्जंषाणा अग्र आज्यंस्य वियन्तु होत्र्यंजं॥५॥

सिमंद्रो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः कविरेसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्वां समुञ्जन्थ्यंदया सुजिह्न। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशर्श्संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्जतस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुऋतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमसि यह्व होताः। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्युं प्रथते वितरं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवीँद्विरो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यों भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्तते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौँ। दिव्ये योषणे बृहती सुंरुक्मे। अधि श्रियर् शुक्रिपशं दर्धाने। दैव्या होतांरा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना युज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूयंमेत्। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावापृथिवी जिनेत्री। रूपैरिप श्रुद्भवनानि विश्वां। तम्द्य होतरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टारिमेह यक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्तमन्यां सम्अन्। देवानां पार्थ ऋतुथा ह्वी॰िषं। वन्स्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु हृव्यं मधुंना घृतेनं। सुद्यो जातो व्यमिमीत युज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत श् ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

पक्षे स्थानं यजीये विक्वानक्षे चे॥

[3]

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपितः क्विः। अग्निरह्व्यान्यंक्रमीत्। दध्द्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अग्निरहोतां नो नवं॥

[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाज्ञिन्नि। देवो देवेभ्यों हृव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कल्पंमानः। यज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हृव्या देवेभ्यः॥१२॥
अर्जेवशः
[५]
देव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपनयत् मेध्या दुरंः। आशासानाः मेधेपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बुर्हिः। अन्वेनं माता मन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सर्यूथ्यः। उदीचीनार् अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नवंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छांतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसो वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाह्॥१४॥

श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षिट्वरेशितरस्य वङ्कायः। ता अनुष्ठ्योच्यावयतात्। गात्रं गात्रमस्यानूनं कृणुतात्। ऊवध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्रा रक्षः सर्मुजतात्। वृनिष्ठमस्य मा राविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवंच्छमितारः। अधिगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंध्रिगो। अधिगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना शमीष्वमंधिगो। ताविमं पशू श्रंपयतां प्रविद्वा श्मौ। यथायथाऽस्य श्रपण्नतथांतथा॥१६॥ भूण्वाह् म र्याव्यु वयांतथा॥ [६]

जुषस्वं सुप्रथंस्तमम्। वचो देवफ्संरस्तमम्। हृव्या जुह्वांन आसिनं। इमं नो

यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमभ्रे मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववीतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य इंस्तोका घृतश्चतः। अग्रे विप्रांय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिर्मिध्यसे। युज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य इंश्वोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्रे मेदंसो घृतस्य। कृविश्नस्तो बृंहता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृतम्। प्र ते वयं देदामहे। श्वोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंह॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अवीक्। युवर राधोभिरक्वेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतम्त्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागस्य वृपाया मेदंसः। जुषेतार्रं हृविः। होत्र्यजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥ नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्मम्। स वां धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता १ हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरं दूत्यांय। हिविष्मन्तः सदिमन्मानुषासः। यस्यं देवैरासंदो ब्र्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मे सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्निम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

प्जातान्त्रिके पं॥—————[८]

गीर्मिर्विप्रः प्रमितिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्री वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म रश्मी १रिति नार्धमानाः। पितृणा १ शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणाया उपस्थै। अग्नि १ सुद्देशे गृणन्तेः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमेर्ति १ हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

त्वः ह्यंग्ने प्रथमो मनोतां। अस्या धियो अभवो दस्महोतां। त्वः सीं वृषन्नकृणोर्दुष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्।

इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नरंः प्रथमं देवयन्तंः। मृहो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिवसव्यैः। त्वे रियं जांगृवा १सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशन्तमृग्निं देर्शृतं बृहन्तम्। वृपावन्तं विश्वहां दीदिवा सम्म। पृदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रवस्यवः श्रवं आपृत्रमृक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे यृज्ञियानि। भृद्रायां ते रणयन्त् सन्दृष्टौ। त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्याम्। त्व रायं उभयांसो जनानाम्। त्वं त्राता तरणे चेत्यों ऽभूः। पिता माता सदिमन्मानुषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां व्यं दम् आ दीदिवा सम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां व्य स्पृधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देव्यन्तंः। त्वं विशो अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां क्विं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्भं चंर्षणीनाम्॥२४॥ प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजन्तमग्निं यंजत रंपीणाम्। सो अंग्न ईजे

प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तरः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शशमे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां हुव्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतंः। अस्मा उं ते महिं महे विधेम। नमोभिरग्ने समिधोत हुव्यैः। वेदीसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्राया ५ सुमृतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्ततन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुंतः। बृहद्भिर्वाजैः स्थिविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वित्रं वि भाहि। नृवद्धंसो सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनंयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृह्तीरारे अंघाः। अस्मे भृद्रा सौश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसुं विधृते राजनित्वे॥२६॥

जागुवारसो अनुम्मान्त्रिपणाश्रपणीना योगायान्ने वी।

[१०]

आभेरतः शिक्षतं वज्रबाह्। अस्माः इंन्द्राग्नी अवतः शचींभिः। इमे न ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य हिवषु आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शृतरुद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां

पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उथ्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत पुवेन्द्राग्नी। जुषेता १ ह्विः। होतुर्यजं। देवेभ्यो वनस्पते ह्वी १ षिं। हिरंण्यपर्ण प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां नियूयं। ऋतस्यं वक्षि पृथिभी रजिष्ठैः। होतां

यक्षद्वनस्पतिम्भिहि। पृष्टतंमया रभिष्ठया रश्ननयाधित। यत्रैंन्द्राग्नियोश्छागंस्य हिवर्षः प्रिया धामांनि। यत्र वनस्पतैः प्रिया पाथार्रसे। यत्रं देवानांमाज्यपानौं प्रिया धामांनि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीयारसमिव कृत्वी॥२९॥ करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषतार्र हिवः। होत्र्यजं। पिप्रीहि देवार

करदेवं देवो वनस्पतिः। जुषतारं ह्विः। होत्रर्यजं। पिप्रीहि देवारं उंशतो यंविष्ठ। विद्वारं ऋतूरं ऋतुरं ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्रस्तेभिंरग्ने। त्वरं होतॄणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्निः स्विष्टकृतम्। अयांड्ग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतैः प्रिया पाथारंसि। अयाङ्ग्वानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्।

आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषतार् हिवः। होतुर्यजं॥३०॥

उपों ह् यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषंः प्रिया धामांनि॥३१॥

अयाङ्गन्स्पतैः प्रिया पाथार्स्स। अयाङ्गेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंदग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्य्यं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषतार् ह्विः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्वर हि यज्वा। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

देवं बर्हिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौर्वृज्येताक्तोः प्रभियेतात्यन्यात्राया ब्रहिष्मंतो मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवीर्द्वारं सङ्घाते विङ्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्स ईमेनास्तरुंण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवी उषासानकाऽद्यास्मिन् युज्ञे प्रयत्यंह्वेतामपि नूनं दैवीर्विशः प्रायासिष्टा ५ सुप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुधिती ययोर्न्या-ऽघाद्वेषा ५िस युयवदान्यावंक्ष्रद्वसु वार्याणि यर्जमानाय वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती इषमूर्जमन्यावंक्षथ्सिण्डे सपीतिम्न्या नवेन पूर्वं दयमानाः स्यामं पुराणेन् नवं तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हुताघंश श्सावाभुरद्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरंस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षथ्सरंस्वतीम र रुद्रैर्युज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या

सधुमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवो नराश १ संस्निशीर्षा षंडक्षः शतमिदेन १शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हंतो बृहस्पतिः स्तोत्रमृश्विनाऽऽध्वर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्ज। देवो वनस्पतिर्वर्षप्रांवा घृतिनिर्णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ हीद्वस्वने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेधां ऽसि प्रच्युंतीनामप्रच्युतन्निकाम्धरंणं पुरुस्पार्हं यशंस्वदेना ब्रहिषाऽन्या ब्र्ही इष्यभि ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृथ्सुद्रविणा मुन्द्रः कुविः स्त्यमंन्माऽऽयुजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानम्ने यान्देवानयाुड्या अपिंप्रेर्ये तें होत्रे अमंध्सत तार संसनुषीर होत्रां देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमङ् स्विष्टुकृचाग्ने होताऽभूवसुवने वसुधेयस्य नमोवाके वीहि यजं॥३३॥

देवं ब्रहिः। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु।

देवी उषासानक्तां। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवने वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥

वेवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशक्षंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्रहर्वारितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायजी होतां। होतुंरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमेथ्सत। ता स्सम्नुषी होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषु यज्ञमेरयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥३६॥

[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः पर्चन्युरोडाशंं ब्ध्निन्द्राग्निभ्यां छागरं सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छागेनाघंस्तान्तं मेदस्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशेन त्वाम् द्यर्षं आर्षेय ऋषीणां नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसीं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥३७॥

अप्रिम्होकम्॥———[१

अञ्चन्ति होतां यक्ष्रथ्सिमिद्धो अद्याग्निरजैद्दैव्यां जुषस्वा वृंत्रहणा गीमिस्त्वः ह्याभरतमुपौह यद्देवं बुर्हिः सुदेवं देवं बुर्हिर्ग्निम्घ पश्चंदश॥१५॥ अञ्चन्त्यग्निरहोतां नो गीमिरुपौ हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिरंशत्॥३७॥

- - ः अञ्जन्तिं सूक्ताब्रृंहि॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयित। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। सयदिनिङ्घा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनं कामा नानुप्रयायः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुक्षितयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इतिं। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयान्ति। तेज्स्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चमुद्धृत्यं। मन्सोपंतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव युज्ञ सं तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिंमेवोपैंति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपुक्षायंति। यावुच्छम्यंया प्रविध्येत्। यदि तावंदपुक्षायेत्। त सम्भरेत्। इदं तु एकं पुर उं तु एकम्॥३॥ तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तुनु चारुरिध। प्रिये देवानां पर्मे ज्नित्र इति। ब्रह्मणैवैन् सम्भरित। सेव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामंपक्षायंत्। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं प्रशून्ययः प्रविशति। यस्यं हृविषं वथ्सा अपाकृता धयंन्ति॥४॥ तान् यद्द्द्यात्। यातयांम्रा हविषां यजेत। यन्न दुद्यात्। य्ज्ञपुरुन्तरियात्।

वायव्यां यवागूं निर्विपेत्। वायुर्वे पर्यंसः प्रदापियता। स एवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे॥५॥ अथोत्तंरस्मै हिविषे वथ्सानपाकंर्यात। सैव ततः प्रायक्षित्तः। अन्यतरान वा

अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृथ्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। अन्यत्रान् वा पृष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयिति। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छति। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं पृवाऽऽरभ्यं गृहीत्वोपं वसित। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मै समीची दधाति। पयो

वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वथ्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यज्ञंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमार्च्छतिं॥७॥

पुन्द्रं पश्चेशरावमोदनं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निम्ंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभयीः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै हृविषं वथ्सानपार्कुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्ये-ऽह्न्यत्यंनालम्भुका भवंति। तामंपुरुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुष्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्ध पुवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥ वृधाति युत्र उत् एक्अयंति रूथे कुर्यादाच्छंत्यपाकुंयात्रियेतं विमष्टो चं (सर्वान् वि वे यदि परस्त्ररामोपंधीरन्यत्ररानुभयांन्धी वे॥॥——[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्यय्चां वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वृल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्याह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजमानः स्यात्। यदनांयतने निनयैत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयुर्चाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदवंवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्श्वसो वाँ। यत्प्रत्येयात्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुंहुयात्। मित्रो जनान्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥ मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनिमिषाऽभि चंष्टे। सृत्यायं हृव्यं घृतवंज्ञहोतेतिं। मित्रेणैवैनित्कल्पयित। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यत्पूर्वस्यामाहृत्या हृतायामृत्तराऽऽहृंतिः स्कन्दैत्। द्विपाद्भिः पृश्मिर्यजमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामांनि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पृत्यय्चां समिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यातां चानांतां चाऽऽहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गांरः स्कन्देत। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक ई स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रें च पित्रिये च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदुद हुं। अग्नीधे च पृशुभ्यश्च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रोंऽस्य पृशून्धातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशांन्तः

प्राङङ्गारो यद्क्षिणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्कं॥)॥

प्रह्लियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नर्मस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हि रंसीर्मुं मा हि रंसीर्मुं मा हि रंसीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्भो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्थ्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेति। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥१६॥
व प्रजापंतिः स्थापयि प्रजानक्रि ज्ञह्मप्रसांद्रियेत जहांम् श्रीणे च (यद्विष्यंणेन प्राजापुत्यम् यत्कीटा मध्यमेन यदवेष्टेन यत्प्वंस्यां यत्पुग प्रयाजेन्यः

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निर्म्थ्यमांनो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायाः होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्यांश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्।

तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निवैश्वान्रः। यद्ग्राह्मणः। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंसत्ये नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्राह्मणं वंसत्या अंपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तं भांगुधेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माद्गाह्मणो वंसत्ये नाप्रध्यः। यदि ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याग्निहोत्र हतं भवति। दुर्भा इस्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँदुर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दुर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां स्वेवास्यां ग्रिहोत्र हुतं भवित। आपुस्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवापस्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिंचक्षीत। तस्मादापो न पंरिचक्ष्याः। मेध्यां

च वा एतस्यमिध्या चं तनुवौ स॰ सृंज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयंः स॰सृज्यन्तें। अग्नये विविचये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। मध्यां चैवास्यांमेध्यां चं तनुवौ व्यावंत्यति। अग्नयें व्रतपंतये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव व्रतपंतिकुं स्वेनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लंग्भयति॥२१॥

गर्भ्ड्रं स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा एतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्निहोत्रम्। तद्यथ्स्रवैत्। रेतौऽस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंक्रित्यांह। रेतं एवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रंतोधाः। रतं एव तद्दंधाति। इन्द्र् इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनानार् रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पित्रित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणैवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥
अजाऽग्रावेवास्यांग्रिहोत्र हुतं भवित भवत्यासीत परिचक्षीत लम्भयित दर्धात देवानां बृहुस्पतिः पश्चं च (वि वे यद्यन्यम्जायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बंऽपस् हॉत्व्यम्।)॥———[३]

याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाध्सर्वतंश्च याः। ताभी रिष्मपंवित्राभिः। श्रद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनंस्स्पतिंना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्र युंज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम आभृतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नियतुम्। वर्कलमन्तिरमा देदे। आपो देवीः शुद्धाः स्थे। इमा पात्रोणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानाम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियास्। पयो वथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्केन। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अभि गृह्णामि सुरथं यो मयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहें। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिंरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाः। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये

प्रविष्टाः। तान्देवान्परि गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरिदमें षां मियं। आमावास्य हिविरिदमें षां मियं। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस स्सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पितृणामृग्निः। अवाङ्ख्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं केरत्। अर्जस्रं त्वा॰ संभापालाः॥२८॥

विज्यभांगुर् सिमंन्धताम्। अग्नें दीदांय मे सभ्य। विजित्यै श्ररदेः श्तम्। अन्नंमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्ररदेः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिंर्बुध्नियो नि यंच्छत्। इदमहम्ग्निज्येष्ठिभ्यः। वस्भयो यज्ञं प्रब्नंवीमि।

इदमहमिन्द्रंज्येष्ठेभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंवीमि। इदमहं वर्रुणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों युज्ञं प्र ब्रंवीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

वृतानां व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमि सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशुष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्परिधी इस्तिस्रः स्मिधंः। यज्ञायुरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणुं धृष्टिम्। सं भरामि सुस्म्भृतां। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥ आच्छेता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्रतम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमचनाहम्। पुनंरुत्थायं बहुला भवन्तु। सकुदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सीदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृंतमम्। पयों ह्व्यं करोतु मे। इमौ प्राणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वशः। आप्याययंन्तौ सश्चरताम्। प्वित्रे हव्यशोधंने। प्वित्रे स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजंमान्मिपं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतांरौ। पिवित्रं हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जायते विश्वदानिः। अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सं तनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवेय र र ज्ञुंरिभधानीं। अष्ट्रियामुपं सेवताम्। अप्रस्न रसाय यज्ञस्यं। उखे

उपंदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधे। उपवेषोऽसि यृज्ञायं। त्वां पंरिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शग्मो भवासि नः॥३६॥

अमृन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः प्वित्रमितनीताः। आपो धारय मातिंगुः। देवेनं सिवत्रोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिः। गां दोहपिवत्रे रज्जम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चरन्ति मधुंमृद्दुहानाः। प्रजावंतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयक्ष्मा वंः प्रजया स॰ सृंजामि। रायस्पोषेण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यृज्ञं पृंथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायः। यजंमानाय द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलश्ं चतुंर्बिलम्। इडां देवीं मधुंमती स्वविदम्। तिदेन्द्राग्नी जिन्वत स्मृनृतांवत्। तद्यजेमानममृतृत्वे देधातु। कामधुक्षः प्रणौं ब्रूहि। इन्द्रांय

ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्यां देवानांम्। मृनुष्यांणां पयों हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यो मनुष्येभ्यः। पुनुर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सं तंनोमि। अदंस्तमिस् विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छत्॥४०॥

पूर्णवृत्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना रं हव्यशोधनौ। प्रात्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्यर हि रक्षंसि। उभावग्नी उपस्तृणते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृश्न्॥४१॥ अत्रंत इमें गृंहाम् पूर्वस्ताः पूर्वः परिगृह्णामे सभापाला इन्द्रंज्येष्टेश्य आदित्य व्रतपते सुसम्भृतां में सह पुंनातु गहि नो विश्वरूपा दथातु पुनर्गच्छतु पृश्न (यः पुरस्तांदिमामूर्जामेह पूजा इह पृश्वोऽयं पितृणामृक्षिः।)॥———[४]

देवां देवेषु पराँक्रमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद॰ शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषुजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदम्हर सेनाया अभीत्वंर्यै॥४२॥ मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भाहि। मृह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः।

अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खर्मङ्क्षाः त्वचंमङ्काः सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घारयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। व्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्स्नांति जिन्ता मतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवानांच्छ सुवंविन्द यजंमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्न्तरेमि। स्वं मं इष्टश् स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तश् स्वश्रान्तम्। स्वश्रुतम्। तस्यं मेऽग्निरुपद्रष्टा। वायुरुपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेर्मा संविंक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भूरतमुद्धरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनः॥४६॥

आज्येन् प्रत्येनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यायतां पुनः। अज्यायो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्ये। शुद्धः स्विष्टमिदः ह्विः। मन्नेना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्येकतोम्खाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्यौस्ते भिक्षवाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रिप्तिंरिस। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पन्तां मे दिशंः॥४८॥

दैवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। संवथ्सरो में कल्पताम्। क्लिरिसे कल्पंतां मे। आश्चानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां व्यम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्तः। निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्वः। ओषंधीर्जिन्वः। द्विपात्पाहिः। चतुंष्पादवः। दिवो वृष्टिमेरंयः। ब्राह्मणानांमिदः हविः॥५०॥

सोम्याना रे सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्रांह्मणः। नेहा ब्रांह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समांदित्यैर्वसुंभिः सं मुरुद्धिः। सिमन्द्रेण् विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छत् यथ्स्वाहां। इन्द्राणीवांविधवा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरातीः। दिवि ज्योतिर्जर्मा रंभेताम्। दशंते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजमानो घृतेनं। नारिष्ठयोः प्रशिषमीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जी भाग शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम शहरौ। अहं देवाना श्रमुकृतांमस्मि लोके। ममेदिमृष्टं न मिथुंभवाति। अहं नारिष्ठावनुं यजामि विद्वान्। यदाँभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भाग्धेयम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् युज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नों विदद्भिभामो अशंस्तिः॥५३॥

मा नो विदद्वुजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता ए सुवीर्यम्। रायस्पोष ए सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता ए सुवीर्यम्। रायस्पोष ए सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहां। अभि स्तृणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि एसीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजमानस्य ब्रध्ने॥५४॥ अभावं क्योम क्योख्वाऽऽत्मं एक्तो स्वा मे वियोऽप्रक्षेत्ये ह्विगांख्यवा कल्पव्यवस्थितः सा नो वेहता सुवर्ष स्व वे॥——[५]

परिंस्तृणीत् परिंधत्ताग्निम्। परिंहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपार् रस् ओषंधीनार सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामृदुघाः। अमुत्रामुष्मिं ह्योके। भूपंते भुवंनपते। मृह्तो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिर्हं भुवंनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवेन सिवता प्रसूत आर्त्विज्यं किरष्यामि। देवं सिवतरेतं त्वां वृणते। बृह्स्पितिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तद्हं मनसे प्र ब्रंबीमि। मनों गायित्रयै। गायत्री त्रिष्टुभें। त्रिष्टुज्ञगंत्यै। जगंत्यनुष्टुभें। अनुष्टुक्पृङ्क्षी। पृङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवभ्यः। विश्वें देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भृवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मंनुष्याणाम्। बृहंस्पते यृज्ञं गोपाय। इदं तस्में हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनंसा तपस्वी॥५७॥ अन्तर्दूतश्चरित मानुंषीषु। चतुंः शिखण्डा युव्तिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। मुर्मृज्यमाना महुते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा महिमानं पुपोष। ततो देवी वर्धयते पया स्ति। यृज्ञियां यृज्ञं वि च यन्ति शं चं।

ओर्षधीरापं इह शक्वरिश्च। यो मां हृदा मनसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदयेनेष्णता चं। तस्यैन्द्र वर्न्नेण् शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्टः सदेनाय बर्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमानः हि धेहि। मां नाकंस्य पृष्ठे पर्मे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे शुग्मा चैंधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इषुमूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्षुत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंरुन्नाद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पश्नमें पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् युज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धूर्ता धुरुणो धरीयान्। अग्निर्द्वेषारेसि निरितो नुंदातै। विच्छिनिद्दी विधृतीभ्यार सपत्नान्। जातान्त्रातृं व्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो युन्नाभ्यां विधमाम्येनान्। अहङ् स्वानां मृत्तमो उसानि देवाः। विशो युन्ने नुदमां ने अरातिम्। विश्वं पाप्मानममितिं

दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मियं धारयतम्। प्रजां मियं धारयतम्। पृश्न्मियं धारयतम्। अयं प्रंस्तर उभयंस्य धृती। धृती प्रंयाजानां मृतानूं याजानां म्। स दांधार समिधों विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पथो जुंह देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुंराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्ं। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमांणाः। दोहैं यज्ञ स् सुदुर्घांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मध्सपत्नाः। यो मां वाचा मनंसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मथ्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्वरः। घृताचीना स्यूनः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृशुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद

पृथिव्याम्न्तरिक्षे। अहमुत्तरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मथ्मपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शृतधार उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। युज्ञोऽसि सुर्वतः श्रितः। सुर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्।

शृतं में सन्त्वाशिषंः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

सुर्वतः श्रितः॥६५॥

सुर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषंः। सुहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। इदमिन्द्रियममृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पशवोंऽचिकिथ्सन्। तेनं

देवा अवतोप माम्। इहेषमूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्। शृतं मियं श्रयताम्।

यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिंश्रुद्धल्मिन्द्रैं प्रजापितिः। इदं तच्छुकं मध्रं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्म दिधा मां धिनोत्। अयं वेदः पृथिवीमन्वविन्दत्। गृहां सतीं गहने गह्वरेषु। स विन्दत् यर्जमानाय लोकम्। अच्छिद्रं युज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं युज्ञः सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

तेनं लोकान्थ्सूर्यवतो जयेम। इन्ह्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयांते। अस्मिन् युज्ञे यजंमानाय महाम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवंनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजित्। वाजं त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिमी अग्निमंत्रादमृत्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामाज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञश् सिम्ममं देधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्ममं नः। विश्वे देवा इह मादयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वािमे। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीवैर्देवा नि वृश्चत॥७०॥ अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वा इस्तानेग्ने सन्देह। या इश्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजित्। वाजें त्वा ससृवा इसम्॥७१॥

वार्जं जिगिवा सम्मै। वाजिनं वाजितम्। वाजितित्यायै सम्मौर्जि। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिर्ब्रहः शृत हिवः। इध्मः परिधयः सुर्चः। आर्ज्यं यज्ञं ऋचो यजुः। याज्यां श्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मसन्नहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तर्रं शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोचतु। ओषंधे मो अहर शुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥ सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यिर्द्धमनु सन्तिष्ठस्व।

उपं ते यज्ञ नर्मः। उपं ते नर्मः। उपं ते नर्मः। त्रिष्फुलीऋियमांणानाम्। यो न्युङ्गो अविशिष्यंते। रक्षंसां भागुधेयम्। आपुस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच शूर्पें। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालें। अवप्रुषों विप्रुषः संयेजािम। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्ति बह्धीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुता जुहोिम। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहा निम्रोचन्नधंरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य।

॥ हृद्रोगघ्न-मन्त्राः॥

उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नुत्तंरां दिवम्ँ। हृद्रोगं मर्म सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्ँ। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हुरिमाणुं नि दंध्मसि। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहंसा

सह। द्विषन्तुं ममं रन्थयन्। मो अहं द्विषतो रिधम्।

यो नः शपादशंपतः। यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निम्नुक्नं। सर्वं पापः समृहताम्॥७७॥

यो नंः सपत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मसश्शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विश। मैषां कश्चनोच्छिषः॥७८॥

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरृदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पनिष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरंष्ठो अक्षभिर्विभाति। अनु द्यावांपृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षुत्रस्य योनिः। क्षुत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रद्धां मनसा। दीक्षां तपसा। विश्वस्य भुवनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य

सन्तु। वार्तं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्नायतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायत्रीं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर त्रिष्टुभुं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर जर्गतीं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुभुं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर पङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चे मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिरभूवः सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्रध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमन् दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमन् दीक्षताम्। द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमन् दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्का दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणुमन् दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे

दक्षंपितेह सींद। देवाना र् सुम्नो मंहते रणांय। स्वासस्थस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सत्यं मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। सृत्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममासि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोक्कृज्ञांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थ्सधस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥

विश्वं देवा यजमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चृत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्ताभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सर्वायः सप्तपंदा अभूम। स्ख्यं ते गमेयम्॥८९॥

सुख्यात्ते मा योषम्। सुख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी

पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्तेऽन्तिरिक्षं पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पार्दः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न् इष्मूर्जं धुक्ष्व। तेजं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु र सुदुघामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबत्। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती र रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्व। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका भुवनस्य मध्ये। तस्याः सुपणांविध्यो निविष्टो। तयोदिवानामधि भाग्धेयम्। अप जन्यं भ्यं नुद। अपं चक्राणि वर्तय। गृह १ सोमस्य गच्छतम्। न वा उ वेतन्प्रियसे न रिष्यसि। देवा १ इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्र त्वा देवः सविता देधातु॥९२॥ ब्रह्मणे योन्रिरःहंसः पृक्कः प्रथे वीक्षा ययाऽऽदित्यो वीक्षयां वीक्षितस्तयां त्वा वीक्षयां वीक्षयाम्योपयां वीक्षा बोस्त्वा वीक्षतामपंचितिश्राक्षितिकत्तरस्मन्यमेयं विश्वः पार्वः आदित्यवंतीं वर्तयः पश्चं च॥——[७]

यदस्य पारे रर्जसः। शुक्रं ज्योतिरजायत। तन्नः पर्षदित द्विषः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभंयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभंयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषें। उद्ग्रं तिष्ठ प्रतिं तिष्ठ मारिषः। मेमं यृज्ञं यर्जमानं च रीरिषः। सुवर्गे लोके यर्जमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञौस्थाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषें॥९४॥

य इदमकः। तस्मै नमः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतन्त्रियसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहंतस्य च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

घोषेणामीवाङ्श्चातयत॥९६॥

कृष् में क्षेत्रहंतस्य च सन चंन्न चंन्न चन्न चन्न चन्न चन्न हिन्देण प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्व १ श्वभूः। मित्रस्तं अस्त्व १ श्वभूः। वर्रणस्ते अस्त्व १ श्वभूः। अपाङ्काया ऋतंस्य गर्भाः। भुवनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतों नपातारः। वृग्नुनेन्द्र १ ह्वयत।

युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्थस्थांत्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आसुंषवुः। समरे रक्षाः स्यविषयुः। अपंहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्च त्वा बर्लं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ञ्ररा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोंऽसि शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यिमन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यिदंन्द्रियं महत्। मिय दक्षो मिय ऋतुः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भातु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमिह॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्प्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्र ते महे विदर्थे शश्सिष् हरीं। य ऋत्वियः प्र ते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरंः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्वरुंणश्च राजां। तो ते भृक्षं चंऋतुरग्रं पृतम्। तयोरनुं भृक्षं भंक्षयामि।

वार्जुषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापंतिर्विश्वकर्मा। तस्य मनो देवं यज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमो रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयेने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित तर हुंवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मि। यमस्यं बिलिना चरामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्पथो अंनृणा आक्षीयेम। इदमून श्रेयोंऽवसान्मा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोमृद्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरैरनु सश्चरेम। अर्कः प्वित्र रजंसो विमानः। पुनाति देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुंहाते अमृतं प्रपीने। प्वित्रंमकों रजंसो विमानः। पुनाति देवानां भुवंनानि विश्वां। सुवर्ज्योतिर्यशों महत्। अशीमिहं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

चत्यत् श्रेणितः सत्यमहर्रणमिह ग्णे क्रं विद्रवेण पितृयाणं अर्को रजंसो विमानकीणि च॥————[९]
उदंस्ताम्पसीथ्सविता मित्रो अंर्यमा। सर्वानमित्रानवधीद्युगेनं। बृहन्तं
मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व

मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तिरक्षे। बृह्ति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृह्ता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्ठया यूयं दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रुपसो यस्तं उद्रुषः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ठ्ये स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वं देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दार्श्वस निविदो यज्र्र्श्व। अस्य पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तनिमन् वर्तस्व। अनुंवीरैरन् राध्याम् गोभिः। अन्वश्वरनु सर्वेरु पृष्टेः। अनुं प्रजयाऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों युज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिंक्ष्त्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वंषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिं तिष्ठामि भव्यें। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तद्न्यस्यामधिश्रितम्। दिवे चं विश्वकंर्मणे। पृथिव्यै चांकरं नर्मः। अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कांनृषभो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नमा विश्वा भुवना। स्कन्नो यज्ञः प्र जनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञायते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमिह। ये देवा येषांमिदं भागधेयं बुभूवं। येषां प्रयाजा उतानूयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वर्रुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मितिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप स्निधंः। शम्प्रिरिग्निस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपींषते। विश्वांनि विदुषे भर। अरङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्दघ्वने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रों- ऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपंहूत्स्योपंहूतो भक्षयामि॥११०॥

ुदुर्ष इंद्रियेण गा मुतिरंर्पा अंग्रतीर्ण च॥————[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं यज्ञाना १ हविषामाज्यस्य। अतिरिक्तं

कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितमृत्याश्रांवितम्। वषंद्भतमृत्यनूँक्तं च युज्ञे। अतिंरिक्तं कर्मणो यर्च हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥ यद्वी देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा १ अभिदुंच्छुनायतैं। अन्यत्रास्मन्मंरुतस्तन्निधेतन। तृतं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचर्याय शस्यते। अयर संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समृतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्यिर्परि। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजांपते। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु श्ररदंः पुरूचीः। तिरो मृत्युं देधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषुडिनिष्टेभ्यः स्वाहाँ। भेषुजं दुरिष्ट्ये स्वाहा निष्कृत्ये स्वाहाँ। दौराँध्यें स्वाहा दैवीँभ्यस्तुनूभ्यः स्वाहाँ॥११३॥

ऋद्धै स्वाह् समृद्धै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृधि। मधंवञ्छ्ि तव तन्नं ऊतयेँ। वि द्विषो वि मृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पितिः। वृत्रहा वि मृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनाजातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। युज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतां ऋतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा १ ऋतुशो यंजाति॥११५॥ विवाशक्षितं वृत्तस्य स्वाहानं पुरुषसम्मितोऽशे तदंस्य कल्पय पर्व वा

यद्देवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यर्तेन्

मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकुम। कुरोतु मामनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। ऋतान्मां मुश्रुता॰हंसः। यद्न्यकृतमारिम। सृजात्शृ॰सादुत वां जामिशृ॰सात्। ज्यायंसः श॰सांदुत वां कनीयसः। अनांज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्यांम्॥११७॥

शिश्ञैर्यदर्नृतं चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्तौभ्यां चकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां वृग्नुमुंपजिघ्नंमानः। दूरेपश्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानिं। अदीं व्यत्रृणं यद्हं चकारं। यद्वादौस्यन्थ्सञ्जगारा जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मियं माता गर्भं सिति॥११८॥

एनंश्चकार् यत्पिता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि रसितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भवामि। यदन्तरिक्षं

पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूर्तन् यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अति क्रामामि दुरितं यदेनः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थै। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकृम। करोतु मार्मनेनसम्। दिवि जाता अपम् जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अग्निजा आपंः। ता नः शुन्धन्तु शुन्धनीः। यदापो नक्तं दुरितं चराम। यद्वा दिवा नूर्तनं यत्पुराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुनीत नः। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवध्यारं स्ति पंराशसांऽऽन्शैंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः प्नीत नुस्नीणि च (यहेवा देवां ऋतेनं सजातशृर्साद्यद्वाचा यद्धस्तां-यामदींव्यं यन्मयि माता यदां पिपेष् यदन्तरिक्षं यदाशसाऽतिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपस्य जाता यदापं हुमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने त्वमंग्ने अयासि।

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिदुः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गांनि स्वधिता परू ५ ष। तथ्सन्धथ्स्वाज्यंनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमथ्सङ्कर्यम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवुः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यायतां तत्ते। निष्ट्यायतां देव सोम। यत्ते त्वचं बिभिदुर्यच योनिम्ं। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां॥१२२॥ त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नंः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीर् पर्यसा समेत्यं। अन्योंन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहृतास्तवं स्मः। आ नो भज सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्गिरं आवृणानः। अनांगास्तुनुवों वावृधानः। आ नों रूपं वंहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वां घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या समु चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित् शमु तत्ते अस्तु। जानीतान्नः सङ्गमंने पथीनाम्। एतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

इन्द्रियम्॥१२६॥

परेंहि। नमंस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकमारोंह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्परमे व्योमन्। अभूँद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्नं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भर्जाति मानवेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिर्हेतिः। उग्रा शतापाँष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्तें॥१२५॥ यिददिक्षे मनसा यर्च वाचा। यद्वा प्राणैश्चर्श्वषा यर्च श्रोत्रंण। यद्रतंसा मिथुनेनाप्यात्मनां। अद्भो लोका दंधिरे तेज इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेर्ज इन्द्रियम्। यदुचा साम्ना यर्जुषा। पुशूनां

यदागच्छौत्पथिभिर्देवयानैः। इष्टापूर्ते कृणुतादाविरंस्मे। अरिष्टो राजन्नगदः

शुका दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपों विमोक्कीर्मयि तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म

चर्मन् हविषां दिदीक्षे। यच्छन्दोंभिरोषंधीभिर्वनस्पतौं। अद्भो लोका दंधिरे तेजं

येनं क्षत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन राजां। विश्वं देवा ऋषयो येनं प्राणाः। अन्यो लोका दिधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचनीः। आपो विमोक्कीर्मिये तेजं इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषंधीना र रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषधीना १ रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषधीना १ रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। वय १ सोम ब्रुते तवं। मनंस्तनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नः शीयता १ र्याः। सर्चतां नः शर्चीपतिः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजा १ रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धनिजदेश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नः शीयता १ र्याः। सर्चतां नः शर्चीपतिः॥१३०॥ वनस्पतंत्रको लोका दिन्यु ते जे इन्द्रियं धार्माशीमहीवाभिनः शीयता १ रूथिरकं चा [१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेंऽनागस् उदंस्ताम्फ्सीद्वह्यं प्रतिष्ठा यदेवा यत्ते ग्राव्णाः यदिंदीक्षे चतुंर्दश॥१४॥ सर्वान्भूतिंमेव यामेवाफ्स्वाहृतिं ब्रुतानां पर्णवृत्कः सोम्यानांमस्मिन् यज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः परोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हपत्यिख्रिश्याद्त्तरशतम्॥१३०॥ सर्वाव्यक्ष्यीपतिः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता स् सङ्गृह्णानीतिं। द्वादंशारत्नी रश्ना भंवति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौञ्जी भंवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्जमेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षेत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापत्यः समृंद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रुं वा आपंः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायंते। तदवं रुन्धे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥

चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। उभ्यतोंक्क्मौ भवतः। उभ्यतं प्वास्मिन्नुचं दधाति। उद्धरित शृत्त्वायं। सूर्पिष्वांन्भवति मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्जंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चत्वारि हिर्ण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योतीङ्ष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मित्रश्नान्युनित्ते। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। रेत आज्यम्। यदाज्यं रश्नान्युनित्तं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयित। दुर्भमयी रश्ना भवित। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥ यद्दर्भमयी रश्ना भवित। पुनात्येवैनम्। पूतमेनं मेध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा

यर्द्धम्यी रश्ना भवति। पुनात्येवैनम्। पूतमेनं मेध्यमा लेभते। अश्वस्य वा आलेब्थस्य मिह्मोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वनितं। मिह्मानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वस्य वा आलंब्धस्य रेत् उदंक्रामत्। तथ्सुवर्ण् हरिरण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हिर्रण्यं ददांति। रेतं एव

तद्दंधाति। ओद्ने दंदाति। रेतो वा ओद्नः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतों दधाति॥६॥

इधाति क्ये दर्भा अभवव्यद चं॥

[२]

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बृध्नातिं। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रंतिप्रोच्यं। न देवतांभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यासमितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं ब्रध्नाति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंसव इतिं रशनामादेते प्रसूत्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनों हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यें। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्केण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्येत्यिधं वदित यज्ञंष्कृत्ये। यज्ञस्य समृंद्धौ॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोंदशार्त्नी(३)रितिं। ऋष्भो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋष्भ एष युज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोद्शमंर्त्निः रंशनायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर् सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु क्वयेत्याह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तया देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंर्तते। ऋतस्य सामैन्थ्यरमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। सत्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। युन्ताऽसीत्यांह। युन्तारंमेवेनं करोति। धूर्ताऽसीत्यांह। धूर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वानुरमित्यांह। अग्नावेवेनं वेश्वानुरे जुंहोति। सप्रथस्मित्यांह॥११॥

प्रजयैवैनं पृशुभिः प्रथयति। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं एवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवैनं प्रतिष्ठापयति। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमनो धर्ताऽसि यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयित। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयित। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वरुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः परः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहन्ति। श्वेव वै पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सै्धुकं मुसंलं भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्मै साधयति। पौ्ड्श्चलेयो हंन्ति। पुड्श्चल्वां वे देवाः शुचं न्यंदधुः। शुचैवास्य शुचर्र हन्ति। पाप्मा वा एतमींपस्तीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यति। वुज्री वा अश्वंः प्राजापृत्यः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामति। दक्षिणाऽपं प्लावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्लावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेत्सशाखोपसम्बद्धा भवति। अपस्योनिर्वा अश्वः। अपस्जो वेत्सः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहृत्रितिं ब्रह्मा यजंमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरधज्मित्रत्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजित्ये॥१५॥ भवि अववि अववि पर्व वा व्यावयि विवि पर्व वा [४]

चत्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योंऽभि समीरयन्ति। शतेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्युः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजां वृत्रं वंध्यादितिं। राज्यं वा अध्वर्युः। क्षत्र॰ राजपुत्रः। राज्ये-नैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। शतेनांराजिभेरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अयर राजांऽप्रतिधृष्यों-ऽस्त्विति। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलेनैवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्रामणिभिः सह होतां। पश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनार्श्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वै बंह्वश्वाये बह्वजाविकायैं। बहुव्रीहियवायें बहुमापतिलायैं। बहुहिर्ण्यायें बहुह्स्तिकांयै। बहुदासपूरुषायैं रियमत्यै पृष्टिंमत्यै। बहुरायस्पोषायै राजास्त्विति। भूमा वै होतां। भूमा सूंतग्रामुण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। शतेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्प्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अयः राजा सर्वमायुंरेत्वितिं। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंर्दधाति। शतरशंतं भवन्ति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः शृता भविन्ति। चतस्रो दिशः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उंक्षति दिश एकं च॥___

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

यथा वै हविषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यिन्नक्तमनालब्यमुथ्युजन्ति। यथ्स्तोक्यां अन्वाहं। सुर्वहृतंमेवैनं करोत्यस्कन्दाय।

अस्कंन्न १ हि तत्। यद्धृतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वाहं। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमितमवं रुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपः। ता अवं रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निर्वैश्वानुरः॥२१॥ अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः

सङ्स्थापयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीतिं। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमाय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवैनं जुहोति। सवित्रे स्वाहेत्यांह। सवित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सर्रस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सर्रस्वत्या पुवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण

पुवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय पुवैनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अद्ध एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वर्रुणायैवैनं जुहोति। पुताभ्यं पुवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवात्राद्यमवं रुन्थे। प्र वा पृषोंऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहंतीर्जुहोति। पुनः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। पुता ह वाव सौंऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कन्दाय। अस्केन्न ह ति तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दित॥२४॥

भूभिजित्ये वेशानुः संवित्र पूर्वनं जहाति वायवं पूर्वनं जहाति व्यवते पर वं॥—————[६]
प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीति पुरस्तात्प्रत्यिङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे
देवानामन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादश्वः पशूनामन्नादो
वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ बिर्लिष्ठौ।

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

ओर्ज एवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामोर्जिष्ठो बलिष्ठः। वायवे त्वेतिं पश्चात्। वायुर्वे देवानांमाशुः सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वैभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युंत्तर्तः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं प्रवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवेभ्यस्त्वेत्यधस्तौत्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्युपरिष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरो दधाति। तस्मादश्वः पशूनां त्विषिमान् हर्स्वतंमः। दिवे त्वाऽन्तिरक्षाय त्वा पृथिव्ये त्वेत्यांह। पृभ्य पृवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽन्यस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वेभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मांदश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ् कस्मांदेनम्न्याभ्यो देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीति। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं

यद्विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इति प्रोक्षति। देवतां पुवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

यथा वै ह्विषो गृहीतस्य स्कन्दित। एवं वा एतदश्वस्य स्कन्दित। यत्प्रोक्षितमनालब्धमुथ्सृजन्ति। यदश्वचिरतानि जुहोति। सर्वहृतमेवैनं

यत्प्राक्षित्मनालब्धमुथ्मृजान्त। यदश्वचार्ताान जुहाात। स्वहुतम्वन करोत्यस्केन्दाय। अस्कन्नु हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कृंताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अश्वचरितानि। चरितैरेवैन समर्धियति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अंश्वचिर्तानिं। नैता होत्व्यां इतिं। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानंश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदेश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्माँद्धोत्व्यां इतिं। बहि्धां वा एनमेतदायतनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मे जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्ने ऽन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः पुरस्तां थ्स्वष्टकृतंः। आहुवनीर्यं ऽश्वचरितानिं जुहोति। आयतंन एवास्याऽऽहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। तदांहुः। युज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। युज्ञस्य क्रुस्यैं। सुवृर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इति। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभि्र्यजमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवृगिश्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थस्यादिति। सुकृदेव होत्वयाः। न यजमानं पृशुभिव्यर्धयति। अभि

सुंवर्गं लोकं जंयित। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारि श्वातमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारि श्वातमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारि श्वादक्षरा जगंती। जाग्तोऽश्वः प्राजापत्यः समृंद्धौ। एक्मितिरिक्तं जुहोति। तस्मादेकः प्रजास्वर्धुंकः॥३१॥

अर्थति जन्यति खल्बाहर्जनी शिर्ण वा [८]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अश्वोऽसि हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवैनंमेतत्। तस्माँच्छिष्टाः प्रजा

पारददाति। अश्वाऽस् हयाऽसात्याह। शास्त्यवनम्तत्। तस्माच्छुष्टाः प्रजा जायन्ते। अत्योऽसीत्याह। तस्मादश्वः सर्वान्यशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूनाः श्रेष्ठ्यं गच्छति॥३२॥ प्रयशः श्रेष्ठ्यंमाप्नोति। य पुवं वेदं। नरोऽस्यवांऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचष्टे। ययुर्नामासीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नामधेयम्। प्रियेणैवेनं नामधेयंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्रा चेद्ध्वयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनंं गमयति। अग्नये स्वाहा स्वाहें न्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तुं भ्रातृं व्यमितिं कामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृजिति सर्वत्वाये। देवां आशापाला एतं देवेभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शतं वै तल्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं एवैनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परांं परावतं गन्तों। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेतिं चतृषु पथ्सु जुंहोति॥३४॥

एता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिंरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनुमा

गंच्छिति। तस्मादश्वः प्रमुक्तो बन्धंनं न जहाित। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्यू रक्षंन्ति। तेषां य उद्दं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथु य उद्दं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽब्लौऽश्वमेधेन यज्ञते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतौस्य यज्ञः। चृतुः शृता रक्षिन्ति। यज्ञस्याघाताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥
पुच्छति भुवतः पृथ्य चहिति न गच्चित् वर्ष चा————————[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। स्प्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

स्प्त जुंहोति। स्प्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्थे। त्रीणिं वैश्वदेवानिं जुहोति। चत्वायौद्धहुणानिं। स्प्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥ एकंवि॰शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंवि॰शतिर्वे देवलोकाः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकवि॰शः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षुत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्रस्यं विष्टपम्ं। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गहुणानि जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एषां लोकानां क्रुस्यै। अप वा एतस्माल्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शींर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमुत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः।

सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूँर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठति॥४१॥

हम्ये प्राणान्दीक्षामवं रूप उच्यते कामित तिष्ठति॥
[१०]

प्रजापंतिरश्वमे्धमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैशवदेवान्येवोदंयच्छन्।

यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यंत्यै। स्वाहाऽऽिधमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहाऽधीतं मनसे स्वाहाँ। स्वाहा मनः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेति प्राजापत्ये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्यै स्वाहाऽदित्यै मह्यै स्वाहाऽदित्यै सुमृडीकायै स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये बृहत्यैं स्वाहा सर्रस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सर्रस्वती। वाचेवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रंपथ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिंषाय स्वाहेत्यांह। पृश्वो वै पूषा। पुश्मिरेवैनुमुद्यंच्छते। त्वष्ट्रे स्वाहा त्वष्ट्रें तुरीपांय स्वाहा त्वष्ट्रें पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना ५ रूपकृत्। रूपमेव पशुषुं दधाति। अथों रूपैरेवैनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्युपाय स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञायैवैनुमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तंब्ये सयत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपांय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥———[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवेनं गायत्रियाश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रसिवृत्र एकांदशकपालं मध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभुं माध्यं दिन् सवनम्। माध्यं दिनादेवेन् सवनात्रिष्टुभश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते॥४४॥

अथो मार्ध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँऽऽप्नोति। त्रिष्टुमं छन्दंः। स्वित्र आंसिवृत्रे द्वादंशकपालमपराह्वे। द्वादंशाक्षरा जगती। जागतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँऽऽप्नोति। जगतीं छन्दंः। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेति चतंस्र आहंतीर्जुहोति॥४५॥

चतंस्रो दिशंः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भंवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो

निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदश्वत्थस्याश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवंति। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥

िव्यस्वत्वसोऽपि निर्मिती जुतीत वर्ष वा [१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं देधाति। तस्मौत्पुरा ब्रौह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे राजन्यं इष्व्यः शूरो महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं महिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा राजन्यं इष्व्यः शूरो महार्थोऽजायत। दोग्धी धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्धी धेनुरेजायत। वोढांऽनङ्वानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मांत्पुरा वोढांऽनुङ्गानंजायत। आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मांत्पुराऽऽशुरश्वांऽजायत। पुरंन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माथ्स्री युंवतिः प्रिया भावंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ हु वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। सभयो युवेत्यांह। यो वै पूर्ववयसी। स सभयो युवाँ। तस्माद्युवा पुमाँन्य्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आह् वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिकामे नः पुर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे ह् वै तत्रं पुर्जन्यो वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। फुलिन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फुलिन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै तत्रे पुजाभ्यो योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते॥४९॥

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्नश्वमेधमधत्ता तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदंश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यर्जमानः प्रीणाति। आज्येन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यम्। यदाज्येन जुहोति। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतायै

रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोतिं॥५१॥

मृह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानाः रूपम्। यत्क्रम्बौः। यत्क्रम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्त्रींणाति। धानाभिर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिर्जुहोति। नक्षंत्राण्येव तत्त्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापतेवां एतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपतिमेव तत्प्रींणाति। मुसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा पुतद्देवतांना ।

सक्तुंभिर्मस्स्यैः प्रियङ्गतण्डुलैर्दशान्नांनि द्वादंश।

रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यौर्जुहोतिं। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुत्पडुलैर्जुहोति। प्रियाङ्गां ह वै नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधुः। यित्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशाक्षरा विराट्। विराद्वृध्यस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

बुहोति मर्थना जुहोति पृथ्केर्जुहोति क्रम्बैर्जुहोति प्रयक्तुन्युहेर्जुहोति च्लारि च (अन्नहोमानाऽऽज्यंन्युमर्थन तण्डुलेः पृथ्केर्जुहोति क्रम्बैर्जुनारिः

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षाईस्यजिघा॰सन्। स एतान्प्रजा-पंतिर्नृक्त॰ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षाङ्स्यपाहन्। यन्नक्त॰ होमां जुहोतिं। युज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षाङ्स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जहोति। शरीरवदेवावं रुन्धे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धे। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपंहत्यै। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥ प्राणो वा आज्यम्। उभयतं प्वास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मे स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। द्वाभ्या इ स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावींर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपिरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पृत्र पुत्राहशा इस्याहत्यां विश्वी श्वाय स्वाहेत्यांह स्व वे॥

[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्स्तीत्यांहः। योंऽश्वमेधेन् यजंत् इतिं। अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याङ् स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

एकवदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै।

श्ताय स्वाहेत्यांह। श्तायुर्वे पुरुषः श्तवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्धे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्धे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्धे। समुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

स्मुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्याय स्वाहेत्यांह। मध्यमेवाऽऽप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तमेवाऽऽप्नोति। प्रार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्धमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्ये स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावं रुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्ये स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवृर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

पुक्ति प्रयुति प्रयुति प्रयुति प्रयुति प्रयुति स्वहत्यहिः सम ची [१६] विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्येश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्युंद्रावाञ्चहोति। सर्वमेवैन्मस्कन्न र

सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेतिं पूर्वहोमाञ्जहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेतिं पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव

द्विषन्तं भ्रातृंव्यमतिं क्रामति॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्येकिविश्शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठ्ये। भुवो देवानां कर्मणेत्यृतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयित। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेति

जुहोत्यनंन्तरित्यै॥६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यैं। भूतं भव्यं भविष्यदिति पर्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्ये। आमें गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपो- उन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानिं जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामिति॥६५॥

द्द्धः स्वाह्य हनूँभ्या्ड् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुंषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मनस्तेनं मुञ्जति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन्ड् समंध्यति। ओषधीभ्यः स्वाह्य मूलेंभ्यः स्वाहेत्यांषधिहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेंभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेंभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी्रवं रुन्धे॥६६॥

वनस्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जुंहोति। आरण्यस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धै। मेषस्त्वां पचतैरंवत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्थे। कूप्याँभ्यः स्वाहाऽन्धः स्वाहेत्यपा १ होमाँ अहोति। अपसु वा आपः। अत्रं वा आपंः। अद्धो वा अन्नं जायते। यदेवाद्धोऽन्नं जायंते। तदवं रुन्धे॥६७॥ पूर्वेदीक्षा जीहोति पूर्व पृव द्विपन्तुं आर्तृब्युमिति कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रुन्थे जायंत एकं च॥——————————[१७] अम्भार्रस जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्रस। तस्य वसवोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भारंसि जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्धे। वसूनार् सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्धे। नभार्रस जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्रसि॥६८॥ तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभार्श्स जुहोतिं। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणा सायुं ज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महा रेसि जुहोति। असौ वै लोको महा ५सि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥ यन्महा रेसि जुहोति। अमुमेव लोकमर्व रुन्धे। आदित्यानार् सार्युज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्धे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेति यव्यानि जुहोति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। मृयोभूर्वातों अभि वांतूस्ना इतिं गुव्यानिं जुहोति। पृशूनामवंरुद्धै। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै॥७०॥

सिताय स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्तौ। पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्याह। यथायजुरेवेतत्। दत्वते स्वाहाऽदन्तकाय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनिक्ति स त्वां युनिक्तिते परिधीन् युनिक्ति। इमे वे लोकाः परिधयः। इमानेवास्मै लोकान् युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ठ्ये॥७१॥

यः प्राणतो य आत्मदा इति मिह्मानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महिः। सुवर्गमेव ताभ्याँ लोकं यजमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जिज्ञ बीजिमिति जुहोत्यनन्तिरत्यै। अग्नये समनमत्पृथिव्ये समनमदिति सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भविष्यते स्वाहिति

भूताभव्यौ होमौं जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदऋंन्दः प्रथमं जायंमान इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याऽऽह्यैं। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाँऽऽप्नोति। सर्वं जयति। योँऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥ य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स पुतान्प्रजा-पंतिर्नक्त १ होमानंप १ यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षा रूप्यपाहन्। यन्नंक्त १ होमाञ्जहोति। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा इस्यपहिन्ति। उपसे स्वाहा व्युं छैं। स्वाहेर्त्यन्ततो जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेछौ॥७४॥ वै नभारसि सूर्यो ज्योतिः सन्तंत्यै समंध्ये भूतं यजंते नवं च॥=

पुक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपो भवन्ति। पुक्वि १ शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपो भवन्ति। राज्ञंदाल एकंवि १ शत्यरिवरश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेजनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षुशाखायांमृन्येषां पशूनामंव्द्यन्ति। वृत्सुशाखायामश्वंस्य। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्व पृवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पुशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरुण्यान्धांरयन्ति। पुशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पुशूङ्गंनन्ते। प्रार्ण्यान्ध्नंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥ अश्वंस्य व्यावृत्त्ये॥ श्वाम्यान्पुशूङ्गंनन्ते। प्रार्ण्यान्ध्नंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥ (१९)

राज्ञंदालमग्निष्ठं मिंनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवाव्भितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्धस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहृत्यामेवास्मादपहत्यं। पुण्यंन गुन्धेनोंभ्यतः परिं गृह्णाति। षड्डेल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। षद्धांदिराः। तेज्सोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोमपीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यौ। शृतं पृशवो भवन्ति॥७८॥

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

शतायुः पुर्रुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अंश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांथ्युत्यात्। दक्षिणतोंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तरतोऽश्वस्येतिं। वारुणो वा अर्थः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यति। शतदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंऽग्नावधिं वैतसे कटेऽश्वं चिनोति। अफ्सुयोंनिर्वा अर्थः। अफ्सुजो वेत्सः। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तात्प्रत्यश्चं तूपरं चिनोति। पश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्चौ दधाति। अर्श्वं तूपरं गोंमृगमितिं सर्वहुतं एताञ्ज्होति। एषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुहोति। सात्मानमेवैन्र् सर्तन् करोति। सात्माऽमुप्मिँ होके भवति। य एवं वेदं। अथो वसीरेव धारां तेनावं रुन्थे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इंलुवर्दः। परि-

पुक्वि १ शोँ ऽग्निर्भवित। पुक्वि १ शः स्तोमंः। एकंवि १ शित्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषाणः सङ्स्फुरेरन्। पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुरेन्ते। यदेकिवि १ शाः। ते यथ्संमुच्छेरन्। हुन्येतांस्य यज्ञः। द्वादशः पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वादशः स्तोमंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशों ऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशांक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्बांदशौंऽग्निः स्यांद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकविश्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शः स्तोमः। एकविश्शतिर्यूपौः। यथा प्रष्टिभिर्याति। तादगेव तत्॥८४॥ यो वा अश्वमेधे तिस्रः क्कुभो वेदं। क्कुद्ध राज्ञां भवति। एक्वि १ शाँ ऽग्निर्भवति। एक्वि १ शाँ ऽग्निर्भवति। एक्वि १ शाँ एक्वि १ शाँ । एका वा अश्वमेधे तिस्रः क्कुभंः। य एवं वेदं। क्कुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि वेदं। शिरो ह राज्ञां भवति। एक्वि १ शाँ ऽग्निर्भवति। एक्वि १ शाँ एक्वि १ शाति प्तानि वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि। य एवं वेदं। शिरो ह राज्ञां भवति॥८५॥ ब्राह्मः स्तोमः स एवं तिस्वरं ह राज्ञां भवति पर वं॥ [२१]

देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्ये। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्रायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैनमर्श्वः सुवृगं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंमुन्वा रंभन्ते। सुवृगंस्यं लोकस्य सम्ष्यै। हिं करोति। सामैवाकः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथो ऋख्सामयोरेव प्रति तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजास्ं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वे प्शून्नियुञ्जन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। अश्वं तूपरं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति।

तस्मौद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्नीवं पुरस्तौह्नलाटैं। पूर्वाग्निमेव तं कुंरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाभ्रिं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चमैं। अत्रुं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै राजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राज्नन्यौऽन्नादो भावुंकः। आ्रभ्रेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्ञन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथौ स्वथ्योः। स्वथ्योर्व वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथों क्वचें एवेते अभितः पर्यूहते। तस्मौद्राज्ञन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृंषोद्रस्पधस्तौत्। प्रतिष्ठामेवेतां कुंरुते। अथों इयं वै धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छें। उथ्सेधमेव तं कुरुते। तस्मौद्ध्येधं भ्ये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

साङ्ग्रहण्या चतुंष्टच्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथा निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिनं किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिदेवेभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीपसित विभूरंश्वनामान्यम्भाईस्येकयूपो राज्ञुंदालमेकविर्शा देवाः पुरुंपुस्रयोविरशितः॥२३॥
साङ्ग्रहण्या तस्मांदश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राज्ञन्यं एकंनवितः॥९१॥
साङ्ग्रहण्या सःश्रृंयन्ति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सोंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायंङ्क। तमाप्तोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवांरुन्थ। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञमेव तैरास्वा यजमानोऽवं रुन्थे। संवथ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरौंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलभ्यन्तें। संवथ्सरमेव तैराह्वा यजंमानो-ऽवं रुन्धे। अग्निष्ठेंऽन्यान्पशूनुंपाक्ररोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवन्वालभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदारण्येः सर्थस्थापर्यंत्। व्यवस्थेतां पितापुत्रो। व्यथ्वानः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तो स्याताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरेण्येष्वाजायेरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांरण्याः। यदांरण्येः सर्थस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानुमरेण्यं मृत १ हरियुः। अरेण्यायतना ह्यांरण्याः पृशव इति। यत्पृशून्नालभेत।

तैलीकमवं रुन्धे। यदारण्यान्॥५॥

अनेवरुद्धा अस्य पुशर्वः स्युः। यत्पर्यम्निकृतानुथ्मृजेत्॥३॥

हैरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थापयित। एते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वांनः क्रामन्ति। समन्तिकं ग्रामयोर्ग्रामान्तौ भवतः। नर्क्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरेण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

क्रानः स्वातम्प्युकेष्यंत्काणि च॥

[१]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एतानुभयान्पशूनंपश्यत्।
ग्राम्याङ्श्चारण्याङ्श्चं। तानालंभत। तैर्वे स उभौ लोकाववांरुन्ध। ग्राम्यैरेव

यज्ञवेशमं कुर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पृशूनवं रुन्धे। यत्पर्यम्भिकृतानुथ्मृजत्ययं

अवंरुद्धा अस्य पुशवो भवंन्ति। न यज्ञवेशसं भवति। न यजमानमर्णयं मृतः

अमुं तैः। अनेवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्याहुः। य इतर्इतश्चातुर्मास्यानिं संवथ्सरं प्रयुङ्क इतिं। एतावान् वै संवथ्सरः। यचातुर्मास्यानिं। यदेते चातुर्मास्याः

पशुभिरिमं लोकमवारन्थ। आरण्यैरमुम्। यद् ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव

पृशवं आलुभ्यन्तें। प्रत्यक्षंमेव तैः संवथ्सरं यजंमानोऽवं रुन्धे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुक्के। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापंराध्नोति। प्रजा वै पृशवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादशिनाः पृशवं आलुभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृशून् यजंमानोऽवं रुन्धे। प्रजापंतिर्विराजंम-सृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविशत्। तान्द्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्तां दिशिभिरवांरुन्धः। यद्दिशनं आलभ्यन्ते॥७॥

विराजंमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्थे। एकांदश दशत आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्ठुप्। त्रैष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावं रुन्थे। वैश्वदेवो वा अर्श्वः। नानादेवत्याः पृशवं भवन्ति। अर्श्वस्य सर्वृत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्माद्वहरूपाः पृशवः समृद्धौ॥८॥ आर्ण्यांक्षेको दृशिनं आलुभ्यन् नानांरूपाः पृथवे हे वं॥———[२]

अस्मै वै लोकार्य ग्राम्याः पृशव आर्लभ्यन्ते। अमुष्मां आरुण्याः। यद्ग्राम्यान्पृशूनालभते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदारुण्यान्। अमुं तैः। उभयाँन्पृशूनालंभते। गाम्या ५ श्चांरुण्या ५ श्चं। उभयों लीं कयोर वंरु खै। उभयाँन्पृशूना-लेभते॥ ९॥

ग्राम्या इश्वारण्या इश्वां। उभयंस्यान्ना द्यस्यावं रुद्धे। उभयां न्युशूनालंभते। ग्राम्या इश्वारण्या इश्वं। उभयंषां पशूनामवं रुद्धे। त्रयंस्त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाप्त्रें। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मां ध्सत्यात्॥१०॥

अस्मिँ होके बहुवः कामा इति। यथ्सेमानीभ्यों देवताभयोऽन्येंऽन्ये पृशवं आलभ्यन्ते। अस्मिन्नेव तह्नोके कामान्दधाति। तस्माद्स्मिँ होके बहुवः कामाः। त्रयाणां त्रयाणां त्रयाणां सह वपा जुहोति। त्र्यावृतो व देवाः। त्र्यावृत इमे लोकाः। एषां लोकानामान्यै। एषां लोकानां कृत्यै। पर्यप्रिकृतानारण्यानुथ्मृं जन्त्यहि र सायै॥११॥ अवंक्ष्या उभयान्यस्वतंत्रके स्त्यावहिर्स्माये॥ [३]

युञ्जन्तिं ब्रुध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रुधः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अंरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चरंन्त्मित्यांह। वायुर्वे चरन्। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष् इत्यांह॥१२॥ ड्म वै लोकाः परितस्थुषंः। ड्मानेवास्मैं लोकान् युनिक्तः। रोचन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मैं रोचयित। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामानेवास्मैं युनिक्तः। हरी विपंक्षसेत्यांह। ड्मे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मैं युनिक्तः॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्मैं युनिक्त। पुता एवास्मैं देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् र राज्ञां गमयति। जीमूतंस्येव भवित प्रतींकमित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजिंत्यै॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एति। यस्यं पृशुरुपार्कृतोऽन्यत्र वेद्या एतिं। एतं स्तोतरेतेनं पृथा पुन्रश्वमार्वर्तयासि न इत्याह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्वधात्यावृत्त्ये। यथा व ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य

स्कन्दित। यदंस्योपाकृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमांन्येवास्य तथ्सम्भंरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुविरितिं प्राजापत्याभिरावंयन्ति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः। स्वयैवैनं देवत्या समर्थयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावातां। सुविरितिं परिवृक्ती। पृषां लोकानांमभिजित्ये। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिर्ण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं प्रशवः श्रीः क्रांमिन्ति। यो ऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनिक्त। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्थे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्धे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्धे। पत्नंयोऽभ्यंअन्ति। श्रिया वा एतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुर्वते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्ध प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दधते। यदि नावजिन्नेत्तं। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंन्नापयेत्। अवं हैव जिंन्नति। आक्रान्ं वाजी क्रमेरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमन्त्रमत्त्रयते। एषां लोकानांम्भिजित्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वस्याप्रियो भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥

तेजंसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन् व्यृद्धते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणत आंयतनो वै ब्रह्मा। बार्हस्पत्यो वै ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धो ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्त आंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्माद्त्तरोऽर्धस्तेज्स्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। यज्मानदेवत्यों वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समंध्यतः। किङ् स्विदासीत्पूर्विचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्धे। किङ् स्विंदासीद्भृहद्वय इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्धे। किङ् स्विंदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिवै पिशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्धे। किङ् स्विंदासीत्पिलिप्पिलेत्यांह। श्रीवै पिलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावं रुन्धे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंर्तीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्थे। क उंस्विज्ञायते पुनिरत्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनेः। आयुरेवावं रुन्थे। कि स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्थे। कि स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्यांह। वेदिवें परोऽन्तंः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्यांह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत् इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंः। सोम्पीथमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं वाचः पर्मं व्योमेत्यांह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्धे॥२४॥

होतां भवित वै वृष्टिः पूर्वचित्तिरुन्नाद्यंमेवावं रुन्धे महदित्यांहु सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्वत्वारिं च॥—————[५]

अप वा एतस्मौत्प्राणाः क्रांमन्ति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणायं स्वाहौ व्यानायं स्वाहेति संज्ञप्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्प्राणा अपंक्रामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वौ प्रियाणौम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनां त्वौ निधिपति हवामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तर्द्धुवते॥२५॥

अर्थो धुवन्त्येवैनम्। अर्थो न्येवास्मै ह्रुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः।

एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये यज्ञे धुवंनं तन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिंक इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवनाम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं पृवैनामुपंनयति।

सुवर्गे लोके सम्प्रोण्वीथामित्याह॥२७॥

सुवर्गमेवैनां लोकं गंमयित। आऽहमंजािन गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधिमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृश्नात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजांनन्। तमश्वः प्राजांनात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्ये। गायत्री त्रिष्टुब्जग्तीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयुस्मय्यों रज्ता हरिण्यः। अस्य

पुष्यंति॥३१॥

वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्यंः। अन्तिरक्षस्य रज्ञताः। दिवो हिरंण्यः। दिशो वा अयस्मय्यंः। अवान्त्रिद्शा रंज्ताः। ऊर्ध्वा हिरंण्यः। दिशं पुवास्मं कल्पयित। कस्त्वा छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि रंसाय॥२९॥

हुव्वे अमुन्त्यूर्ण्यंश्वित्यांह जग्तीत्यांह कल्पय्येकं चा——[६]

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं क्रांमति। योऽश्वमेधेन यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह

वै भारः। राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहिति। अथाँस्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वै राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥ श्रियंमेवावं रुन्धे। शीते वातं पुनित्रवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातंः। क्षेममेवावं रुन्धे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विश्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवंः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। न पृष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशूत्र

श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियमेवास्मै राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारङ्गिराविवेत्यांह। राष्ट्रं

शूद्रा यदर्यजारा न पोषाय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वैशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इ्यं

यका शंकुन्तिकेत्यांह। विड्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्मौद्राष्ट्राय विशं सर्पन्ति। आहंतं गभे पस इत्यांह। विड्वे गभंः॥३२॥

राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्याह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत इत्याह। श्रीवै वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसृंलामीतिं ते पिता गुभे मृष्टिमंत १ स्युदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मृष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माद्राष्ट्रं विश्वं घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञेऽपूतं वदंन्ति। दुधिकाव्यणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मयोभुव इत्युद्धिर्मार्ज्ञयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवाऽऽत्मानं पवयन्ते॥३४॥ गुष्ट्रम् मध्यं प्रयोत् गर्भं क्ये द्यते व्यविष्य प्राणाऽन प्रातिश्वतः त्यस्य प्रयोतिः प्रचार स्था प्रणाऽन प्रातिश्वतः त्यस्य प्रयोत् स्थितितं नार्शकोतः।

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्।

सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवृदिथ्सः। यो मृतः पुनः सम्भर्दितिं। तं देवा अश्वमेधेनैव समंभरन्। ततो वै त आध्रुवन्। योऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं। पुरुषमालभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजमेवालंभते। अथो अन्नं वै विराट्। अन्नमेवावं रुन्धे। अश्वमालंभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापितमेवालंभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियमेवावं रुन्धे। गामालंभते॥३६॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञम्वालंभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नम्वावं रुन्धे। अजावी आलंभते भूम्ने। अथो पृष्टिवें भूमा। पृष्टिमेवावं रुन्धे। पर्यमिकृतं पुर्रुषं चार्ण्या इश्लोध्सृंजन्त्यहि सायै। उभौ वा एतौ पृशू आलंभ्येते। यश्लांवमो यश्लं पर्मः। तेंऽस्योभये युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिह्नंता भवन्ति। नैनं दुङ्क्षावंः पश्चवों युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिजिता अभिह्नंता अभिह्नंता हि स्मिन्ति। योऽश्वमेधेन् यज्ञते। य उ चैनमेवं वेदं॥३७॥

हुन्ते गमालंभवे प्रमांउद्ये वं॥

[८]

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविर्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविर्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्करयः पृष्ठं भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्दंः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशव आलंभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अहं एवैष बृलिर्ह्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्वारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गव्यान्पशूनुंत्तमेऽहं नालंभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पशूनवं रुन्थे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभिजित्यै। सौरीनवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तृत एव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्थे। सोमांय स्वराज्ञेंऽनोवाहावंनुङ्गाहावितिं द्वन्द्विनः पृशूनालभते। अहोरात्राणांमभिजित्यै। पृशुभिवां एष व्यृध्यते। यौऽश्वमेथेन यजते। छुगुलं कुल्माषं किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पशूना लभते। पृशुभिरेवाऽऽत्मानः समर्थयति। ऋतुभिवां पुष व्यृध्यते। यौऽश्वमेधेन यज्ञंते। पिशङ्गास्त्रयों वास्नता इत्यृंतुपृशूनालंभते। ऋतुभिरेवाऽऽत्मान् समर्धयति। आ वा एष पृशुभ्यों वृश्च्यते। यौऽश्वमेधेन यज्ञंते। पर्यग्निकृता उथ्यृंजन्त्यनौत्रस्काय॥४०॥

हसन् हम्मे व्यक्त व्यक्त व्यक्तिकृतों वे॥

[१]

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो व स महानंत्रादोऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानौ गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यज्ञमानदेवत्यां व वपा। राजां महिमा। यद्वपां मंहिम्नोभ्यतः पिर्यजंति। यज्ञमानमेव राज्येनोभ्यतः पिरंगृह्णाति। पुरस्तांथ्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपिरंष्टाथ्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्वपां मंहिम्नोभ्यतः पिर्यजंति। तानेवोभयांन्त्रीणाति॥४१॥

वैश्वदेवो वा अर्थः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिभागाः। ता

भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्यां मृण्डूकां जम्भ्यंभिरिति। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रतिसङ्ख्यायमाहुतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तिरत्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमास्यः संवथ्सर औप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तैंऽब्रुवन्नुग्नयः स्विष्टकृतः। अश्वंस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेति। ते लोहिंतमुदंहरन्त। ततो देवा अभवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यथ्स्वंष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशूनभिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्।

रुद्रादेव पृश्नन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्निमंन्यते। अयुस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयांम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वै प्रजाः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयंमभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवेनमालंभते। आज्यंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौं- ऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृहती॥४६॥

बार्हंताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्धयित। तायद्भूयंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रया व्यर्धयेत्। षद्भिर्श्शतं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्हंताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्धयित॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वै पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इतिं। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामृत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामृत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। प्र प्रतिष्ठायांश्च्यवेत। द्विपदां अन्ततो जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥४८॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तं यंज्ञकृतुभि्रन्वैच्छत्। तं यंज्ञकृतुभि्रनांन्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभि्रन्वैच्छत्। तिमिष्टिंभि्रन्वंविन्दत्। तिदिष्टीनामिष्टित्वम्। यथ्संवथ्स्रमिष्टिंभि्र्यजते। अश्वंमेव तदन्विच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्यंतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ- प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पर्गं परावतं गन्तौः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्यै धृत्यै॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विच्छति। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्ये धृत्यें। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विच्छति। तस्माद्दिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवेनमन्विच्छति। अथो अहोरात्राभ्यांमेवास्मे योगक्षेमं केल्पयति॥५१॥

अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं क्रांमित। योंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणौ वींणागाथिनौं गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियंमेवास्मिन्तद्धंतः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणांऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राह्मणौ गायंताम्॥५२॥

प्रभःशुंकारमाच्छ्रीः स्यात्। न वै ब्राह्मणे श्री रमत् इतिं। ब्राह्मणोंऽन्यो गार्येत्। राजन्योंऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राह्मणः। क्षत्रः राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गार्येताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयंते। अर्थ ब्राह्मणं जिनाति। दिवां ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वै ब्राँह्मणस्यं॥५४॥

ड्ष्ट्रापूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यम् संङ्ग्राममंहिन्निति राजन्यः। युद्धं वै राजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रुंप्ता वा एतस्यर्तव इत्याहः। योऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रोंऽन्यो गायंति तिस्रोंऽन्यः। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेवास्मे कत्पयतः। ताभ्या स् स्इस्थायाम्। अनोयुक्ते च शते चं ददाति। शतायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति॥५५॥

गर्थताङ्कामेद्वाह्यप्रयं कत्पयतक्ष्ववि च॥

[१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्।

लोकलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहंतीर्ज्ञहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकलोके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मे स्वाहा-ऽमुष्मे स्वाहेति जुह्वंथ्सश्वक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिं लोके मृत्युः॥५६॥

अशन्या मृत्युरेव। तमेवाम् धिंश्लोकेऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपि क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूणघ्ने भेषुजं केरोति। एता १ हु वै मुंण्डिभ औदन्यवः। भ्रूणहृत्यायै प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण १ हिन्ति। सर्वस्मै तस्मै भेषुजं केरोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ

उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रणो वै जुंम्बुकः। अन्तत एव वर्रणमवयजते। खुलतेर्विक्तिधस्यं शुक्तस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वे वर्रणस्य रूपम्। रूपेणेव वर्रणमवयजते॥५८॥

वारुणो वा अर्थः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोतिं। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपितः। धर्ममेवावं रुन्थे। अधिपितर्स्यिधपितिं मा कुर्विधिपितर्हं प्रजानां भूयास्मित्यांह। अधिपितमेवेन समानानां करोति। मां धेहि मिये धेहीत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां

लोकानांमभिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। यौंऽश्वमेधेन यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमाश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षत्रमिन्द्रः। यदैंन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावं रुन्थे। यदांश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धे। त्रयों भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। अग्नयेऽ५होमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहविषमिष्टिं निर्वपति। दशांक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥ अधिपत्य इत्याहाभिज्ञत्या ऐन्ह्यां भवंति रूप्य एकं चा [१६]

यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालुं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टा-कंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीनाः राजाः। याभ्यं पृवैनं विन्दति॥६३॥ ताभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवैनं भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भवति। पौष्णं चुरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स एवैनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदिं मह्ती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यों वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भवति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्विपेन्मृगाखरे यदि नाऽऽगच्छेंत्। इयं वा अग्निर्वेश्वान्रः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानयित। आहैव सुत्यमहंगच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अर्थः। अर्श्हसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येतिं। यदर्श्होमुचे निर्वपंति। अर्श्हस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अर्थः। रेतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥ यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। सौर्य रतः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रतंसैवैन्र स समर्धयित। यज्ञमानो वा अश्वः। गर्भैर्वा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितो-ऽध्येति। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भैर्वेन्र स समर्धयित। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तः क्रियतें। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विवत्यश्चेण हेव भवत्यभ्यादंध्यो गर्भेर्वेन् स समर्थयित हे चे।

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्स इस्थिते निर्विपत्। द्वादशिमिर्विष्टिभिर्यज्ञेतिति।

यदिष्टिंभिर्यजेत। उपनामुंक एनं युज्ञः स्यौत्। पापीयाङ्स्तु स्यौत्। आप्तानि वा एतस्य छन्दार्शसा। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयंश्चीतेतिं। सर्वा वै सङ्स्थिते युज्ञे वागौप्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। ऋूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रह्मौद्नान्थ्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। यज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं यज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रति तिष्ठति॥६९॥

एष वै पर्यस्वान्नामं यज्ञः॥७०॥

पृष वै विभूनामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं विभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। पृष वै प्रभूनामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। पृष वा ऊर्जस्वान्नामं यज्ञः। सर्वर्ष ह वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते।

सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र विधृंतं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै व्यावृंतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र व्यावृंत्तं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं युज्ञः। सर्वर्ं हु वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै ब्रंह्मवर्च्सी नामं युज्ञः। आ हु वै तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं युज्ञः। आ हु वै तत्रं राज्जन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै

दीर्घो नामं युज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं युज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते॥७२॥

तार्प्यणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन्र् समंध्यन्ति। यामेन् साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमुलोकमेवैनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवं रुन्धे। हिर्ण्यकृशिपु भवति। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वी भवति। प्रजापंतेराह्यै। अस्य वै लोकस्यं रूपं तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकं तार्प्यणांऽऽप्रोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्नेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनार् सायुंज्यम्। सार्ष्टिता र समानलोकतामाप्रोति। यौँ ऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥ ७५॥ अवंरुप्या आप्रोत्युष्टी च॥—————————————————[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदिति। तस्मादश्वक् सवर्येत्याह्वयन्ति। तस्माद्यज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्च्चयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्मद्यो वाजाँन्थ्ममजंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुंपवपंति। योनिमन्तमेवनमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतेनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाँम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाँम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतेनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोतिं। तावंकिश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावं रुन्धे। अथो अर्काश्वमेधयोरेव प्रतिं तिष्ठति॥७८॥ वर्षेति स्यौक्ष्यानिय्यतंन्य्वति चा [२१] प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। तमालभ्योपांवसन्।

प्रातर्यष्टांस्मह् इति। एकं वा एतद्देवानामहिः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादर्श्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आलेभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादर्श्वः। यथ्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥
तस्मादश्वमेधः। वेदुकोऽश्वंमाशुं भंवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालब्धो-

तस्मदिश्वमेधः। वेदुकोऽश्वमाशुं भवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्धो-ऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्याऽऽलंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। योंऽश्वमेधेन् यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदे। एतद्वै तद्देवा एतान्देवताम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलेभन्त। युज्ञमेव। युज्ञेनं युज्ञमयजन्त देवाः। कामुप्रं युज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतुत्वमंकामयन्त। तेंऽमृतत्वमंगच्छन्। योंऽश्वमेधेन यजंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुंनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूंप्रं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेंभ्यः। सर्वस्याऽऽस्यैं। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनांऽऽप्रोति। सर्वं जयित। योंऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

यो वा अश्वस्य मेध्यस्य लोमंनी वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अश्वंस्य मेध्यस्य लोमंनी। यथ्सायं प्रांतर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जोमं जोमं जोमं जोमं जोमं जोमं जोमं लोमं जाहोति। एतदंनकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्हित। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य पदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंरशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह

स्म वै पुरा। अश्वंस्य मध्यंस्य पृदेपंदे जुह्नित। यो वा अश्वंस्य मध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छिति। तिद्ववंतिते। यदिग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अंश्वस्य मध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्नित॥८४॥

पदे अग्निहोत्रं जहोति त्रीणि च॥

प्रजापंतिस्तमंष्टादशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मे युञ्जन्ति तेजसाऽपंप्राणा अपुश्रीरूध्वा प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वेस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञऋतुमिरपुश्रीर्ब्राह्मणो सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्ताप्येणांदित्याः प्रजापंति पितरं यो वा अश्वस्य मेध्यस्य लोमंनी त्रयांविश्शातिः॥२३॥ प्रजापंतिरस्मिंक्षोक उत्तरतः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर्ष ह वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चत्वार्यशीतिः॥८४॥

- - -प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥ प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टु-वारसंस्तृन्भिः। व्यशेम देवितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरक्नैंस्तुष्टु-वारसंस्तृन्भिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपमापाम्पः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धंया। वाय्वश्वां रिष्म्पतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवन्सूर्वरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महसः स्वंः। देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पा रघमं। अपाष्ट्रामपं चावर्तिम्। अपदेवीरितो हिंत। वर्ज्नं देवीरजींता ॥ भवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदिंतिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥॥

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्यमण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादत्ते। सर्वस्माद्भवनाद्धि। तस्याः पाकविशेषेण। स्मृतं कालविशेषंणम्। नदीव प्रभवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सरः श्रिंताः। अणुशश्च महश्चा। सर्वे समवयत्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः सन्न निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥ अणुभिश्च महिद्धिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यते। पटरो विक्लिधः पिङ्गः। एतद्वेरुणुलक्ष्णम्। यत्रैतंदुपृदृश्यते। सहस्रं तत्र नीयते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्रं तंदतुलक्षणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। ज्लिपतं त्वेव दिह्यंते। शुक्ककृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं तें अन्यद्यंज्ञतं तें अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा तें पूषित्रह रातिर्स्त्विति। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवः। नाऽऽदित्यः संवध्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियत्नमं विद्यात्। एतद्वै संवध्सरस्य प्रियत्नमः रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पध्स्यमानो भवति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहर्रणं द्यात्॥७॥

साकुआनारं सप्तथंमाहुरेकुजम्। षडुंद्यमा ऋषंयो देवजा इति। तेषांमिष्टानि विहितानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदींषते। यस्तित्याजं सखिविद्र सखांयम्। न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी १ शृणोत्यलक १ शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमांनः। विनंनादाभिधांवः। षष्टिश्च त्रि॰शंका वृत्नाः। शुक्लकृष्णौ च षष्टिंकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्रदंक्षः। वृस्नतो वसुंभिः सह। संवृथ्सरस्यं सिवृतुः। प्रैष्कृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चे परिरक्षेतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नेबोधंत। शुक्कवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते सह। निजहंन् पृथिवी स्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासार्श्से। आदित्यानां निबोधंत। संवथ्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्ददतार् सह। अदुःखों दुःखचंक्षुरिव। तद्मांऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनाँ व्यथंयित्रव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्रादयते ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या व प्रजा भ्रंड्श्यन्ते। संवथ्सरात्ता भ्रंड्श्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥ अक्षिदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिक। आङ्के चार्न्नणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधत। कनकाभानि वासार्सा। अहतांनि निबोधत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। श्राचेत्रोपदृश्यते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैर्वस्तिवंर्णीर्व। विशिखासंः कपूर्दिनः। अनुद्धस्य योथ्स्यंमानस्य। कुद्धस्यंव लोहिनी। हेमतश्चश्चंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृहे। एता वाचः प्रवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पर्वमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मर्रुतः सूर्यत्वचः। शर्म सुप्रथा आवृंणे॥१४॥

अतिताम्राणिं वासार्सा। अष्टिवंज्रिशतिष्ठिं च। विश्वे देवा विप्रहर्नता। अग्निजिंह्वा असश्चंता नैव देवों न मृर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्षंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुरार्तिः। पृथिव्यामपरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्निरूपेण। धनुर्ज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिर्देन्द्रधनुंरित्युज्यम्। अभ्रवंणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोर्बार्ह्स्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्बिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवार्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवार्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिर्ः प्रतिंदधाति। नैन रे रुद्र आरुंको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं नं वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नमन्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानिभवहित। स द्रफ्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥ अवंद्रफ्सो अर्श्युमतींमितिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिमिः सहस्रैः। आवर्तिमिन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामथंद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्युर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मैं द्रुद्याताम्। यो द्रुद्यति। भ्रश्यते स्वंगिल्लोकात्। इत्यृतुमण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वरं संनिर्वचनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषीमान्ं विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपृन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभान्। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्च्योतिर्लभुन्ते। तान्थ्सोमः कश्यपादिधिनिर्धमित। अस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षंण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्सप्त सूर्यानिति। पञ्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्लाक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेंरं गुन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाज्रहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्रितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तानुन्वेतिं पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

सप्त होतांर ऋत्विजः। देवा आदित्यां ये सप्ता तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंप्याम्नायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्मावं इन्द्र ते शतर शतं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्रिन्थ्सहस्र सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादृत्नां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

केदमभ्रं निविशते। काय र संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्त्रंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविश्वन्ते। यदीतो यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्ये समाहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च् रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विंधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंथ्सस्य वेदंना। इरांवती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥ व्यष्टभाद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों मृयूखैंः। किं तद्विष्णोर्बल-माहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजतीं रोदसी उभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराँद्दीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेक-मृत्तंमम्॥२८॥

अग्नयों वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमंं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। पुवमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चुन्द्रमाश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततो मध्यमेमायन्ति। चतुमेग्निं च सम्प्रीति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽस्तो गृंहान्॥३०॥

कृश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निप्रिन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रपद्यन्ते। यथाऽपुण्यस्य कर्मणः। अपाण्यपादंकेशासः। तृत्र

प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

तेंऽयोनिजा जंनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमापद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वासवैः। अपैतं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः

सिद्धार्गमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वांसुवाः। रोहंन्ति पूर्व्यां रुहंः॥३२॥

यथ्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुषस्य। तस्येषा भवंति। अग्ने नयं

सुपर्था राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहराणमेनः।

ऋषिंर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिंथिरिति। कश्यपः पश्यंको भवति।

भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंर्यापाश्च।

पङ्किरांधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिता इति।

यथर्त्ववाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकाँचिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका

दशंस्रीकस्य। प्रभाजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिन्स्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छिमिति। न त्वकांम हिन्त॥३५॥

य एवं वेद। अथ गंन्धर्वगणाः। स्वानुभाट्। अङ्घारिकम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशानुर्विश्वावसुः। मूर्धन्वान्थ्सूर्यवृर्चाः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गर्गिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचो विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्ऋमिष्यामः। व्राहवंः स्वत्पसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षिन्त। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तभिवीं तैंरुदीरिताः। अमूँ ल्लोकानभिवंर्षिन्त। तेषांमेषा भवंति। स्मानमेतदुदंकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पुर्जन्या जिन्वन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नंय इति। यदक्षरं

भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। मृहर्षिमस्य गोप्तारम्। ज्नमदंग्निमकुंर्वत। ज्नमदंग्निराप्यांयते। छन्दोंभिश्चतुरुत्त्ररेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

सहस्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूंनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यंथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्त्रीपुमम्। शुक्रं वांमन्यद्यंजतं वांमन्यत्। विषुरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरंस्तु। वासौत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी चुरथः सुर् सखांयौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर्ं सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्यमंश्विनोदमेघे। रियं न कश्चिन्ममृवां (२) अवाहाः। तमूहथुर्नीभिरात्मन्-वतीभिः। अन्तरिक्षपुङ्गिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूहिथुः पत्ङ्गैः। समुद्रस्य धन्वन्नार्द्रस्य पारे। त्रिभीरथैंः शतपद्धिः षडिश्वेः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुबिधाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरिश्वेव। सवितारेपसोऽभवत्। त्य सतृप्तं विदित्वैव। बहसोम गिरं विशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपस्पुष्। स सङ्ग्राम-स्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसांनिन्वताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थां अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती

एव भंवतः। तयोंरेतौ वृथ्सौ। अग्निश्चांऽऽदित्यश्चं। रात्रेर्वथ्यः। श्वेत आंदित्यः। अह्योऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिंपद्येते। सेय॰ रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्ं। यद्रात्रौं रृश्मयंः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्ं। एवमेतस्यां उल्बणम्ं। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृथ्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षति व्रतम्। महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। प्वित्रं ते वितंतं

ब्रह्मण्स्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तुस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानाम्। असंतः सुद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः शङ्कृतोऽवसन्। अथं सिवतुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निर्हितास उच्चा। नक्तं दर्दश्चे कुर्हचिद्दिवेयुः। अदंब्धान् वर्रुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्द्रशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम मे॥५०॥

नपु श्संकं पुमा शुस्त्र्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। युजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षतः। पुशवों ममं भूतानि। अनूबन्थ्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः सुतीः। ता उमे पुश्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥ यस्ता विजानाथ्मंवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमंनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद् सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसितः रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृंष्युः स्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्चाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गिलुरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगंरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकाँश्वमेक्योजनम्। एकचर्क्रमेक्धुरम्। वातध्रांजिगतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिताङ्श्चाग्नेः। रथे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशभिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्श्शत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिर्श्शता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि

यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यंगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निबोधत। आ मृन्द्रैरिन्द्र हरिंभिः। याहि मृयूरंरोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इहि। मा मृन्द्रैरिन्द्र हरिंभिः। यामि मृयूरंरोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। निधन्वेव तां (२) इमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हिरत्वमापृत्रैः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रंयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनु-चर्रास्त्व। सुब्रह्मण्यो स्मुब्रह्मण्यो स्मुब्रह्मण्यो इन्द्राऽऽगच्छ हिरव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवृता चं। विश्वरूपैरिहा-ऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अपसुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीच्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तिरक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्स्सां चुक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदर्रणमिस। ब्रह्मण उदीरणमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

[अपंक्रामत गर्भिण्यः]

अष्टयोनीमृष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीमिमां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न

चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौन्युष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्न्तरिक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीमुष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीमुमूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामांणं महीमू षु। अदितिर्द्यौरिदितिर्न्तिरक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमिदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तिनेः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिमिः पुत्रेरिदितिः। उपप्रैत्पूर्व्यं युगम्। प्रजायं मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरिदितिं। ताननुक्रंमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चार्यमा चं। अश्शंश्च भगंश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यग्मी हुरूसः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तिदत्पदिमितिं। गुर्भः प्रांजापृत्यः। अथु पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥ [यथास्थानं गंभिण्यंः]

योऽसौ तपत्रुदेति। स सर्वेषां भूतानौ प्राणानादायोदेति। मा मै प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममे प्राणानादायोदंगाः। असौ यौऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानौ प्राणानादायास्तमेति। मा मै प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममे प्राणानादायास्तक्षाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानौ प्राणेरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्सृंपत॥६५॥

ड्रमे मासाँश्चार्थमासाश्चं। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्सृंपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्सृपत्। अय र संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपित च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपित च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन॰ रीद्वम्॥६७॥

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुषस्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः

स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीद्वम्॥६८॥

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुन रिद्वम्॥६९॥

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीकृस्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा

भानि। अतिलोहिताना र रुद्राणा र स्थाने स्वते जंसा भानि। ऊर्ध्वाना र रुद्राणा र स्थाने स्वते जंसा भानि॥ ७०॥

अवपतन्ताना रुद्राणा इं स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युताना रुद्राणा इं स्थाने स्वतेजंसा भानि। प्रभ्राजमानीना॰ रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। वासु किवैद्युतीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना इस्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। श्यामाना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वतेजंसा भानि। कपिलाना रुद्राणीना इस्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। ऊर्ध्वाना र रुद्राणीना इ स्थाने स्वतेजंसा भानि। अवपतन्तीना र रुद्राणीना इ स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतीना र रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुंन र रीह्वम्॥ ७१॥

अथाग्नेरष्टपुंरुषुस्य। अग्नेः पूर्वदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस

उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। सहोजसो दक्षिणिदश्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। अजिराप्रभव उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। वैश्वानरस्यापरिदश्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। पिङ्कराधस उदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। पिङ्कराधस उदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। विसर्पिण उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुनं रीढ्वम्॥७२॥ [१८] दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपी नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। दक्षिणापरस्यां

दिश्यविसंपी नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषांदी नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषांदी नुरकः। तस्मान्नः परिपाहि। आ

यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

[१९]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिंदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पृश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमा व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पंश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृंथिव्याम्। वायुर्न्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। एवा ह्यंव। एवा ह्यंग्ने। एवा हि वांयो। एवा हींन्द्र। एवा हि पूंषन्। एवा हि देवाः॥७४॥

आपंमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सुह संश्रस्करिद्धंया। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महसो महसः स्वंः॥७५॥ देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपार्श्युष्णिम्पा रक्षंः। अपार्श्युष्णि-

मपा रघम्। अपाँघ्रामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्नं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥७६॥

भुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टु-वारसंस्तनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सुन्दिशे॥७७॥

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भवति। चुन्द्रमा वा अपां पुष्पम्।

पुष्पंवान् प्रजावाँन् पशुमान् भंवति। य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। योँऽग्नेरायतेनं वेदे॥७८॥ आयतेनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतेनम्। आयतेनवान् भवति। य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यो वायोरायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। यो वायोरायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनुं

वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति।

योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतेनं वेदं। आयतंनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनवान् भवति। आयतंनवान् भवति। य पूर्वं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥

आयर्तनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायर्तनम्। आयर्तनवान् भवति। यः

संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योंऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

ड्मे वै लोका अपस् प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसन्। सूर्ये शुक्रर समार्भृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये समार्भृताः। जानुद्घ्रीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्मम्॥८५॥

पुष्करपर्णेः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्बिह्यसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधार्य। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्पस् ह्ययं चीयतें। असौ भुवंनेऽप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपदधाति। अग्निहोत्रे दर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषु॥८६॥

अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतद्धं स्मृ वा आंहुः शण्डिलाः। कमृग्निं

चिनुते। स्त्रियम्प्रिं चिन्वानः। संवथ्सरं प्रत्यक्षेण। कम्प्रिं चिनुते। सावित्रम्प्रिं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कम्प्रिं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम् ग्निं चिन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। चातुर्होत्रियम् ग्निं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। वैश्वसृजम् ग्निं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्वानः॥४८॥ कम् ग्निं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम् ग्निं चिन्वानः॥८८॥

ड्माँ ह्यो कान्प्रत्यक्षेण। कम् ग्रिं चिनुते। ड्ममां रूणकेतुकम् ग्रिं चिन्वान इति। य एवासौ। ड्तश्चाऽम् तश्चाऽव्यतीपाती। तिमिति। यौं ऽग्नेर्मिथूया वेदं। मिथुन्वान्भंवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्भंवति। य एवं वेदं॥८९॥

आपो वा इदमांसन्थ्सिललमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदः सृजेयमितिं। तस्माद्यत्पुरुषो मनंसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि। मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेतिं। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कामो भवति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तृष्त्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासींत्। ततोंऽरुणाः केतवो वातंरशुना ऋषंय उदंतिष्ठन्॥९१॥

अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

ये नर्खाः। ते वैखानसाः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्।

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वंमेवाहमिहासमितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्तवम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर् समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवा ह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवा ह्यग्न इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥ ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुंत्तर्त उपादंधात्। एवा हीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथारुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूषित्रितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गन्धर्वाप्रसरस्श्रोदंतिष्ठन्। सोध्वा दिक्। या विप्रुषो विपरापतन्। ताभ्योऽसुरा रक्षा एसि पिशाचाश्रोदंतिष्ठन्। तस्मात्ते पराभवन्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समंभवन्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९६॥

आपों हु यहृंहृतीर्गर्भमायत्र्ं। दक्ष्वं दर्धाना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अद्भो वा इदः समंभूत्। तस्मादिदः सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मादिदः सर्वः शिथिलमिवाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापितिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानिं। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः

प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंम्भि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवुरुद्धां। तदेवानुप्रविंशति। य एवं वेदं॥९८॥

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपार रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यितुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पुता व ब्रह्मवर्चस्या आपंः। मुख्त एव ब्रह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रह्मवर्चसितंरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। एता वै तेंज्स्विनीरापंः। तेजं एवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेज्स्वितंरः। स्थावरा गृह्णाति। ताः पश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांवराः। पश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओर्जसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जंतीरिव

धार्वन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओज्स्वितंरः। सम्भार्या गृह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नं वा अन्नं जायते। यदेवान्चोऽन्नं जायते। तदवंरुन्धे। तं वा पुतमंरुणाः केतवो वातंरशना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मादारुणकेतुकः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरश्चनाः। प्रतिष्ठाः श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसमिति। श्वतशंश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्भिं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

जानुद्ग्रीमुंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयित। अपाः संर्वत्वायं। पुष्करपूर्णः रुकां पुरुषमित्युपद्धाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यः रुकाः। अमृतं पुरुषः। पुतावद्वा वाऽस्ति। यावदेतत्। यावदेवास्ति॥१०४॥ समंध्ये। आपंमापामपः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सृह संश्रस्करर्द्धिया इति। वाय्वश्वां रश्मिपतयः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥ यास्तिस्रः पंरमजाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्यवेतिं। पश्चचितंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानिवाग्निः। तं चिनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः। परोरंजाः पार्दः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य एतमिग्नं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥ अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तमभित एता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे

तदवंरुन्धे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधमवंरुन्धे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य

देशपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। अथं ह स्माहारुणः स्वायम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा एतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिनुते॥१०७॥

स्त्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते। सावित्रम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते। नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते॥१०८॥

उपानुवाक्यमाशुम् ग्निं चिन्वानः। कम् ग्निं चिन्ते। इममारुणकेतुकम् ग्निं चिन्वान इतिं। वृषा वा अग्निः। वृषांणौ सङ्स्फांलयेत्। हुन्येतास्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तरवेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा एषौँ ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावाँन् भवति। य एवं वेदं। प्रशुकांमिश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। प्रशूनामेव संज्ञाने ऽग्निं चिनुते। प्रशुमान् भवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मै करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर इश्चिन्वीत। वज्रो वा आपः॥१११॥ वर्ज्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एनम्। तेर्जस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्च्यसकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। एतावृद्घा वाउस्ति। यावदेतत्। यावदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्भतम्। वर्षिति न धावत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं कुंर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषौंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठैत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनंमोद्कानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतम्ग्निं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

ह्मानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रंश्च विश्वं च देवाः। यज्ञं चं नस्त्न्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्वविता तनूनाम्। आप्रवस्व प्रप्लंवस्व। आण्डीभंवज्ञ मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखिन्धनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शंरीराण्यंकल्पयन्। ते ते देहं केल्पयन्तु। मा चे ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वप्ता अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूरंयोध्या। तस्यारं हिरण्मंयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्में ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजमानार हरिणीम्। यशसां सम्परीवृंताम्। पुररं हिरण्मयीं

ब्रह्मा॥११६॥ विवेशांऽप्राजिता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्वित। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्दंवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मृन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अश्वतांसः श्वंतासश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंयंन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमृग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रुश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेतृ वीत् वि चं सर्पतातंः। येऽत्र स्थ पुंराणा ये च नूतंनाः। अहोंभिर्द्भिर्क्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु क्नीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गरिषु च ये हुताः। उभयान पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु श्ररदंः॥११९॥

अदो यद्वर्ह्म विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायसाम्। कामुप्रयवणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मि सुनातनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवां रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहित॥१२०॥

विशींर्ष्णीं गृप्रंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध ईतकुक्षम्। निजङ्घ शब्लोदेरम्। स् तान् वाच्यायया सह। अग्रे नाशय सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन किश्शुकावंता। अग्रे नाशंय सन्दर्शः॥१२१॥

—[२८] इदं वर्चः

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नो यवसंमिच्छतु। इदं वर्चः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंरन्तद्यंयोत। मृयोभूर्वातों विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

पुनंर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्र्भगंः। पुन्र्ब्राह्मंणमैतु मा। पुन्र्द्रविणमैतु
मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे।
दीर्घायुत्वाय वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिंच्यते। यन्म आजांयते पुनंः। तेनं माम्मृतं
कुरु। तेनं सुप्रजसं कुरु॥१२३॥
[३०]

अुद्धस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवृणः संदा। तिरोऽधेहि सपुत्नान्नंः। ये

अपोऽश्नन्तिं केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्ववणः। रथर्ं सहस्रवन्ध्रंरम्। पुरुश्चऋरं सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बिलिम्। यस्मै भूतानिं बिलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रृतोऽन्नंमुखीं विराजमैं। सुद्र्शने चे क्रौश्चे चे। मैनागे चे महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगम्न्ता। स्र्हार्यं नगरं तवं। इति मन्नौः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिल्र्रे हरैत्। हिर्ण्यनाभये वितुदये कौबेरायायं बिलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बिले हत्वोपितिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हि सीः। अस्मात्प्रविश्यात्रंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यें सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुञ्जीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुञ्जीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्ध्यन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्था नं सिद्ध्यन्ते। यस्तं विघातुंको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स में कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैंश्रवणो दंदात्। कुबेरायं वेश्रवणायं। महाराजाय नमंः। केतवो अर्रुणासश्च। ऋषयो वातंरशनाः। प्रतिष्ठा श्वातधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरस्वित। मा ते व्योम सन्दिशी॥१२९॥
[३१]

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्।

भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

औदुम्बरीभिः समिद्भिरिश्नं परिचरेत्। पुनर्मामैत्त्विन्द्रियमित्येतेनानुंवाकेन।

उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

काँण्डऋषयः। अरण्येऽधीयीरन्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥

ऋतुभ्यः संवंथ्सराय। वरुणायारुणायेति व्रतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः

सुमृडीकेति भूमिम्। एवमंपवर्गे। धेनुर्दक्षिणा। क॰सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा

शुक्रम्। यंथाशक्ति वा। एवङ्स्वाध्यायंधर्मेण। अरण्येंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो

भुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टु-

वारसंस्तनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः

पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नुस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

महानाम्नीभिरुदक र संइस्पर्श्य। तमाचाँर्यो दद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालभ

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवें सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नंक्षत्रेभ्यः।

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्व्यये नमः पृथिव्ये नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुराणां च यज्ञौ प्रतंतावास्तां वय सवर्गं लोकमें ष्यामो वयमें प्याम इति तेऽसुंराः सन्नह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्य इस्ते न प्राजान इस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वै यज्ञेन देवाः स्वर्गं लोकमायन्न प्रसृतिनासुरान् पराभावयन् प्रसृतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों युज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधींते यजंत एव तत्तस्माँ द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजयेद्यजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिंनं वासो वा दक्षिणत उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धरतेऽवं धत्ते सव्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपरीतं प्राचीनावीत र संवीतं मानुषम्॥१॥

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत्

तानि वरमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्त १ ह वा तानि रक्षा ईस्यादित्यं योधयन्ति यावदस्तमन्वगातानि ह वा एतानि रक्षा रंसि गायत्रियाऽभिमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदुं ह वा एते ब्रंह्मवादिनंः पूर्वाभिंमुखाः सन्ध्यायां गायत्रियाऽभिंमन्त्रिता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपों वुज्रीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मुन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानुमवंधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्थ्सकलं भद्रमंश्रुतेऽसावंदित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति य

पृवं वेदं॥२॥

यदंवा देवहेळंनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्त्रस्यतेन्

मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृतमूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः
स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वित। कृतान्नंः पाह्येनंसो यितंः
चानृतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावरुणो सोमो धाता बृह्स्पितः। ते नो मुश्चन्त्वेनंसो

यद्न्यकृतमारिम। स्जात्श्र्सादुत जांमिश्र्साञ्चायंसः शर्सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेन्स्तस्मात् त्वम्समाञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवन्द्या १ शिश्नैर्यदनृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकृम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन सूर्यं तमंसो निर्मुमोचं। येनेन्द्रो विश्वा अजंहादरांतीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आँक्षि। यत्कुसींदमप्रतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मयि माता यदां पिपेष यदन्तरिक्षं यदाशसातिंक्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

यददीं व्यत्रृणमृहं बुभूवादिंथ्सन्वा सञ्जगर् जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर् किल्बिषाण्यक्षाणां वृग्नुमुप्जिन्नेमानः। उग्रं पृश्या चं राष्ट्रभृच् तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानि। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि

यद्क्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्संमानो यमस्यं लोके अधिरज्जुरायं। अवं ते हेळ उद्त्यमिम में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्क्षंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमंस्मै प्रसुंवामिस। दुःशुरसानुशुरसाभ्यां घणेनांनुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमंस्मै प्रसुंवामिस। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंन्मिह मनंसा स॰ शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्ष्ट् तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

आयुंष्टे विश्वतो दधद्यम्भिर्वरैण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति परायक्ष्मरं सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषो जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चार् गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजो वरुण् सर्शिशाधि। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयू १ षि पवस् आ सुवोर्जिमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाँम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दर्धद्वयिं मिय पोषम्॥६॥

अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नृदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नृदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम् प्रणुंदा नः सपत्नान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघारंसित। ताः सत्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यंमुग्नेऽपि दध्मसि॥७॥

यो नः शपादर्शपतो यश्चं नः शपंतः शपात। उषाश्च तस्मैं निम्नुक् सर्वं पापः समूहताम्। यो नंः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्।

सर्वा इस्तानं भे सन्दंह या इश्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मर्भ्यमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनंः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्सांच सर्वाङ्स्तान्मंष्मुषा कुरु। सःशितं मे ब्रह्म स॰िशंतं वीर्या(१)म्बलम्। स॰िशंतं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहितः। उदेषां बाह् अंतिरमुद्धर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुंर्म आगात्पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म आगात्पुनेः प्राणः पुनराकूंतं म् आगात्पुनिश्चित्तं पुनुराधीतं म् आगात्। वैश्वानरो मेऽदब्धस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥ वैश्वानराय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांसु। स एतान्पाशांन् प्रमुचन्

प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वानुरः पर्वयान्नः प्वित्रैर्यथ्संङ्ग्रुस्भिधावाम्याशाः अनोजानुन्मनंसा याचेमानो यदत्रैनो अव तथ्संवामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्धक्रमोचेनम्। विजिंहीर्ष्व लोकान्कृंधि बन्धान्मंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्यंतो गर्भः सर्वान् पृथो अनुष्व।

स प्रजानन्प्रतिंगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं ज्रसः प्रस्तादच्छिन्तं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

ततं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दत्तं पित्र्यमायनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छादातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रांयेह जायांपती सर्रभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिरसिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्दुरिता यानिं चकुम। भूमिंर्माताऽदितिर्नो जुनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भंवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायांम्। अश्लोणाङ्गेरह्रंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च प्त्रम्। यदन्नमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदौस्यनुत वां करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं च प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोतु। यदन्नमिद्री बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामिवम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मादनुणं कृणोतु। यन्मयां मनंसा वाचा कृतमेनः कदाचन। सर्वस्मातस्मान्मेळितो मोग्धि त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्॥१०॥

वातंरशना ह वा ऋषंयः श्रमणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांय इस्ते निलायंमचर इस्ते ऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ता इस्तेष्वन्वंविन्दञ्छ्द्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चरथेति त ऋषींनब्रुवन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धाँम्नि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रंं नो ब्रूत येनारेपसं स्यामेति त पुतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददींव्यन्गुणमहं बभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतों दध्दित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वानुराय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदंर्वाचीनमेनों भ्रूणहत्यायास्तस्मांन्मोक्ष्यध्व इति त पुतैरंजुहवुस्तेऽरेपसों-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुहुयात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥ [り].

क्रमाण्डैर्जुह्याद्योऽपूंत इव मन्येंत यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूण्हैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चति यदंर्वाचीनमेनौ भ्रूणहत्यायास्तस्मौन्मुच्यते यावदेनों दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संतित जुंहोति संवथ्सरं दींक्षितो भंवति संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुर्वि १ शति १ रात्रींदीक्षितो भंवति चतुर्वि शितरर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भंवति द्वादंश मासाः संवध्सरः संवध्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्रात्रींदीक्षितो भंवति षड्वा ऋतवंः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवाऽऽत्मानं पुनीते न मा समंश्रीयात्र स्रियमुपेयात्रोपर्यासीत् जुगुंफ्सेतानृतात्पयौ ब्राह्मणस्यं वृतं येवागू राजन्यंस्याऽऽमिक्षा वैश्यस्याथीं सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तून् घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

अजान् ह वै पृश्री ईस्तपस्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्रवंभ्यानंर्षत्त ऋषंयोऽभवन्तदषींणाः तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकामास्त एतं ब्रह्मयज्ञमपश्यन्तमाहर्नेनायजन्त यद्दचोऽध्यगीषत् ताः पर्यआहुतयो देवानामभवन् यद्यजूर्षेषि घृताहुतयो यथ्सामानि सोमाहृतयो यदर्थवाङ्गिरसो मध्वाहुतयो यद्ग्राह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराशुर्सीमेंदाहुतयों देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मानम-पौघ्रत्रपहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सार्युज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥ पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतिति प्रतायन्ते सतिति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयुज्ञो भूतयुज्ञो मनुष्ययुज्ञो ब्रह्मयुज्ञ इति यदुग्नौ जुहोत्यपि सुमिधुं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा क्रोत्यप्यपस्तित्पंतृयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बिलि १ हरंति तद्भूतयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्ग्रौह्मणेभ्योऽत्रं ददांति तन्मनुष्ययुज्ञः सन्तिष्ठते यथ्स्वाध्यायमधीयीतैकांमप्यृचं यजुः सामं वा तद्वंह्मयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्दचोऽधीते

यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्ग्रौह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराशु सीर्मेदंसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवहन्ति यद्चोऽधीते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित यद्यजू ईषि घृताहुतिभिर्यथ्सामानि सोमांहतिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वांहतिभिर्यद्वांह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराशुर्सीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवाङ्स्तर्पयित् त एनं तृप्ता आयुषा तेर्जमा वर्चमा श्रिया यशंमा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥ ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमाणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्दर्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्धिः पंरिमृज्यं संकृदुंपस्पृश्य शिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्विः परिमृजति तेन यजू ५ षि यथ्सकृद्पस्पृशंति तेन सामानि यथ्सव्यं

पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंर्वाङ्गिरसौ

पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजूरंषि घृतस्यं कूल्या

ब्राह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्थां नाराशरसीः प्रीणाति दर्भाणां महदुंपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना । रसो यद्दर्भाः सरंसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सपवित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वे यर्जुस्त्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्पर्ममक्षरं तदेतद्वाऽभ्यंक्तमृचो अक्षरें पर्मे व्योम्न यस्मिन्देवा अधि विश्वें निषेदुर्यस्तन्न वेद् किमृचा केरिष्यित् य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्यांहैतद्वै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान । संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथों प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा ईसि प्रतिंपद्यते॥१५॥

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठं त्रुत व्रजं त्रुताऽऽसींन उत शयां नोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यों भवति य एवं विद्वान्थस्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नर्मः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नर्मो वाचे नर्मो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥१६॥

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्वाँह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपित तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्ष्णं सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतांयते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिंणा॥१७॥

सा दक्षणागरणा ——[१३]
तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधानं विद्युदिग्निर्वर्षः हिवः स्तंनियृत्वंषद्वारो
यदंवस्फूर्जिति सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे
वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जिति पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः

स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपों हि स्वाध्याय इत्युंत्तमं नाक रे रोहत्युत्तमः संमानानां भवित यावंन्तर हु वा इमां वित्तस्य पूर्णां ददंथ्स्वर्गं लोकं जयिति तावंन्तं लोकं जयिति भूयारेसं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्युं जयिति ब्रह्मणः सायुंज्यं गच्छिति॥१८॥

तस्य वा पुतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियद्देशः समृंद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां ह्योकाञ्जयित सर्वां ह्योकानंनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्युंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिङ्स्तृतीये लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्नि वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपाँघ्रन्नाहुंतीनां यज्ञेनं यज्ञस्य दक्षिणाभिर्दक्षिणानां ब्राह्मणेनं ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दंसाङ् स्वाध्यायेनापहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूँ ध्सृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्यंक्ता। यस्तित्याजं सिखिविद् सखांयं न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी शृणोत्यलक शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मांथ्स्वाध्यायोऽध्यंतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोगितित्यस्य सायंज्यं गच्छिति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अर्वाङ्कृत वां पुराणे वेदं विद्वा श्संमभितों वदन्त्यादित्यमेव ते पिरंवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च ह समिति यावंतीर्वे देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्मांद्वाह्मणेभ्यो

वेद्विद्धों दिवे दिवे नमंस्कुर्यान्नाश्चीलं कींत्येदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णातिं याजियंत्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्चित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीमुन्वातिरेचयित वरो दक्षिणा वरंणैव वर स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्प्रसद् आसंन स्यान्यं वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्भुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥
——————————————[१७]
कृतिधावंकीणी प्रविशतिं चतुर्धेत्यां हुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः प्राणौरिन्द्रं बलेन्

बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार स्देवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकिरेदमावास्याया ५ रात्र्यामुग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातंं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम कामांय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यममृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते हुत्वा प्रयंताञ्चलिः कवांतिर्यङ्काग्निम्भियेत् सं मांऽऽसिश्चन्तु मुरुतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः। सं माऽयमुग्निः सिंश्चत्वायुंषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत् मेति प्रतिं हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितर्थ्सर्वे सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिर्भिमंत्रयेत् त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्यंत स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत पुनीत पुवाऽऽत्मान्मायुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरं॥२२॥———[१८] भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वंः प्रपंद्ये भूभुवः स्वंः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म क्रांशं

प्रपेद्येऽमृतं प्रपेद्येऽमृतकोशं प्रपेद्ये चतुर्जालं ब्रेह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्येति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेर्जसा कश्यंपस्य यस्मै नमुस्तच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तरग हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्ह्दय १ संवथ्सरः प्रजनंनमिश्वनौं पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावरुणावपरपादांविग्नः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापित्रभेयं चतुर्थ स वा एष दिव्यः शांकुरः शिशुंमार्स्त १ ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जंयित जयंति स्वर्गं लोकं नाध्विन प्रमीयते नाफ्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानुपत्यः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रवस्य क्षितमिस् त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना ॥ श्रेष्ठोऽसि त्वां भूतान्युपे

| पर्यावर्तन्ते नमस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमः॥२३॥ |
|-----------------------------------------------------------------------------------------|
| [88] |
| नमः प्राच्यैं दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो |
| दक्षिणायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्यै |
| दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम उदींच्ये दिशे याश्चं |
| देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्च देवतां एतस्यां |
| प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंरायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च |
| नमो नमो ऽवान्तरायै दिशे याश्चं देवता एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो |
| गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो |
| गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥ |
| [5] |

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ ततीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बुर्हिः। केतो अग्निः। विज्ञांतम्गिः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मास् नृम्णन्धाथ्स्वाहां॥१॥

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय वार्यम्। आसुव्स्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। ज्जन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवन्श्रुतः स्वाहाँ॥३॥

सूर्यं ते चक्षुंः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवीर शरीरैः। वाचंस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध्र होत्रा मेर्यस्व स्वाहां॥४॥

महाहं विरहोतां। सृत्यहं विरध्वर्युः। अच्यंतपाजा अग्नीत्। अच्यंतमना उपवृक्ता। अनाधृष्यश्चाप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यां भिगरो। अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्धिधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तु श्छेदि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे। नमः पृथिव्ये स्वाहां॥५॥

वाग्घोतां। दीक्षा पत्नीं। वातोंऽध्वर्युः। आपोंऽभिगुरः। मनों हृविः। तपंसि

जुहोमि। भूर्भुवः सुवंः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥
बाग्योता नवं॥—————[६]
ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां पशून्पुष्टिं यशः। यज्ञश्चं मे

श्राह्मण एकहाता। स युज्ञः। स म ददातु प्रजा पुशून्पुष्ट्रि यशः। युज्ञश्च म भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूर्ता। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टिं यशः। भूर्ता च मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशंः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुंर्होता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशंः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशंः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्केल्पयाति। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशैः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्ं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशैः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेंज्सवी। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। तेज्स्वी चं भूयासम्। प्रजापितिर्दशहोता। स इद सर्वम्। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

पृत्विष्ठा प्राणक्षं मे भूयादनापृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥

[७]

अग्निर्यर्जुर्भिः। सुविता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थामुदैः। मित्रावर्रुणावाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियेर्ग्निभिः। मुरुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणिभिः। ओषंधयो बर्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेभनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतैः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगंती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥ वर्रणस्य विराट। यज्ञस्यं पङ्किः। प्रजापंतरनुंमितिः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूंतिः। सूर्यस्य मरींचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषींणामरुन्धती। पर्जन्यंस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्धाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चा-पंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अव्रहण्यः पर्वः
[९]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्तौभ्यां प्रतिंगृह्णामि। राजां त्वा वरुंणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिरंण्यम्। तेनांमृतृत्वमंश्याम्। वयों दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामाय। कामों दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविश। कार्मेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तै। पृषा ते काम दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वार्सः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋत्या अश्वतरगर्द्भौ। हिमवंतो

ह्स्तिनम्। गुन्धुर्वाप्रसुराभ्यः स्नगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। समुद्रायाऽऽपः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ँ। वैश्वान्रः प्रत्नथा नाकमार्रुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववज्ञनयंज्ञन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्। तेनांमृतत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम दक्षिणा। उत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु॥१९॥

व्या पुरुष्मपं प्रतिगृह्णा वर्ष व॥—————[१०]

सुवर्णं घुमं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्याऽऽत्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्दुद्दशंहोतारुमर्णे। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांनाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। शतर शुक्राणि यत्रैकं भवन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवन्ति। सर्वे होतारो यत्रैकं भवन्ति। समानंसीन आत्मा जनानाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रैकं भवंन्ति। चतुंरहोतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रंमृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सिवतारं बृह्स्पतिम्। चतुंरहोतारं प्रदिशोऽनुं

क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तपुसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारमोतम्। त्वष्टांर ५ रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारमेतम्। देवानां बन्धु निर्हितं गुर्हासु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। शृतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वमिदं वृणाति। इन्द्रंस्याऽऽत्मा निर्हितः पश्चेहोता। अमृतं देवानामार्यः प्रजानाम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांन सिवतारं मेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्यः। रिष्टिम रेश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याँ ऽऽण्डकोश स् शुष्मं माहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमं स्मि। सुवर्णं कोश्भ रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥ २३॥

अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कलां विचंक्षते। पाद् षड्ढांतुर्न किलांविविथ्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्ढा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढांतारमृतुभिः कल्पंमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपांन्ति। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनंसा चरन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्याऽऽत्मान शत्धा चरंन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जर्गतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृंप्तः। परेण तन्तुं परिष्चिय्यमानम्। अन्तरोदित्ये मनसा चरेन्तम्। देवाना हदेयं ब्रह्मान्वविन्दत्। ब्रह्मैतद्भह्मंण उन्नंभार। अर्क ॥ श्रीतंन्त । सिर्रस्य मध्यै। आ यस्मिन्थ्सप्त पेरंवः। मेहन्ति बहुला ॥ श्रियम्। बुह्वश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अर्च्युतां बहुलाः श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृह्धामिन्द्र गोमंतीम्। अर्च्युतां बहुलाः श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छतु। शृतः शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी र्श्मिरिन्द्रः। प्रमःहंमाणो बहुलाः श्रियम्। र्श्मिरिन्द्रः सिवृता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मध्मदिन्द्रियम्। मय्ययम्भिर्दधातु। हरिः पत्ङ्गः पंट्री सुंपूर्णः। दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रः कामवरं देदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सरि्रस्य मध्यै। अजंस्रुं ज्योतिर्नर्भसा सर्पदेति। स न इन्द्रेः

कामवरं देदातु। सप्त युंअन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वी वहति सप्तनामा। त्रिनाभि चक्रमजर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रे। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदेः। ततः क्षुत्रं बलुमोर्जश्च जातम्। तदस्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत॰ रश्मिं बोभुज्यमानम्। अपां नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्युः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिंणीः पिङ्ग्ला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्ग्ला एकंरूपाः। श्वतः सहस्रांणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। पिर् सर्वमिदं जगंत्। प्रजां पृश्न्थनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिश्मः पिर् सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृश्न्

विश्वरूपान्। पृतुङ्गम्क्तमसुरस्य माययाँ॥२९॥ हदा पंश्यन्ति मनसा मनीषिणंः। सुमुद्रे अन्तः कुवयो विचंक्षते। मरीचीनां

पदिमेच्छिन्ति वेधसंः। पृतङ्गो वाचं मनसा बिभिति। तां गेन्ध्वींऽवद्द्वर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुंमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं यज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः।

तृतीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्) तेषा र सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आर्ण्याः

पुशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता र अग्रे प्रमुंमोक्त देवः।

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आरुण्याः पुश्वो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषार् सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥ आत्मा जनांनां विकुर्वन्तं विपृथ्धं प्रजानां वसुधानीं विराजं चरेन्तं गोमंतीं में नियंच्छुत्वेकंचकं व्योमन्माययां देव एकंक्पा अष्टो चं॥——[११] सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतों वृत्वा।

अत्यंतिष्ठदृशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद १ सर्वम्। यद्भूतं यच् भव्यम्। उतामृतुत्वस्येशानः। यदन्नेनातिरोहंति। पुतावानस्य महिमा। अतो ज्याया ५ श्रु पूर्रुषः॥३२॥ पादौं उस्य विश्वां भूतानि। त्रिपादंस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुंषः।

पादौं ऽस्येहाभंवात्पुनंः। ततो विष्वङ्कांऋामत्। साशनानशने अभि। तस्माँ द्विराडं जायत विराजो अधि पूर्रंषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्चाद्भृमिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वस्नन्तो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः। सप्तास्यांसन्परिधयः। त्रिः सप्त स्मिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं बुर्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्युज्ञार्थ्सर्वहुतंः। सम्भृतं पृषद्गुज्यम्। पृश्र्इस्ताइश्चंके वायव्यान्। आरुण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्युज्ञार्थ्सर्वहुतंः। ऋचः सामानि जिज्ञरे। छन्दाईसि जिज्ञरे तस्माँत्। यजुस्तस्मांदजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चीभ्यादेतः। गावीं ह जिज्ञिरे तस्मात्। तस्माज्ञाता अजावयः। यत्पुरुषं व्यदधुः। कृतिधा व्यकल्पयन्। मुखं किमस्य कौ बाहू। कावूरू पादावुच्येते। ब्राह्मणौऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यः। पुन्धाः शूद्रो अंजायत। चन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रंश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीर्ष्णो द्यौः समंवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्। तथां लोका र अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्तु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरंः। नामानि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्ते। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्रऋः प्रविद्वान्प्रदिश्श्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भंवति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानंः

सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूर्रुषः पुरौंऽग्रुतौऽजायत कृतौऽकल्पयन्नासुं हे चं (ज्यायानिष् पूर्रुषः। अन्यत्र पुरुषः॥)॥————[१२]

अद्धः सम्भूतः पृथिव्ये रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विद्धंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजान्मग्रें। वेदाहमेतं पुरुंषं महान्तम्। आदित्यवंर्णं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वान्मृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां पुदर्मिच्छन्ति वेधसंः। यो देवेभ्य

तृतीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

आतंपति। यो देवानां पुरोहिंतः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंबुवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा असन्वशैं। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्यौं। अहोरात्रे पार्खे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

भूता सन्भ्रियमाणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। युदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुनरस्तंमेति। तमेव मृत्युममृतं तमांहुः। तं भर्तारं तमुं गोप्तारमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जर्गन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बुहूनेकुमहर्जिहार। अतन्द्रो देवः सदमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद यतं आबभूवं। सुन्धां च या र संन्द्धे ब्रह्मणेषः। रमंते तस्मिन्नुत जीर्णे शयाने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वांश्चरन्ति जानतीः। वथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमग्नि ।

तृतीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्) हंव्यवाह १ समिन्थ्से। त्वं भर्ता मांतरिश्वां प्रजानांम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमः। तवं देवा हव्मायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवों म एिध। नमों वामस्तु शृणुत हवंं मे। प्राणांपानावजिर स्थारंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानो। वधायं दत्तं तम्हर हेनामि। असंज्ञजान स्त आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तमिति। तद्वै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

हिर् हर्रन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशांनं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागांत्। अयंनं मा विवंधीर्विक्रंमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा वंधीः। मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्धृदंयं मृत्योः। यद्मीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नाधंमानो वृष्भं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथम्जामृतस्यं॥४६॥

पृष्यं ग्रार्थ्यार वा [१५]

त्रिणीर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्।

उपयामगृंहीतोऽसि सूर्याय त्वा भाजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भाजंस्वते॥४७॥——[१६]

र्ड्युष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तींमुषस्ं मर्त्यांसः। अस्माभिंरू नु प्रतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंपुरीषु पश्यान्॥४९॥

ज्योतिंष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वंतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहां द्यासाय स्वाहां शुचे स्वाहां शोकाय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्यायै स्वाहा सर्वस्मै स्वाहाँ॥५१॥

चित्तर संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तिनंम्ना पशुपतिई स्थूलहृद्येनाग्निर

तृतीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

हृदंयेन रुद्रं लोहितेन शर्वं मतस्त्राभ्यां महादेवमन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहन ई शिङ्गीनिकोंश्याम्याम्॥५२॥ .[२१]

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्धं जिंगात् भेषजम्। शं नी अस्त् द्विपदें। शं चतुष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमों नमों वाचे नमों वाचस्पतंथे नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपतिभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतों मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींनमत्रुकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां ज्ष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपुस्तरंणुमुपंस्तृण उपुस्तरंणं मे प्रजाये पश्नां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजाये पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास । शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमों नमों वाचे नमों

वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास १ शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों विदिष्ये ब्रह्मं विदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पश्नां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मध्मतीं देवेभ्यो वाचमुद्यास । शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

युअते मर्न उत युंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विप्रिश्चतंः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवृतः परिष्टुतिः। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंसवे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अभ्रिरिस् नारिरिसः। अध्वर्कृद्देवेभ्यः।

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सर्चां। प्रैतु ब्रह्मंणुस्पतिः। प्र देव्यंतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पुङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीविम्रीरुस्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्धासंमद्य। मखस्य शिरंः॥४॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेंहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला करोतु। मखस्य शिरोंऽसि॥६॥

युज्ञस्यं पृदे स्थंः। गायुत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मृखस्य रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्केन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मृखोंऽसि॥७॥

प्रे शर्र क्रतावरिष्क्र ब्यासंग्र मृखस्य शिरु शिरु शिर्र शिर्र हि वर्ष व॥

[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रुणस्त्वा धृतव्रंत आधूपयत्। मित्रावर्रुणयोर्ध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषे त्वा। शोचिषे त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं महिना दिवम्। मित्रो बंभूव सप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवो देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिवृतोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्याः। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृण। उत्तिष्ठ बृहन्भव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवे त्वा।

सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्ममांमुष्यायणं विशा पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वोर्क्। छृणत्तुं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचरिष्यामः। होतंर्घ्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशावधिश्रय। प्रतिप्रस्थात्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्र सामिभ्राक्तंखन्त्वा। विश्वैद्वैरनुंमतं मुरुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियृष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचरत॥११॥

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतेर्घुर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां।

मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्यै स्वाहां। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहां। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहां। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनक्ता।१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोंऽसि। सश्सींदस्व महा असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणतः। इन्द्रस्याऽऽधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवृतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरतः॥१४॥

मित्रावरुंणयोराधिपत्ये। श्रोत्रंं मे दाः। विधृतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षुत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥ सूप्सदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्रे अन्तराश अमित्रान्। तपाशश्संमरुषः परस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्तामुजरां अयासंः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

स्ममा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिरेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भिर्यदतो न ऊनम्। आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासि। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं तें अन्यद्यंजतं तें अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा तें पूषित्रिह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ञतं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रैष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥
अत्रक्तमार्वेद्वतुतः पहि प्रतिमा असि यज्ञततं अर्यक्षागंतमुस्येकं वा [६]

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदींचीः। दशोर्ध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धृह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रांचयतु त्रैष्ट्रंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो म्रुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव धर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मनुष्येषु। सम्राह्मर्म रुचितस्त्वं देवष्वायुष्माङ्स्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यसि। रुचितोऽहं मनुष्येष्वायुष्माङ्स्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितोऽहं मनुष्येष्वायुष्माङ्स्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगसि। रुचं मिये धेहि॥२०॥

मिय रुक्। दर्श पुरस्ताँद्रोचसे। दर्श दिक्षणा। दर्श प्रत्यङ्कः। दशोदङ्कं। दशोध्वीं भांसि सुमन्स्यमानः। स नेः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

घर्मो रुचीय॥२१॥

—[६] सुध्रीचीः

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वीभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवनं सिवत्रा। सश्सूर्यण रोचते॥२२॥

स्वाह्य समग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सः सूर्येणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभासि रजसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तिरक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृषि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवृश्रूस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तृपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥ गर्भों देवानाँम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानाँम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। स॰ सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं घर्म वर्चीदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चीदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार श्रे शृतश् हिमाः। तुन्द्राविण श्रे हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टीमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विंदेय तवं सुन्दिशि। माऽहश् रायस्पोषेण वि योषम्॥२६॥

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामाददे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित् एहिं। सरस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥ अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनः शश्यो यो मंयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रधा वंसुविद्यः सुदत्रः। सरंस्वति तिमह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घर्मायं शि १ ष। बृहस्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ पेरंवः। विष्वग्वृतो लोहितेन।

अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्ये पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥
गायत्रोंऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रांश्विना

मधुनः सार्घस्य। घुमं पांत वसवो यजंता वट्। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रुश्मये वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं हृविरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिस सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

पहि पहि पिनस्व गृह्णि नवं चा [८]
सुमुद्रायं त्वा वातांयु स्वाहाँ। सुलिलायं त्वा वातांयु स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा

वार्ताय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वार्ताय स्वाहाँ। अवस्यवेँ त्वा वार्ताय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वार्ताय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वार्ताय स्वाहाँ। अग्नयेँ त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहाँ। सृवित्रे त्वं भूमते विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहाँ। यमाय त्वाऽि रस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानं याडिह। स्वाहां कृतस्य घूर्मस्य। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्नये युज्ञियांय। शं यज्जीभिः। अश्विना घूर्मं पांत हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंरूतिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्स्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घुर्ममंपातमिथना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंरूतिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अंम रसाताम्। तं प्राव्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्च प्रदिशों गच्छ। देवान्धर्मपान्गच्छ। पितृन्धर्मपान्गच्छ॥३५॥ अपितृन्धर्मपान्गच्छ॥३५॥ (९)

ड्षे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अ्द्धः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वनस्पितंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कुन्दयात्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निंर्धं गंच्छ। यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। पूष्णे शर्रसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याङ् स्वाहाँ। पितृभ्यों घर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहां। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहां। अपीपरो माऽह्रो रात्रिये मा पाहि। एषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंमें दाः। वर्चसा माऔः। अपीपरो मा रात्रिया अह्रों मा पाहि॥३९॥

पुषा तें अग्ने स्मित्। तया सिमध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माऔः। अग्निज्यीतिज्यीतिरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत हिवः। मध्रं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नों ऽसि मा मां हि १ सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वाजंवतः पितुमतंः। अङ्गिंरस्वतः स्वधाविनंः। अशीमहिं त्वा मा मां हि १ सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रभ्यः॥४१॥
बृह्यवर्षुसार्य पीपिह स्कुन्यवर्षुद्वर्य कुद्रहोंके स्वाहाऽहों मा पाहुगो सुप्त वं॥—————[१०]

घर्म् या तें दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राह्मणे। या हंविर्धानें। तान्तं पुतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरंक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या राजन्यें। याऽऽग्रींधे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां परस्पायाः। अन्तरिक्षस्य तनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षत्रस्यं तनुवः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायै। चक्षुंषस्तनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वृत्रगुरंसि श्रं युधांयाः॥४४॥

शिशुर्जर्नधायाः। शं च् विक्षे परि च् विक्षे। चतुः स्रिक्तिर्नाभिर्ऋतस्यं। सदो विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप् द्वेषो अप् ह्वरंः। अन्यद्वेतस्य सिश्चम। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वृधिषीमहिं च वयम्। आ चं प्यासिषीमहिं॥४५॥

रित्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्वाः। तस्यं ते पृद्वद्वंविधानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौंपृत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥

व्यंसौ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। अचिक्रदद्वृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपों दृहशुषीः। तह्तेनाव्यांयन्। तद्नववैत्। इन्द्रों रारहाण आंसाम्। परि सूर्यंस्य परिधीश्रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणातु। दिव्यो गंन्ध्वों रजंसो विमानः। यद्वां घा स्त्यमुत यन्न विद्या।४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नेंमविन्दचरंणे नदीनांम्। अपांवृणोद्दरो अश्मेव्रजानाम्। प्रासान्यन्थर्वो अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानादहीनम्। पुतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगाः। इदम्हं मंनुष्यो मनुष्यान्। सोमंपीयानुमेहि। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंसस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यमस्मभ्य र सिनम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥

याऽऽप्रींध्रे तान्तं एतेनावं यज्ञे स्वाहा धर्मणा शुं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेण् निषंत्तो विद्य संन्त्वष्टौ॥—————[११]

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषंधीना ५ रसः।

वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्ध्वं मनंः सुवर्गम्॥५१॥

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कान्ष्यभो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजीनि प्राजीनि। आ स्कन्नाज्ञायते वृषाः। स्कन्नात्

प्रजंनिषीमहि॥५२॥

————[१३] या पुरस्तांद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या दक्षिणृतः। या पृश्चात्। योत्तंरुतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सर्रस्वत्यै स्वाहाँ॥५४॥

_____[१५]
पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिंषाय

स्वाहाँ। पूष्णेऽङ्घृंणये स्वाहां पूष्णे नुरुणाय स्वाहाँ। पूष्णे सांकेताय स्वाहाँ॥५५॥

उदंस्य शुष्मौद्भानुर्नात् बिर्भर्ति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मथ्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिहु साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

तेन् सूर्यमरोचयन्। घृमः शिर्स्तद्यम्ग्निः। पुरीषमसि सं प्रियं प्रजयां पशुभिर्भ्वत्। प्रजापतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भवा सींद॥५६॥ यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सींद। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५७॥

अग्निरंसि वैश्वान्रोंऽसि। संवथ्मरोंऽसि परिवथ्मरोंऽसि। इदावथ्मरोंऽसीद्वथ्मरों इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्रारदुत्तंरः पृक्षः। हेम्न्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरुपृक्षाः पुरींषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदिति। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तया देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवः सीद॥५८॥

समंने बहूनाम्। युवांन् सन्तं पितितो जंगार। देवस्यं पश्य काव्यं मिहत्वाद्या ममारं। सह्यः समान। यद्दते चिंदिभिश्रिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मघवां पुरोवसुंः॥५९॥ निष्कर्ता विहुंतुं पुनंः। पुनंकुर्जा सह रुय्या। मा नो घर्म व्यथितो विंव्यथो

नः। मा नः परमर्धरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माङ् स्तमंस्यन्तरा धाः। मा रुद्रियांसो

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्य १ हंसः। विधुन्दंद्राण १

अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्तां। मा द्यावांपृथिवी हींडिषाताम्॥६०॥ उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमंसस्परिं। उदुत्यं

चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥

पुरोवसुंर्हीडिषाता र सुपर्णाः॥

भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धमो विभात मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्य सुम्नमंशीमिह। तस्य भूक्षमंशीमिह। तस्य त इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि॥६२॥

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच् तृष्णां च। अस्रुक्वानांहुतिश्च। अ्शन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। ताभिर्मुं गंच्छ। योऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥६३॥

स्निक्ष स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चे शीता चे। उग्रा चे भीमा चे। स्दाम्नीं सेदिरनिरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवेः। ताभिरमुं गेच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे वयं द्विष्मः॥६४॥ धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयः श्चा निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। सहसह्वा इश्व सहंमानश्च सहंस्वा इश्व

सहीया ५ श्व। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

[२५] अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासास्त्वा श्रपयन्तु।

ऋतवंस्त्वा पचन्तु। संवथ्सरस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

खट फड़ जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूराणि॥६८॥

विगा इंन्द्र विचरंन्थ्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वञ्जेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतौंऽस्य प्रहंर भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवंदस्व। मृत्यो मृत्युना संवंदस्व। नर्मस्ते अस्तु भगवः। सुकृत्ते अग्ने नर्मः। द्विस्ते नर्मः। त्रिस्ते नर्मः। चतुस्ते

नर्मः। पश्चकृत्वंस्ते नर्मः। दशकृत्वंस्ते नर्मः। शतकृत्वंस्ते नर्मः। आसहस्रकृत्वंस्ते नर्मः। अपरिमित्कृत्वंस्ते नर्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥६९॥ असृन्मुखो रुधिरेणा्व्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि। गृध्रंः सुपूर्णः कुणपं निषेवसे। युमस्यं दूतः प्रहितो भ्वस्यं चोभयौः॥७०॥ यदेतहृंकसो भूत्वा। वाग्देंच्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥ यदींषितो यदि वा स्वकामी। भयेडंको वदित वाचंमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवाम्समभ्यं कृण्तं गृहेषुं॥७२॥ [38]

चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

दीर्घमुखि दुर्हणु। मा समं दक्षिणुतो वंदः। यदि दक्षिणुतो वदाँद्विषन्तं मेऽवं

| 2 | | |
|---------|-----------------------------------------------|--|
| बाधासे। | l <i>(</i> | |

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वृदसिं। द्विषतों नः परावद। तान्मृत्यो मृत्यवे

नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छन्तु। अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥ ————[३४]

प्रसार्यं सुक्थ्यौ पतंसि। सूव्यमिक्षं निपेपिं च। मेहकंस्य चुनामंमत्॥७६॥——[३५]
अत्रिणा त्वा क्रिमे हिन्म। कण्वेन जुमदंग्निना। विश्वावंसोक्रह्मणा हुतः।
किमीणा राजां। अप्येषा स्थपतिरहतः। अथो माताऽथो पिता। अथौ स्थूरा

अर्थौ क्षुद्राः। अर्थो कृष्णा अर्थौ श्वेताः। अर्थो आशार्तिका हृताः। श्वेतार्भिः सह

सर्वे हताः॥७७॥

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूंणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारया विद्धामि। अधरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी रन् प्रवेशय। मरींची्रुप् सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोऽमुं नांशय। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥८०॥

————————————————————————[३९] भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवैः। भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि। चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यों वायि निधाय्यों वायि निधाय्यों वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

पृथिवी समित्। तामग्निः समिन्धे। साऽग्नि समिन्धे। तामह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन समिन्ता इस्वाहाँ। अन्तरिक्ष समित्॥८२॥

तां वायुः सिमंन्धे। सा वायु सिमंन्धे। तामह सिमंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेर्जमा। वर्चमा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन समिन्ता इस्वाहाँ। द्यौः समित्। तामांदित्यः समिन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य र समिन्धे। तामहर समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन समिन्ता एसवाहाँ। प्राजापत्या में समिदंसि सपत्रक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्ने व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः समित्। तामादित्यः समिन्धे। साऽऽदित्यः समिन्धे। तामहः समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिमंन्ता हु स्वाहाँ। अन्तिरक्षिर सिमंत्। तां वायुः सिमंन्धे। सा वायुः सिमंन्धे। तामहः सिमंन्धे। सा मा सिमंद्या। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिमंन्ता्र्ं स्वाहाँ। पृथिवी सिमित्। तामृग्निः सिमंन्थे। साऽग्निः सिमंन्थे। तामृहः सिमंन्थे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्येन सिमंन्ता इस्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदेसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकुं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते ऽग्नें व्रतपते। व्रतानांं व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकुं तन्में ऽराधि॥८८॥ शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भवन्तु नः

शः ना वातः ववता नातारवा शं नस्तविषु सूवन अहान्स नवन्तु नुः शः रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्यंच्छत् शर्मादित्य उदेत् नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्यांम सन्दिशे। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छिथ्स्मह्मवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। प्रतिष्ठासे प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायांश्छिथ्स्मह्मप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजां वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वात् आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपंः। यद्दो वांतते गृहेऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नों हृदे प्र ण आयूर्ंषि तारिषत्। इन्द्रंस्य प्रपंद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहदग्नयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेथां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेथां मियं प्रजां मिय सूर्यो भ्राजो दधातु॥९०॥ द्युभिरक्तुभिः परिपातम्स्मानिरष्टिभिरिश्वना सौर्भगेभिः। तन्नो मिन्नो वर्रणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां नश्चित्र आ भुंवदूती सुदावृधः सर्खां। कया शचिष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मश्हिष्ठो मध्सदन्धंसः।

दृढाचिंदारुजे वसुं। अभी षु णः सखींनामविता जीरतृणाम्। शृतं भेवास्यूतिभिः।

वयंः सुपूर्णा उपंसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि

गृहों ऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः

प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनौतां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं

चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयंव बद्धान्॥९१॥

शं नो देवीरिभष्टिय आपो भवन्तु पीतयेँ। शं योरिभस्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपो जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच रं शमयतु। अन्तिरंक्ष र शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तर शुच रं शमयतु। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच रं शमयतु। पृथिवी शान्तिं- रन्तिरंक्ष शान्तिद्यौः शान्तिर्दिशः शान्तिरंगान्तरिद्शाः शान्तिरंगिः शान्तिर्वायः शान्तिरादित्यः शान्तिर्श्रे शान्तिर्वायः शानित्रं शान्तिर्वायः शानित्रं शान्तिर्वायः शानित्रं शान्तिर्वायः शानित्रं शानित्यः शानित्रं शानित्

शान्तिं ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिं रेव शान्तिः शान्तिं अस्तु शान्तिः। तयाह ५ शान्त्या संवंशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानि मोत्तिष्ठन्तमनूत्तिष्ठन्तु मा मा । श्रीश्र हीश्र धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रुद्धा सुत्यं धर्मश्चैतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना १ रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता १ अनुं। तचक्षुंर्देविहेतं पुरस्तांच्छुऋमुचरेत्। पश्येम शुरदेः शुतं जीवेम शुरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदौम शरदेः शतं भवाम शरदेः शतर शृणवीम शरदेः शतं प्रब्रंवाम शरदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक सूर्यं दशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृष्भो लोहिताक्षः सूर्यों विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मंणश्चोतंन्यसि ब्रह्मंण आणी स्थो ब्रह्मंण आवर्पनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुंरयाणि सर्वमायुंरयाणि। आभिर्गीभिर्यदतो न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासि भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्॥९३॥ प्रावांदिष्म तन्नो वाचे या चोदिता या चानुंदिता तस्यै वाचे नमो नमो वाचे नमो

वाचस्पतंथे नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपतिभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींनमत्रुकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सृत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपुस्तरंणुमुपंस्तृण उपुस्तरंणं मे प्रजायें पशूनां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजायें पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां न्स्तथ्सहासदितिं। तेषांं कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्धः। परीणज्ञंघनार्धः। मरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांन्त्रामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंध्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। सुव्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मांदिषुधन्वं पुण्यंजन्म। यज्ञजन्मा हि॥२॥

तमेक्र् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्विनम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृष्णुवन्ति। सौंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँक्रामत्। तद्देवा ओषधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वै नामैते॥३॥

तथ्स्मयाकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्मांद्वीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेतव्यम्। तेजंसो धृत्यै। स धनुः प्रतिष्कभ्यांतिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं व इम इस्याम। यत्र कं च खनांम। तद्पोऽभितृंणदामेति। तस्मांदुपदीका यत्र कं च खनंन्ति। तदपोऽभितृंनदन्ति॥४॥

वारंवृत् ध्रांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्गाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धर्मस्यं धर्मत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीरत्वम्॥५॥

यद्स्याः स्मभंरन्। तथ्स्म्राज्ञाः सम्राद्वम्। तः स्तृतं देवतां स्त्रेधा व्यंगृह्णत। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन यज्ञमानाः। नाशिषोऽवारुन्धत। न सुंवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजो वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यामेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषोऽरुंन्धत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तिच्छिरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषो रुन्धे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आश्विनप्रवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो श्रीत वृज्ञित महावीरत्वर्मव्रवया वा

[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुष्पादः पृशवंः। पृशूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठति। छन्दा रंसि देवेभ्योऽपाँक्रामन्। न वोऽभागानि ह्व्यं वंक्ष्याम् इति। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥ देवतांयै वषद्भारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोति। छन्दा रंस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों ह्व्यं वंहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होतव्यं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न

होत्व्या(३)मितिं। ह्विर्वे दीक्षितः। यज्ञुंहुयात्। ह्विष्कृंतं यजंमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृतं यजंमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यज्ञपुरुरुन्तरेति। गायत्री छन्दाङ्स्यत्यमन्यत। तस्यै वषद्कारौऽभ्यय्य शिरौऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरोऽभवत्। यः पृशून्। सोऽजाम्। यत्खांदिर्यभ्रिभंवंति। छन्दंसामेव रसेन युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जैव युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुः॥११॥

तेजंसैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरित। यहैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रमुव इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह् यत्यै। वर्ज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्यैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसमित्यांह॥१३॥

पाङ्को हि युज्ञः। देवा युज्ञं नयन्तु न इत्याह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्याह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऋद्यासंमद्य मुखस्य शिर् इत्याह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदाह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्याह। निर्दिश्यैवैनद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चेतुर्थं १ हेरित। अपेरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खुनादग्रे हरित। तस्मौन्मृत्खुनः केरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्याह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भेरति। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकवृपा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र्ष्ट् ह्येतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवधिरो भवति। य एवं वेदे। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदेयच्छत्। स यत्रं यत्र प्राक्रंमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूंतीकस्तम्बे परांत्रमत। सोंऽद्भियत। सोंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं दंधित। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भरित। यद्ग्राम्याणां पशूनां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पशूञ्छुचाऽर्पयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भरित। आर्ण्यानेव पशूञ्छुचार्पयित। तस्मांथ्समावंत्पशूनां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आरुण्याः पृशवः कनीया सः। शुचा ह्यंताः। लोमृतः सम्भेरति। अतो ह्यंस्य

मेध्यम्। परिगृह्या यंन्ति। रक्षंसामपंहत्यै। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यैं। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥ तेजं एवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कपालैः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपयेत्। अर्मकपालैः स॰सृंजति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचार्पयिति। शर्कराभिः सर्सृजिति धृत्यै। अथों शन्त्वायं। अजलोमैः सरसृजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तनूः। यदजा। प्रिययैवैनं तनुवा स॰सृंजति। अथो तेर्जसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सर्मृजति। यज्ञो वै कृष्णाजिनम्। यज्ञेनैव यज्ञर सर्मृजति॥२०॥ याज्यांये न जुंहुयादविंशद्वेणुः शान्त्ये पुङ्किरांधसमित्यांह हरति दिहन्ति पुराक्रमुताविंशत् प्रजायमानानार सृजति शुन्त्वायाष्टी चं॥______[2] परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवर्यं चाऽऽदित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवृग्यंः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमाह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्याह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्याह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्यं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। छन्दोभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवेनं करोति। यर्जुषा बिलं करोति व्यावृत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। य्ज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। य्ज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। एतावद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। परिग्रीवं करोति धृत्यैं। सूर्यस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वशकनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दा ५सि निष्पत्॥२५॥

वारुणों ऽभीद्धेः। मैत्रियोपैति शान्त्यैं। सिद्धे त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्वंपत्वित्यांह। सिवतृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपति। अपद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥ तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ बृहन्भवोध्वंस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौं उन्धो भिवतोः। यः प्रवर्णमन्वीक्षते। सूर्यस्य त्वा

चक्षुषा उन्वीक्ष इत्यां ह। चक्षुंषो गोपीथायं। ऋजवें त्वा साधवें त्वा सुक्षित्ये त्वा

भूत्ये त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्ष साधु। असौ सुंक्षितिः॥२७॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयति। अर्चिषे त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति।

दिशो भूतिंः। इमानेवास्मै लोकान्कंल्पयित। अथो प्रतिष्ठित्यै। इदमहम्मुमांमुष्यार् विशा पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामीत्यांह। विशैवैनं पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात्। विशैवैनं पर्यूहित। पशुभिरिति वैश्यंस्य। पशुभिरेवैनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनां च्छृण्णम्॥२८॥

ब्रह्मन्प्रचंरिष्यामो होतंर्घमम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्हि बृह्स्पतिः। यद्वह्या। तस्मा एव प्रतिप्रोच्य प्रचरित। आत्मनोऽनाँत्यै। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समंध्यति। मदंन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्यै। अनंवानम्। प्राणाना् सन्तंत्यै। त्रिष्टुर्भः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमुन्नाद्यंस्य सन्तंत्ये। अथो रक्षंसामपहत्ये। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवरुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमित्स्यावंरुद्धै। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्मुः औः। यन्मौओ वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्धयित। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजंमाने दधाति। सप्त जुंहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सिवता मध्वांऽनिक्कित्यांह॥३३॥ तेजंसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपांस्यित। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। पृत्वानादीप्योपांस्यित। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अप्रतिशीर्णाग्रं

भवति। पृतद्वंरिह्र्ह्यंषः॥३४॥ अर्चिरंसि शोचिरसीत्यांह। तेजं एवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं दंधाति। स॰सींदस्व महार असीत्यांह। महान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजंः। ये दंर्शपूर्णमासयौः। अर्थं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशाँस्त इति। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो युज्ञः। उपरिष्टादाशीर्न्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूङ्ष्याहं। शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्थे। आयुंः पुरस्तादाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमृत्तरुतः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मै समीचो दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितंः स्थ परिचित् इत्यांह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतो र्श्मयः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्यः रुश्मिभिः पर्यूहिति।

तस्मादसावांदित्यों ऽमुष्मिं लोके रिमिभः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्मौद्भामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा और्च्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवंन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वादेश मासाः संवथ्मरः। संवथ्मरमेवावंरुन्धे। अस्तिं त्रयोदशो मास इत्याहः। यत्रयोदशः परिधिर्भवति। तेनैव त्रयोदशं मास्मवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिरसीत्यांह व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंमुभयतः परिंगृह्णाति। अर्ह्नं बिभर्षि सार्यकानि धन्वेत्यांह॥३९॥

स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतमसीतिं धवित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यावृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्घा ऋतवंः।

ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भंवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुव्माक्रांमति। यित्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता ह् वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां उभवत्। तस्मान्निः प्रित्यं न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रुस्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्र्ये। स्वती धून्वन्ति। तस्माद्य स्वतः पवते॥४२॥ व्यास्याद्य व्यास्याद्य प्रमावतः प

अग्निश्वा वसुंभिः पुरस्ता द्रोचयत् गायत्रेण् छन्द्रसेत्यांह। अग्निर्वे वसुंभिः पुरस्ता द्रोचयत् गायत्रेण् छन्द्रसेत्यांह। अग्निर्वे वसुंभिः पुरस्ता द्रोचयति गायत्रेण् छन्दंसा। स मा रुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रेष्ट्रंभेन् छन्द्रसेत्यांह। इन्द्रं एवैन र् रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रेष्ट्रंभेन् छन्द्रसेत्यांह। इन्द्रं एवैन र्

आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। वरुंणस्त्वाऽऽदित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्द्सेत्यांह। वरुंण एवैनंमादित्यैः पश्चाद्रोचयति जागंतेन छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंच्येत्वानुंष्टुभेन छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंच्येत्यानुंष्टुभेन छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैर्देवैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्यांह। बृह्स्पतिंरेवैनं विश्वैर्देवैरुपरिष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्यंष देवेषुं। रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्वर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयास्मित्यांह। रुचित

रुगित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। तं यदेतैर्यजुर्भिररोंचयित्वा। रुचितो घर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यजमानः। अथ यदेनमेतैर्यज्भी रोचियत्वा। रुचितो घर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥ पुश्चाद्रोचयित् जागंतेन छन्दंसा पाङ्केन छन्दंसा स मां रुचितो रांच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशांस्ते शास्तेऽष्टौ चं॥______ 🗸 📗 शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवर्ग्यः। ग्रीवा उपसदंः। पुरस्तांदुपसदाँ प्रवर्ग्यं प्रवृंणक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृंणक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥ ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणक्ति। द्वादंश मासाः

एवैष मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मिय

ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्ति। द्वादंश् मासाः संवथ्मरः। संवथ्मरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंश्शितरर्थमासाः। अर्थमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्र् हि शिरंः॥४७॥
अश्विष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावानिश्विष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य

शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां पुशूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावयित्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमानमित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तमित्यांह। आ च ह्यंष परां च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसान् इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु मार्ध्वीभ्यां मधु मार्ध्वचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गृतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समृग्निर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यवेषोंऽग्निनां

धर्ता दिवो विभांसि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयित॥५१॥ दिवि देवेषु होत्रां यच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ श्लोकान्थ्यन्दंधाति। विश्वांसां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयित। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्याहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयित। त्योजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुविमत्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्धे॥५२॥

सङ्गच्छंते। स्वाहा समग्निस्तपंसा गतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तंरेणाभिगृंणाति।

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्यंष देवानाम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मांदेवमांह। पितः प्रजानामित्यांह। पितह्यंष प्रजानाम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित् होंष केवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्ट सं सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवर्णं च संशास्ति। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। पिता नोंऽसि पिता नों बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्ं। न वै तेंऽवकाशा भंवन्ति। पत्नियै दशमः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। यज्ञस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधुः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। पुता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजानाः सृष्ट्यें। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे पर्जन्यों वर्षित। वर्षुंकः पर्जन्यों भवति। सं प्रजा एपन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चिसनों भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवैक्षन्ते। सर्वमायुर्यन्ति। न पत्यवैक्षेत। यत्पत्यविक्षेत। प्रजायेत। प्रजायेत। प्रजा त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजायेत। नास्यै प्रजा निर्दहेत्। तिरुस्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजायते। नास्यै प्रजा निर्दहित। त्वष्टीमती ते सप्येत्याह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायन्ते॥५७॥

ऋत्वो हि शिर सर्वप्रे प्रवंपान्वतिपद्मानिस्त्यांह गतेत्वांह शारदावेवास्मां ऋत कंत्यवि रूथे कवीनामित्यांह प्राणः प्रविद्याति भवनि वाचयि चलारि

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इति रश्नामादत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्राऽसीत्यांह यज्जंष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सरंस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्यै देवनामानि। देवनामरेवैनामाह्वंयति। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अस्यै मनुष्यनामानि॥५८॥

मृनुष्यनामेरेवेनामाह्वयिति। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वयिति। अदित्या उष्णीषंम्सीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तिवत्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥

स्वयैवनं देवतंयोपावंसृजति। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मै भेषजं करोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनौम्। उस्रं घर्मं शिर्षोस्रं घर्मं पांहि घर्मायं शिर्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्मैं देहीति। ताहगेव तत्। बृहस्पतिस्त्वोपं सीदत्वित्यांह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदित। दानेवः स्थ पेरंव इत्यांह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहितेनेत्यांह व्यावृत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्यै पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भागधेयेन समर्धियति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रेष्ट्रंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज पुवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यामेव पूर्वोभ्यां वषंद्र्रयाता इतिं। इन्द्रौश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वोभ्यां वषंद्ररोति। अथों अश्विनांवेव भागधेयेन समर्धयति॥६२॥ धर्मं पात वसवो यज्ञांता विद्वत्यांह। वसनेव भागधेयेन समर्धयति॥ यदंषदर्यात।

घुर्मं पात वसवो यजंता विडित्याह। वसूनेव भागधेयेन समर्धयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यात्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षारंसि युज्ञर हंन्युः। विडित्यांह। प्रोक्षंमेव वर्षद्वरोति। नास्यं यातयांमा वषद्वारो भवंति। न यज्ञ रक्षार्रसि

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मये वृष्टिवनये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यों रिष्मः। स वृष्टिविनः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं हिवर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तरिक्षेणैवैनुमुपंयच्छिति। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमरहित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शक्यमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत आदंत्ते। वि वा एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्नंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाित। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहिश्साये॥६५॥

सुवंरिस सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पञ्चांह॥६६॥

पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नये त्वा वसुंमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्योंऽग्निर्वसुंमान्। तस्मां एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। वर्रणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अपसु वै वर्रुण आदित्यवान्। तस्मां पृवैनंं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंं जुहोति। स्वित्रे त्वंभुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रभुमान् वाजंवान्। तस्मां पृवैनंं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥

तस्मां एवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजेवान्नाद्यमवंरुन्धे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता १ सुज्योतिज्योतिषा्ड् स्वाहा रात्रिज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्योतिषाड् स्वाहेत्यांह। आदित्यमेव तदमुष्मिं लोके उह्नां परस्तां द्वाधार। रात्रिया अवस्तांत्। तस्मादसावांदित्यों ऽमुष्मिँ हो कें उहो रात्राभ्यां धृतः॥६९॥ मुनुष्युनामानि पुशवः सीद्वित्याहेन्द्रायेत्याहार्थयति प्रन्ति गृह्णात्यहिर्रसायै पञ्चाऽहादित्यवंते स्वाहेत्यांह पितृमानैति चुत्वारि च॥—————[9]

विश्वा आशां दक्षिण्सिदित्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रींणाति। अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानंयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्भांग्धेयेन समर्धयित। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांग्धेयेन समर्धयित। समर्धयित। स्वाहाऽग्नये यज्ञियांय शं यज्जंिभिरत्यांह। अभ्येवैनं घारयित। अथो

हविरेवार्कः॥७०॥

प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

स्वाहेन्द्राविडित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घर्मस्यं यजेति। वर्षद्वृते जुहोति। रक्षंसामपंहत्ये। अनुंयजित स्वगाकृत्ये। घर्ममंपातमिश्वनेत्यांह॥७१॥ पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अंमर्सातामित्याहानुंमत् तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नमः पृथिव्या इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्यांह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयित। दिवं

अश्विना घुर्मं पांत हार्दिवानमहर्दिवाभिरूतिभिरित्यांह। अश्विनांवेव

भागधेयेन समर्धेयति। अनु वां द्यावापृथिवी मर्सातामित्याहानुमत्यै। स्वाहेन्द्रीय

दिक्ष्वेंवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितॄन्धंर्म्पान्गच्छेत्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुंकः पूर्जन्यों भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः।

गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्याह। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चे

यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्देक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पींपिह्यूर्जे पींपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमा शाँस्ते। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमा शाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वातः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सादयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्ठिं। तेनैंन १ सह निर्धं गमयति। पूष्णे शरंसे स्वाहेत्यांह। या एव देवतां हुतभागाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं एवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रंतिराः। तेभ्यं एवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों घर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों घर्मपाः। तेभ्यं एवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांगधेयेंन समर्धयति। सर्वतः समनिक्ति। सुर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उदंश्चं निरस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव

दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। नान्वींक्षेत्। यदन्वीक्षेत्॥७८॥ चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपींपरो माऽह्रो रात्रियै मा पाह्येषा ते अग्ने सुमित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽश्लीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपींपरो मा रात्रिया अह्नो मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वाऽऽयुंर्मे दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः

स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होतव्या(३)मिति॥७९॥

यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुत १ ह्विर्मधुं हिविरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण पृवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्साये। अश्यामं ते देव घर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोंऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्साये। तेजंसा वा पृते व्यृध्यन्ते। ये प्रवृग्येण चरन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं पृवात्मन्दंधते॥८१॥

संवथ्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तथ्सङ्श्यंति। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। विभ्राजिं सौर्ये ब्रह्मसन्त्र्यद्धत। यत्किं चं दिवाकीृर्त्यम्। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मांदेतद्वृतं चार्यम्। तेर्जसो गोपीथायं। तस्मांदेतानि यजूरंषि विभ्राजः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिष्मिभ्य इति प्रातः सर्भादयति। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्य इति सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन्र समर्धयति॥८२॥

अक्रुक्षिनेत्यांह प्रविशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिन्वयति धार्येत्यांहु वाचीं धर्मुपास्तेभ्यं पुवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायथ्सुप्त च॥______[८]

घर्म् या तें दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुंमितिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्यांह। दिव एवेमाँ लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत्। जिह्मं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्रमुद्वांसयित। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शुफोप्यमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मानमेवैन् सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्रोके भविति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोता उन्ववैति। साम् वै रेक्षोहा। रक्षंसामपंहत्ये। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो रक्षा इस्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रेक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्ये॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुंद्वासयैत्। पृथिवी शुचाऽपंयेत्। यद्फ्सु। अपः शुचाप्येत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽपंयेत्। यद्वनस्पतिषु। वनस्पतीं ञ्छुचाप्येत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥ अमृतं एवेनं प्रतिष्ठापयति। वृत्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः परिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावानेवाग्निः। तस्य शुचर् शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचर् शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मांदेवमांह। सदों विश्वायुरित्यांह। सदों हीयम्। अप द्वेषों अप ह्वर् इत्यांह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषमितिं द्वा मधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवनंमन्नाद्येन समर्थयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिनामांसि दिव्यो गंन्ध्वं इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुंषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। व्यंसौ यौंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिक्रदद्वृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्येषः॥९०॥

वृषा हिरः। महान्मित्रो न देर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवेनं योनिं गमयित। नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांण-स्यान्तर्यन्ति। तदेवास्यैतेना प्याययित। विश्वावंसुर्भि तन्नो गृणात्वित्यांह॥९१॥ पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृणाति। धियो हिन्वानो धिय इन्नो अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मै कल्पयित। प्राऽऽसां गन्धवी अमृतांनि वोच्दित्यांह। प्राणा वा

अमृताः। प्राणानेवास्मे कल्पयित। पृतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपागा इत्यांह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मंनुष्यो मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

मनुष्यो हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रंवर्ग्यमुद्धासयन्। प्रजां प्रशून्थ्यांमपीथमंनूद्धासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्यांह। प्रजामेव प्रशून्थ्यांमपीथमात्मन्थंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्यौऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म

इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषों ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्दासयित। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आदित्यः सुवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवतः। तेनैव सुवर्गालोकान्नेति॥९३॥ ब्रह्मणस्वा पर्स्पाया इत्याह व्यात्वित्यं रक्षस्वा विहरण्यमाहार्थयत् ह्रांप गृण्वित्याह मनुष्यांनित्याहास्येषाँऽष्टो चं॥——[९]

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्तं पयोंऽदुह्नन्। तदैंभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानि शुक्तयजूङ्ष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा एतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा एतयोर्न्यत्। देवानांमन्यत्पयंः। यद्गोः पयः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यते। उत्तर्वेद्यामुद्वांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवृग्यंः। तेजंसैव तेजः समर्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसयेदन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवृग्यंः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र् सन्दंधात्यन्नाद्याय। अन्नाद एव भवित। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्भीचित। स्वामेवेनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवेनं योनौ प्रतिष्ठापयित॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवेनं वैश्वान्रेणामि प्रवंतयिति। औदुंम्बर्याः शाखांयामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥ इदम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपि दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपि दहति। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्युः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिकामस्य। एता वा अपामनूज्झावयीं नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदीरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गः पर्य उत्तरवेदिर्गस्ते स्थापयित धर्मा यन्ति॥

प्रजापंतिः सम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घृमः प्रवृक्तः। मृहावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स पुतानि नामान्यकुरुत। य पुवं वेदं।

विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया॰सं यथानाममुंपचरित। पुण्यांितिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्यांितिमस्मै कामयन्ते। य पृवं वेदं। तस्मांदेवं विद्वान्। घर्म इति दिवाऽऽचंक्षीत। सम्माडिति नक्तम्। एते वा एतस्यं प्रिये तनुवौं। एते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवां॥१०१॥ प्रियेण नाम्ना समर्धयति। कीर्तिरेस्य पूर्वागंच्छति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपाँकामत्। तां देवाः प्रंवग्येणैवानु व्यंभवन्। प्रवग्येणाऽऽप्रुवन्। यचंतुर्विरशितकृत्वंः प्रवग्यं प्रवृणिक्तं। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमाप्रोति। पूर्वांऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सर्सन्नः॥१०२॥

वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोऽभिकीर्यमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमाने। मारुतः कथन्। पौष्ण उदंन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिरहूयमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यन्मृन्मयमाहुंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषोंऽश्जुत् इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥

तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः।

पश्चमः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशैर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥

वदन्ति तुनुवा सरसंत्रो हूयमानो वाग्धुतो दंधात्येषः॥॥

सविता भूत्वा प्रंथमेऽहन्प्रवृंज्यते। तेन कामा १ एति। यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यतें।

अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्रवृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यते आदित्यो भूत्वा रश्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षृष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमेति। यथ्संप्तमेऽहंन्प्रवृज्यतें।

धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदेष्टमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृहस्पतिंभूत्वा गांयत्रीमेति। यन्नवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ श्लोकानंति। यद्देशमेऽहंन्प्रवृज्यतें। वरुणो भूत्वा विराजमिति॥१०७॥

यदेंकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुपुसदां प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङुमूँ श्लोका ॥-

स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदुमुतोऽर्वाङ्माँ श्लोका इस्तपंत्रेति। य एवं वेदे। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजिमित तपति॥————[१२] ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ परेयुवा १ सं प्रवती महीरन् बहुभ्यः पन्थामनपस्पशानम्। वैवस्वत १ सङ्गमनं जनानां यम र राजान र हविषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागन्नपैतदूह यदिहाबिभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्धुषु। इमौ युनिज्मि ते वृह्णी असुनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंन सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्चांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिंददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रैभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मा । अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥ आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद॰ हविः। अग्नयें रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयावर्यपेद्घानिं मृज्महे। यथां नो अत्र

नापंरः पुरा जरम् आयंति। पुरुषस्य सयावरि वि ते प्राणमंसि स्नसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं मा्ड् स्ता प्रियेऽहं देवी स्ती पितृलोकं यदैषि। विश्ववारा नभंसा संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

इयं नारी पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत उपं त्वा मर्त्य प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदीर्ष्व नार्युभि जीवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। हस्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्णर हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मंणे तेजंसे बलांय। अत्रैव त्वमिह वयं सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमातीर्जयेम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षत्रायौजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयेम। मणि १ हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पुष्ट्ये बलांय। अत्रैव त्वमिह वय र सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमातीर्जयेम॥३॥

इममंग्ने चमसं मा विजींह्वरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। एष यश्चंमसो देवपानुस्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोर्ण्ष्व मेदेसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुर्हरंसा जर्हंषाणो दधंद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयांतै। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचंं चिक्षिपो मा शरींरम्। यदा शृतं करवों जातवेदोऽथेंमेनं प्रहिणुतात्पितृभ्यंः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेंमेनं परिंदत्तात्पतृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां देवानां वश्ननीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंगच्छतु वार्तमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपतु तं तें अर्चिः। यास्तें शिवास्तुनुवों जातवेदस्ताभिवहेम र सुकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतद्यं वै तदस्य योनिरसि। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदो वहेंम र सुकृतां यत्रं लोकाः॥४॥ विद्वानभ्यावंवृथ्स्वाभिमांतीर्जयेम शरीरेश्चत्वारिं च॥

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो रक्षितार्स्तभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथोभिऽरक्षितार्स्तभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्रयं कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं जुभरिष्मिष्वदानो मूर्धानं वात तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमिधं जातोऽसि त्वद्यं जायतां पुनः। अग्रयं वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्मो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप् मामुदानंडपामुपस्थे मिह्षो वंवर्ध। इदं त एकं पुर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थे। नाकं सुप्णमुप् यत्पतंन्त हूदा वेनन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनो शकुनं भुर्ण्यम्। अतिद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुनां प्था। अथां पितृन्थ्सुंविदत्रा अपीहि यमेन ये संधमादं मदन्ति। यौ ते श्वानौ यमरिक्षतारौ

चतुरक्षौ पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्या र राज्नपरि देह्येन स्वस्ति चाँस्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उ्रुणुसावंसुतृपांवुलुम्बुलौ युमस्यं दूतौ चंरतो वशा ५ अन्। तावस्मभ्यं दशये

सूर्याय पुनर्दत्ता वसुमद्येह भद्रम्। सोम एकैंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो

मधुं प्रधावंति ता इश्चिंदेवापिं गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः।

ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता इश्चिंदेवापिं गच्छतात्। तपंसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंर्गताः। तपो ये चिक्रिरे महत्ता इश्चिंदेवापिं गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः स इप्तिष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये अस्त्रशेवाः शिवान् वयम्भि वाजानुत्तरेम॥७॥

यद्वै देवस्यं सिवतुः पिवत्र इस्त्रंधारं वितंतम्न्तिरक्षे। येनापुंनादिन्द्रमनार्तमार्त्ये तेनाहं मा स्वंतनं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता

नृपतिंमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मात्रय्या वर्चसा

स॰सृंजाथ। उद्वयं तमंस्पिर् पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। धाता पुंनातु सिवता पुंनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥ धृद्धतिस्य वर्णस्य प्राप्त प्र प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्

यन्त्वमंग्ने समदेहस्त्वमु निर्वापया पुनेः। क्याम्बूरत्रे जायतां पाकदूर्वा व्येल्कशा।

शीतिंक शीतिंकावित ह्रादुंके ह्रादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम इस्विग्न शमयं। शं तें धन्वन्या आपः शम् ते सन्तवनूक्याः। शं तें समुद्रिया आपः शम् ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते सन्तु कर्प्याः। शन्ते नीहारो वर्षतु शम् पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥ अवं सृज् पुनरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंतश्चरित स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेषु सङ्गंच्छतां तनुवां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सइ स्वधाभिः सिर्मेष्टापूर्तेन पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्यें वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्ते

कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः सूर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु

शरीरम्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त् एकं पर ऊंत एकं तृतीयेंन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां परमे सधस्थै। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व परमे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाकमिधं रोहेमम्। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुंनातु। अस्मात्त्वमधिं जातौंऽस्ययं त्वदिधिजायताम्। अग्नये वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥१०॥ आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिरक्ता। आसींदता र सुप्रयतेंह ब्रहिष्यूर्जीय जात्यै ममं शत्रुहत्यै। युमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भर्न्मानुषा देवयन्तः। आसींदत्र स्वमुं लोकं विदाने स्वासुस्थे भवतुमिन्देवे नः। युमायु सोम र सुनुत यमार्य जुह्ता हिवः। यम र ह यज्ञो गंच्छत्यग्निदूतो अर्रङ्कृतः।

यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नों देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें।

सोमश्च यो ब्राह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तुनुव् सम्भंरस्व मेह गात्रुमवंहा मा

यमाय मधुमत्तम् राज्ञें ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिंभ्यः पूर्वजभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृज्यः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जर्गतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजांनपरोध्यंः। यमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजांनपरोध्यंः। येनाऽऽपो नद्यो धन्वांनि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानयः शफान्। अश्वांननश्यंतो दानं यमो राजाऽभि तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वंमिदं जगंत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दशर्षयः। यमं यो विद्याथ्म ब्रूयाद्यथैक ऋषिर्विजानते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेभिः पतंति षडुर्वीरेक्मिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्ठुप्छन्दा एसि सर्वा ता यम आहिता। अहंरहुर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृप्यति पश्चभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविच्यन्ते यमे राजनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृतवादिनः। ते राजनिह विविच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवा १ श्व ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणा १ श्वाप्वित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः।

अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनति॥१३॥

वैश्वान्ते ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमुथ्स श्रातधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामहं प्रिपितामहं बिभरित्पन्वंमाने। द्रफ्सश्चंस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनुं स्श्चरंन्तं द्रफ्सं जुंहोम्यनुं सप्त होत्राः। इमश्सेमुद्रश्र श्रातधारम्थसंव्यच्यमानं भुवंनस्य मध्ये। घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्ने मा हिश्सीः परमे व्योमन्। अपंत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुंराणा ये च

पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभियुज्यन्तामघ्नियाः॥१४॥
शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वर्त्रा बंध्यन्ताः
शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि
चक्रथः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव।
यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सुवितैतानि शरीराणि पृथिव्यै

नूर्तनाः। अहोभिरुद्भिरुक्तुभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्मै। सवितैतानि शरीराणि

मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भंव। विमुंच्यध्वमघ्रिया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारमस्य। ज्योतिंरापामं सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं पतयंन्ति विद्युत उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी १ रेतसाऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चे मानुवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूरयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवता। प्रजापंतिर्वः सादयतु तया देवतया। आप्यायस्व

सन्ते"॥१६॥

उत्तें तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। पुताइ स्थूणां पितरों धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादंनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातरं भूमिमेतामुंरुव्यचंसं पृथिवी र सुशेवाम। ऊर्णमदा युवृतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थै। उष्ट्रंश्चस्व पृथिवि मा विबांधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथां सिचाभ्येनं भूमि वृणु। उङ्गश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित उप हि श्रयंन्ताम्।

ते गृहासों मधुश्रुतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहाना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा ते यमसादेन स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभिरम बर्हिर्देवेभ्यो जीवंन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यै। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तर् प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदेधे। तेभ्यः पृथिवि शं भेव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंगच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजा रीरिषो

मोत वीरान्। शं वातुः श १ हि ते घृणिः शम् ते सुन्त्वोषधीः। कर्ल्पन्तां मे दिशः

शुग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्घृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभ्रुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतः पथिकृतंः सपर्यत ये देवानां घृतभांगा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। दशाँक्षरा ता रंक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधंवान्मधुंमा इश्वरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवाना १ शृतभागाः क्षीरभागा दिधिभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा तें यमुसादंने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ।

श्वताक्षंरा सहस्रौक्षराऽयुतौक्षराऽच्युंताक्षरा ता र्रक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यौं त्वा मा दंभन्यितरों देवतौ। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

पुतास्ते स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रं। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनूः कांमदुघाः करोतु। त्वामर्जुनौषंधीनां पयो ब्रह्माण इद्विदुः। तासां त्वा मध्यादादंदे चुरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाई स्तम्बमाहंरैतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशंं मनुष्यांणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांना इस्तम्बमाहंर् रक्षंसामपंहत्यै। य एतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनंः। दुर्भाणाः स्तुम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥ लोकं पृण ता अस्य सूदंदोहसः। शं वातः श॰ हि ते घृणिः शमुं ते सन्त्वोषंधीः।

कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपरामार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रुणेन च। वरुणो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्यै द्वेषांच

वन्स्पतिः। विधृतिरस् विधारयास्मद्घा द्वेषा रसि श्राम श्रामयास्मद्घा द्वेषा रसि यव यवयास्मद्घा द्वेषा रसि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ सुवंर्गच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरेः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्परि धाता पुनातु॥२२॥

अ रोहताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ठ। इह त्वष्टां सुजिनमा

आ राह्ताऽऽयुज्रस गृणाना अनुपूव यतमाना यात्ष्ट। इह त्वष्टा सुजानमा सुरत्नों दीर्घमायुंः करतु जीवसे वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्ति क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपंरो जहाँत्येवा धांतरायू १षि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं ऋूरं चकार मर्त्यः। कृपिर्बभस्ति तेजंनं पुनंज्रायु गौरिव। अपं नः शोशुंचद्घमग्नें शुशुध्या रियम्। अपं नः शोशुंचद्घमग्नें स्वस्तयैं। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो वहिंः सम्पारंणो भव॥२३॥

ड्मे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्या प्राञ्जोगामानृतये हसाय

द्राघीय आर्युः प्रत्रां दर्धानाः। मृत्योः पुदं योपयन्तो यदैम् द्राघीय आर्युः प्रतुरां दर्धानाः। आप्यायमानाः प्रजया धर्नेन शुद्धाः पूता भेवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीस्तिरो मृत्युं देदाहे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सुर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनश्रवो अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे। यदार्श्वनं त्रैककुदं जातः हिमवंतस्परि। तेनामृतंस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुंद्भिनथ्स्योषधे पृथिव्या अधि। पुविम्म उद्भिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजों ऽस्यजास्मदघा द्वेषा ५ सि यवों ऽसि यवयास्मदघा द्वेषा ५ सि॥ २४॥

अपं नः शोशंचद्घमग्नं शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भित्रया सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥ शोशंचद्घम्। प्रयते अग्ने सूरयो जायेमिह् प्र ते व्यम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्वः हि विश्वतोमुख विश्वतः पिर्भूरिसं। अपं नः शोशंचद्घम्। द्विषो नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशंचद्घम्। स नः सिन्धंिमव नावयाति पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशंचद्घम्। आपं प्रवणादिव यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। उद्वनादंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम् अपं नः शोशंचद्घम्। उद्वनादंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम् अपं नः शोशंचद्घम्। आन्न्दायं प्रमोदाय पुनरागाः स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचद्घम्॥२६॥

अपंश्याम युव्तिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्धेन या तमंसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ट्ये। मयैतां माङ्स्तां भ्रियमांणा देवी सती पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नमंसा संव्ययन्त्युमौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि।

रियष्ठामृग्निं मधुंमन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप सश्संदेम। सश्र्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तये। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः।

तेभ्यों घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूना् इ स्वसांऽऽदित्यानांममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनाय मागामनांगामदितिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्तु। ओमुथ्सृजत॥२७॥

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा र संमेत पश्यंत। सौभाँग्यमस्यै दत्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमेन्द्र मीद्धः सुपुत्रा र सुभगाँ कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृिधे॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



पूर्वरूपम्। द्योरुत्तंररूपम्। आकांशः सन्धिः॥३॥

॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

ॐ। शं नों मित्रः शं वर्रणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मंणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मां विद्यामि। ऋतं विद्यामि। स्त्यं विद्यामि। तन्मामेवतु। तद्वक्तारमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥

[१]

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामं सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पश्चं॥_____

स्ह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधि-प्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्विरूपम्। आदित्य

उत्तररूपम्। आंपः सुन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या सुन्धिः। प्रवचनर् सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजननर् सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाख्यन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रष्ट्हिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृताँथ्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्वंवम्। ब्रह्मंणः कोशोंऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं मे

गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततो मे श्रियमावंह। लोमशां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जनेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भग प्रविंश स्वाहाँ। तिस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायंन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

वित्रवाग शर्माऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाह् धात्रायंन्तु सर्वतः स्वाहेकं चा

भूर्भवः सुवरिति वा एतास्तिस्रो व्याहृतयः। तासामहस्मै तां चतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवरित्यसौ लोकः॥१०॥ मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायुः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामांनि। सुव्रिति यज्र १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन् वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा एताश्चतंस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहृतयः। ता यो वेदं। स वेद् ब्रह्मं। सर्वेऽस्मे देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

स य एषौं ऽन्तर्हृंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सैन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इति वायौ॥१३॥ सुव्िरत्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वाराँज्यम्। आप्नोति मनस्पितिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पतिः। श्रोत्रंपतिर्विज्ञानपितः। एतत्ततो भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। सत्यात्मप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धम्मृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

वायाव्मृत्मेकं च॥______[६]

पृथिव्यंन्तिरक्षें द्यौर्दिशोंऽवान्तरिष्ट्याः। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थिं मुजा। एतदंधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इदर सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद॰ सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्मृ वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओ॰शोमितिं शुस्नाणिं श॰सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिगृरं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवृक्ष्यन्नांह् ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श॥_____

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजाच स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजाश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यिमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुव्चनम्॥१८॥ वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेथ्सीः। सत्यान्न

प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्यै न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदित्व्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक स्पूर्वरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्सो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। हिंया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणौः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा

ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

ॐ। शं नों मित्रः शं वर्रणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांविषम्। ऋतमेवादिषम्। सत्यमेवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवीद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥ स्व्यमंवादिष् पशं वा [१२]

॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्जस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहिंतं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्जृते सर्वान्कामाँन्थ्स्ह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा पृतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापः। अन्धः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुंषः। स वा एष पुरुषो-ऽन्नरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुर्च्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥१॥

अत्राद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी १ श्रिताः। अथो अत्रेनैव जीवन्ति। अथैनदिपं यन्त्यन्ततः। अत्रू हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माध्सर्वीष्धमुंच्यते। सर्वं वै तेऽत्रंमाप्रुवन्ति। येऽत्रं ब्रह्मोपासंते। अत्रू हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माध्सर्वीष्धमुंच्यते। अत्राद्भृतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं

भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राणमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मुनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्यः। तस्मांध्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त आयुंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्माथ्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यज्रिव शिरः। ऋग्दक्षिणः पक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥३॥

यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रांप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति

कदांचनेति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मांन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तंरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥४॥ विज्ञानं यज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठम्पांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा।

सर्वान्कामान्थ्समश्र्जुंत इति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। येः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञानुमयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पक्षः। प्रमोद उत्तरः पक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥५॥ असंन्नेव सं भवति। असद्बह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो

उ। सोऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृक्ष्वा। इद॰ सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तथ्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच् त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिरुक्तं च। निरुयंनं चानिरुयनं च। विज्ञानं चाविज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तथ्सत्यिमित्याचृक्षते। तदप्येष श्लोको भ्वति॥६॥

असद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वै तथ्सुकृतम्। रंसो वै सः। रसः ह्येवायं

विंद्रिति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानमुं

लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छुती(३)॥ आहों विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चिथ्समंश्जुता(३)

स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गतो भवति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते। अथ तस्य भयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानुस्य। तदप्येष श्लोको

लब्ध्वाऽऽनंन्दी भवति। को ह्येवान्याँत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न

भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादग्निश्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चेम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमार्श्नसा भवति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढष्ठो बलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनन्दः। ते ये शतं मानुषं आनन्दः।

स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानुन्दाः।

स एको देवगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमानुन्दाः।

स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमान्-दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमान्-दाः।

स एक आजानजानां देवानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः।

स एकः कर्मदेवानां देवानांमान्नदः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमान्नदाः।

स एको देवानांमान्नन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं देवानांमान्न्दाः। स एक इन्द्रंस्याऽऽनन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतिमन्द्रंस्याऽऽनन्दाः।

स एको बृहस्पतेरानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः।

स एकः प्रजापतेरानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं प्रजापतेरानन्दाः।

स एको ब्रह्मणं आन्-दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्न-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं मनोमय-मात्मानमुपंसङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्दमय-

मात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोंको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत १ ह वावं न तपिति। किमह १ साधुं नाक् रवम्। किमहं पापमकर्रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मां न १ स्पृणुते। उभे ह्येवैष एते आत्मां न १ स्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥ ९॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ नवमः प्रश्नः — भुगुवल्ली॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वरुणं पितंरुमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां

प्तत्प्रीवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमिति। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभि संविशन्ति। तद्विजिज्ञासस्व। तद्वह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविश्नतीतिं। तिद्वज्ञाये। पुनरेव वर्रणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तिवा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन् जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीतिं। तिद्वज्ञायं। पुनेरेव वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुम्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनंरेव वरुणं पितंरमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना् खेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयन्त्यभि संविश्वन्तीति। तिह्वज्ञायं। पुनंरेव वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आन्नन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाद्धोव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। आन्नन्देन जातांनि जीवंन्ति। आन्नन्दं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। सैषा भाँग्वी वारुणी विद्या। पुरमे व्योम्न प्रतिष्ठिता। य पुवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजया पुशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन्। महान्कीत्या॥६॥

अत्रं न निन्द्यात्। तद्वृतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रति-ष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्रशुभिर्व्रह्मवर्चसेने। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्ं। ज्योतिरन्नादम्। अपसु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां पशुभिर्न्नह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बहु कुंवीत। तद्वतम्। पृथिवी वा अन्नम्ं। आकाशोंऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां पशुभिर्न्नह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्तुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वै मुखतौंऽन्नर राष्ट्रम्। मुखतोऽस्मा अन्नर राध्यते। एतद्वै मध्यतौंऽन्नर राष्ट्रम्। मध्यतोऽस्मा अन्नर राध्यते। एतद्वा अन्ततौंऽन्नर राष्ट्रम्। अन्ततौऽन्नर राष्ट्रम्। अन्ततोऽस्मा अन्नर राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि।

योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति नंक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्विमंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीता मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्तें ऽस्मै कामाः। तद्भक्षेत्युंपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्भह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तः सप्ताः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं विज्ञान-मयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ लोकान्कामान्नी कामरूप्यंनुसश्चरन्। एतथ्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वं। अहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोककृद्ह ॥ श्लोककृद्ह ॥ श्लोककृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य।

पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्मि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदे। इत्युपनिषंत्॥१०॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधींतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वी॒र्यं करवावहै। ते॒ज्ञस्वि ना॒वधीतमस्तु मा विंद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भंस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंहतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५िष समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद॰ सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तदक्षरे परमे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवंं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः संमुद्रे क्वयो वयन्ति यदक्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेन जीवान् व्यसंसर्ज भूम्यांम्। यदोषंधीभिः पुरुषांन्पश्र्ंश्च विवेश भूतानि चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयस १ हि परौत्परं यन्महेतो महान्तम्। यदेकम्ब्यक्तमनेन्तरूपं विश्वं पुराणं तमेसः परेस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तदुं सत्यमाहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बहुधा जातं जायमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदुं चुन्द्रमाः। तदेव शुक्रममृतं तद्भह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा जिज्ञरे विद्युतः पुरुषादिषे। कुला मुहूर्ताः काष्ठांश्चाहोरात्राश्चं सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवेः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपंः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवंः॥ नैनंमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजायभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम मृहद्यशंः॥२॥ न सन्दर्शे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्। हृदा मंनीषा मनंसाऽभिकृषो य एनं विदुरमृतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूतो हिरण्यगुर्भ इत्यृष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्घमांणः प्रत्यङ्गखांस्तिष्ठति विश्वतांमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतांमुखा विश्वतीहस्त उत विश्वतस्पात्। सं बाहुभ्यां नर्मति सं पतित्रैर्धावापृथिवी जनयन्देव एकंः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निदः

सं च विचैक्र स ओतः प्रोतंश्च विभुः प्रजास्ं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्ध्वों नाम निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिंता गुहांसु यस्तद्वेदं सवितुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जनिता स विधाता धार्मानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामाँन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परिं लोकान् परि दिशः परि सुर्वः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासुं। परीत्यं लोकान्परीत्यं भूतानिं परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पतिमद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपघ्नन्निर्ऋतिं ममं॥४॥

पृश्र्श्च मह्यमावंह् जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हि॰सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगत्। अबिंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिंपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः ॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमिह। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमिह। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वऋतुण्डायं धीमिह। तन्नों दिन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चऋतुण्डायं धीमिह॥५॥

तन्नो नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्महें महासेनायं धीमहि। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्महें सुवर्णपृक्षायं धीमहि। तन्नो गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्महें हिरण्यगर्भायं धीमहि। तन्नौ ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्महें वासुदेवायं धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जन्खायं विद्महें तीक्ष्णद्ङ्ष्ट्रायं धीमहि॥६॥

तन्नों नारसि॰हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्यहें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्यहें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्यहें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्ननाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंऋान्ते रंथऋान्ते विष्णुऋाँन्ते वस्न्धंरा। शिरसां धारंथिष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिकें हर्न मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्। मृत्तिकें ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमित्रिता। मृत्तिकें देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद् मृत्तिके। तयां हुतेने पापेन् गुच्छामि पंरमां गतिम्।

॥ शत्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृिध। मधंवन्छिि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमधों वशी। वृषेन्द्रंः पुर एत नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदधातु। आपान्तमन्युस्तृपलंप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरुंमा स्त्रजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनांनि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानांनिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुची वेन आवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवः। स्योना पृथिवि भवांऽनृक्षरा निवशंनी। यच्छांनः शर्म सृप्रथाः। गृन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपृष्टां करीषिणींम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भृजतु। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णुमुखा वै देवाश्छन्दोभिरिमाँ ह्योकानंनपज्ययम्भ्यंजयन्। मृहा स् इन्द्रो वर्ज्रबाहुः षोड्शी

शर्म यच्छत्॥१०॥

स्वस्ति नो मघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं यों ऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् इं स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कृक्षीवंन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कृसीदं तिस्मिन्थ्सीदतु यों ऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूता अति पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सगंणो म्रुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। जहि शत्रू॰ रप् मृधों नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप् ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्यों ऽस्मान् द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिंव मातरंः। तस्मा अरंं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपों जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वरुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। युन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यश्च

प्रतिग्रंहः। यन्मे मनंसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रणो बृह्स्पतिः सिवता च पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नये उपसुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रणाय नमो वारुण्ये नमोऽन्नः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याश्नादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रंतिग्रहाँत्। तन्नो वरुणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शंतु। सोंऽहमंपापो विरजो निर्मुक्तो मुंक्तिकिल्बषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चापस् वरुणः स पुनात्वंघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोमर् सचता परुष्णिया। असिक्रिया मरुद्धे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं च सत्यं चाभीद्यात्तपसोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अण्वः॥१३॥

स्मुद्रादंर्ण्वादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणि विदधिद्वश्वंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्या र रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाङ्स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावापृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः स॰शिंशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिरहमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंबाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुत्त्पगः। वर्रुणोऽपामंघ-मर्षणस्तस्मात्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमा॰ रोदयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रान्थ्समुद्रः प्रथमे विधमा जनयंन्य्रजा भुवनस्य राजाः। वृषां प्रवित्रे अधि सानो अव्ये बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम् सोमंमरातीयतो निदंहाति वेदः। स नः पर्षदिति दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलुन्तीं वैरोचुनीं कंर्मफुलेषु जुष्टाँम्। दुर्गां देवी १ शर्गणमृहं प्रपेद्ये सुतरंसि तरसे नर्मः। अग्रे त्वं पारया नव्यो अस्मान्थस्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा। पूर्श्व पृथ्वी बंहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुंरितातिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानौंऽस्माकंं बोध्यविता तनूनांम्। पृत्नाजित् सहंमानम् ग्रिमुग्र हुवेम पर्माथ्सधस्थांत्। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वा क्षामंद्वेवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच होता नव्यंश्च सिथ्सं। स्वाश्चांग्ने तुनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगुमायंजस्व। गोभिर्जुष्टमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठम्भि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः ॥

भूरत्रंमुग्नयें पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवरत्रंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवरत्रं चुन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो

| ਪਪਤਾ | सवरन्नमोम॥१७॥ | |
|------|---------------|--|
| 774. | 7934717113311 | |

भूरग्नयें पृथिव्यै स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रग्न ओम्॥१८॥

भूरमयें च पृथिव्ये चं महते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च महते च स्वाहा सर्वरादित्यायं च दिवे चं महते च स्वाहा भर्भवः सर्वश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतऋंतो स्वाहा॥२०॥

[8]

पाहि नों अग्न एकंया। पाह्युंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुसृभिवंसो स्वाहाँ॥२१॥ -[७]

॥वेद्विस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृषभो विश्वरूपश्छन्दोंभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता शिकाः पुरोवाचोपनिषदिन्द्रौं ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयास्ं कर्णयोः श्रुतं मा च्यों द्वं ममामुष्य ओम्॥२३॥

॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तर्पः सत्यं तर्पः श्रुतं तर्पः शान्तं तपो दमस्तपः शमस्तपो दानं तपो यज्ञं

[१०]

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्थो वात्येवं पुण्यंस्य कर्मणों दूराद्गन्थो वांति यथांऽसिधारां कर्तेऽवंहितामवृक्षामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिंष्यामि कर्तं पंतिष्यामीत्येवमनृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्महतो महीयानात्मा गुहांयां निहिंतोऽस्य जन्तोः। तमंऋतुं पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादान्महिमानंमीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्माध्सप्तार्चिषः समिर्धः सप्त जिह्नाः। सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा गुहाशयां निहिताः स्प्रा संप्ता अतः समुद्रा गि्रयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैंष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः

केवीनामृषिर्विप्राणां मिह्षो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणाः स्वधितिर्वनानाः सोमेः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्रकृष्णां बह्वीं प्रजां जनयन्तीः सर्रूपाम्। अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहाँत्येनां भुक्तभोगामजौऽन्यः॥२६॥

ह्रसः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्ष्मसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंत्सद्योमसद् गोजा ऋत्जा अद्विजा ऋतं बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमंस्य योनिर्धृते श्रितो

घृतम्बस्य धामं। अनुष्वधमार्बह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ विश्वे ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदारदुपा १ शुना सममृत्तत्वमानट्। घृतस्य नाम गृह्यं यदस्ति जिह्वा देवानां ममृतंस्य नाभिः। वयं नाम प्रब्नंवामा घृतेनास्मिन् यज्ञे धारयामा

जिह्ना देवानाम्मृतस्य नाभः। वय नाम् प्रश्नवामा घृतनास्मन् यज्ञ धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृणवच्छ्रस्यमानं चतुः शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बृद्धो वृष्मो रोरवीति महो देवो मर्त्याः आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पणिभिंगुंह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्रं एक् र सूर्य

एकं जजान वेनादेक एकं स्वधया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिरण्यगर्भं पंश्यत जायंमान स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्ता यस्मात्परं नापर्मस्ति किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिंष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभ्राजंते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञान्सुनिश्चितार्थाः सन्त्रांसयोगाद्यतेयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परौन्तकाले परोमृतात्परिमुच्यन्ति सर्वे। दहं विपापं प्रमेशमभूतं यत्पुण्डरीकं पुरमध्यस् इस्थम्। तुत्रापि दहं गगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तें च प्रतिष्ठितः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वरः॥२८॥

॥ नारायणसूक्तम् ॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायंणं देवमुक्षरं पर्मं पुदम्।

पतिं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वरं शार्श्वतं शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मांनं प्रायंणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः पंरः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नौरायुणः परः। नारायुणपरो ध्याता ध्यानं नौरायुणः परः। यचे किश्चिज्ञग्रसर्वं दृश्यते श्रूयते ऽपिं वा॥ अन्तं बीहिश्चं तथ्सर्वं व्याप्य नांरायणः स्थितः॥ २९॥ अनेन्तमव्ययं कवि र संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पुद्मकोश प्रतीकाशुर् हृदयं चाप्यधोर्मुखम्। अधो निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यार्मुपरि तिष्ठति। ज्वालुमालार्कुलं भाती विश्वस्यांऽऽयत्नं महत्। सन्तंतर शिलाभिस्तुलम्बंत्याकोशुसन्निभम्। तस्यान्ते सुषिरः सूक्ष्मं तस्मिन्थ्सुर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानं-

विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायण १ हिरम्। विश्वमेवेदं पुरुषस्तद्विश्वमुपंजीवति।

तस्यान्ते सुषिर सूक्ष्मं तस्मिन्थ्सवं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानेग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजरः कविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः
शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापांदतलमस्तंकः। तस्य मध्ये
विहिशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठेखेव भास्वंरा।
नीवार्शूकंवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये प्रमातमा

व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः पर्मः स्वराट्॥३०॥
नग्रयुणः स्थिते व्यवस्थितश्चलारि च॥————[१३]

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मण्डल् स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिर्दीप्यते तानि सामानि स साम्नां मण्डल् स साम्नां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूर्रेषि स यज्ञंषा मण्डल् स यज्ञंषां लोकः सैषा त्रय्येवं विद्या तंपति य एषोऽन्तरांदित्ये हिर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्रश्चश्चः श्रोत्रंमात्मा मनों मृन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंमृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतामाप्रोत्येतासामेव देवतानाः सायुंज्य सार्षिता रे समानलोकतामाप्रोति य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥३२॥

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः। हिरण्याय नमः। हिरण्यालिङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। सुवर्णालिङ्गाय नमः। दिव्याय नमः। दिव्यलिङ्गाय नमः। भवाय नमः। भवलिङ्गाय नमः। शर्वाय नमः। शर्वाय नमः। शर्वालिङ्गाय नमः। शर्वालिङ्गाय नमः। ज्वललिङ्गाय नमः। ज्वललिङ्गाय नमः। अत्माय नमः। आत्मलिङ्गाय नमः। परमाय नमः। परमलिङ्गाय नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्य सर्वलिङ्गः स्थापयित पाणिमन्नं पिवृत्रम्॥३३॥
[१६]

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः ॥

स्द्योजातं प्रंपद्यामि स्द्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

[१७]

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमेः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमों मनोन्मनाय नमेः॥३५॥
—————————————————————————————[१८]

॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैंभ्योऽथ घोरैंभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेंभ्यः सर्व्शर्वेंभ्यो नमंस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुंषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥

[२०]

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामिश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥ —————[२१]

॥ नमस्कारमन्त्राः॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतयेऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

—————[२२] ऋतः सत्यं पेरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गेलम्। ऊर्ध्वरेतं विंरूपाक्ष्रं विश्वरूपाय

वै नमो नर्मः॥४०॥

सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमों अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमेः। विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बंहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय

-[२५]

-[२७]

नमो अस्तु॥४१॥

रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥

दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

यस्य वैक्रङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याऽऽहुंतयस्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥
—————[२६]
कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

मह्ता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवीं पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतुमा का या

अदितिर्देवा गंन्धर्वा मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषा ५ सर्वभूतानां माता मेदिनी

॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

कद्रुद्राय प्रचेतसे मीदुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम शन्तंम हदे। सर्वो ह्येष

सा सुत्येत्यमृतेति वसिष्ठः॥४५॥

[२८]

॥सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापः प्राणा वा आपः पृशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापः सम्राडापो विराडापः स्वराडापृश्छन्दा्र्रस्यापो ज्योती्र्रध्यापो यज्र्र्षध्यापः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भवः स्वराप् ओम्॥४६॥
————[२९]

॥ सन्ध्यावन्द्नमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट्मभौज्यं यद्वां दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्षञा। अह्स्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृंतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४८॥

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्धामुदरेण शिश्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥४९॥
[३२]

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुंते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुंते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे महादेवि स्न्थ्याविद्ये स्रस्वंति॥५१॥ ————————————[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावाहयामि सावित्रीमावाहयामि सरस्वतीमावांहयामि छुन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय । रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओ॰ सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ॰ स्त्यम्। ओं तथ्संवितुर्वरेणयं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयाँत्।

.[३५]

ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

॥ गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतुमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चस्ं मह्यं दत्त्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥ [३६]

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥ -[३७]

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्तें सोम प्रजाव्थ्सोभि

सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्तं सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनन्ति। ओम्॥५५॥

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सवितः प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सवितर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्मु आ सुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषसि मधुंमृत्पार्थिव् रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मध्रमान्नो वनस्पितमध्रमा अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूण्हत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोम् प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्यङ्क्षं पुनंन्ति। ओम्॥५६॥

ब्रह्म मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्ममेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः

कंवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणा ए स्वधितिर्वनांना ए सोर्मः पवित्रमत्येति रेभन्। ह एसः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदितिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंतसद्योमसदजा गोजा ऋतजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा समिथ्स्रवन्ति स्रितो न धेनाः। अन्तर्हदा मनसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिरण्ययों वेतसो मध्यं आसाम्। तस्मिन्ध्सुपर्णो मंधुकृत्कुंलायी भर्जन्नास्ते मधुंदेवताँभ्यः। तस्यांऽऽसते हरंयः सप्ततीरें स्वधां दुहांना अमृतंस्य धाराम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हत्यां वा एते घ्रन्ति। ये ब्रांह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँद्धिश्वाची भुद्रा सुंमन्स्यमांना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भवित देवि त्वया

ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयाँ। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नो जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

मेधां म् इन्द्रों ददातु मेधां देवी सरंस्वती। मेधां में अश्विनांवुभावाधंत्तां पुष्कंरस्रजा। अपस्रासुं च या मेधा गंन्ध्वेषुं च यन्मनः। देवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता स्वाहां॥५९॥

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमाना सा माँ मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६०॥

————[४३] मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेथां मियं प्रजां मयीन्द्रं

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजो दधातु मियं मेथां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं देधातु मियं मेथां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजो दधातु॥६१॥

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युरमृतंं न आगंन्वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेंरिवाभिनंः शीयता रियः स च तान्नः शचीपतिः॥६२॥ परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥ वातं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्नांयतां पात्व १ हंसो ज्योग्जीवा जरामंशीमहि॥६४॥ ___[४७] अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरमुं :। प्रत्यौहतामुश्विनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥

हिर् हर्रन्तुमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म

| 1 | 15 | ١. | | $C \mid CC \mid$ |
|------|---------|--------|----|------------------------|
| सरूप | मिनुमदम | गगादयन | मा | विवंधीर्विक्रंमस्व॥६६॥ |

शल्कैरग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोर्-ऋध्वाऽतिं मृत्युं तंराम्यहम्॥६७॥

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष

आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥

मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नों ऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तनुवों रुद्र रीरिषः॥६९॥

मा नंस्तोके तनये मा न आयुंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नों रुद्र भामितोऽवंधीर्हविष्मंन्तो नमंसा विधेम ते॥७०॥

—[५४]

_[५५]

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वय इस्याम् पत्यो रयीणाम्॥७१॥

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः॥७२॥

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पुंष्टिवर्धनम्। उर्वा्रुकिमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् युज्ञस्यं मायया सर्वानवं

यजामहे॥७४॥

[66]

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

[५८]

॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंतस्यैनंसोऽवयजंनमस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृत्स्यैनंसोऽवयजंनमस् स्वाहाँ। पितृकृंत्स्यैनंसोऽवयजंनमस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽवयजंनमस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसोऽवयजंनमस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसोऽवयजंनमस् स्वाहाँ। यद्दिवा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजंनमस् स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंत्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजंनमस् स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तंश्च जाग्रंत्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजंनमस् स्वाहाँ। यद्दिद्वा स्यावयजंनमस् स्वाहाँ। यद्दिद्वा स्यावयजंनमस् स्वाहाँ। यद्दिद्वा स्यावयजंनमस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमंसि स्वाहा॥७६॥

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वों देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नों अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनों वसवो निधेतन् स्वाहाँ॥७७॥

॥कामोऽकारुषीत्-मन्युरकारुषीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं त्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥———[६१] मन्युरकार्षीं त्रमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युंः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥———[६२]

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसार सपिष्टान् गन्धार मम चित्ते रमन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं

धनमन्नपान सर्वेषा १ श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्दर्दातु स्वाहा॥८०॥

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्दुरितं मीय स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुत्त्पगः। गोस्तेय र सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्ददांतु स्वाहा॥८१॥

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ। वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतोबुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ। त्वक्रममा स्सरुधिरमेदोमञ्जास्नायवो-ऽस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्खशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इं स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इं स्वाहाँ॥८२॥
[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। अव्यक्तभावेरंहङ्कारैज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहां। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ। अन्तरात्मा में शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। परमात्मा में शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजों विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिपासाय स्वाहाँ। विविंट्ये स्वाहाँ। ऋग्विंधानाय स्वाहाँ। कृषोंत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामुलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वान्निर्ण्द मे पाप्मान इ स्वाहा।

अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्ध्यन्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ॥८३॥ —————[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अग्नः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रुक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानैभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कार्माय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जगंति यच् चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्यै स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षेत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृहुस्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमों रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नमः। मनुष्येभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा कूंपः शतधांरः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा में अस्तु धान्य सहस्रंधारमक्षितम्। धनंधान्ये स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरंन्ति दिवानक्तं बिलिंमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यों बिलिं पृष्टिकामों हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥

ओं तद्व्रह्म। ओं तद्वायुः। ओं तदात्मा। ओं तथ्मत्यम्। ओं तथ्मर्वम्। ओं तथ्मर्वम्। ओं तथ्मर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गृहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्वारस्त्विमन्द्रस्त्व रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायांमुदाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धाया रे समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मंणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। प्राणाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमपाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। व्यानाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमुदाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रद्धाया ५ समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। समानाय स्वाहां॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

॥भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निर्विश्यामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायांमपाने निर्विश्यामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां व्याने निर्विश्यामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायांमुदाने निर्विश्यामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां समाने निर्विश्यामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्यायस्व॥९०॥

[७०]

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चे समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥
—————————————————————[७१]

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः ॥

वाङ्कं आसन्। नुसोः प्राणः। अक्ष्योश्वक्षुंः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्।

.[૭૨]

[४७]

[७५]

ऊरुवोरोर्जः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सुह नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥ ९२॥

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयंः सुपर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयंऽव बद्धान्। .[७३]

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः ॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्यायस्व॥९३॥

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः ॥

त्वमंग्ने द्युभिस्त्वमांशुश्वक्षिण्स्त्वम्द्र्यस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥
—————————————————————[७६]

॥ अभीष्ट्याचनामन्त्राः ॥

शिवनं मे सन्तिष्ठस्व स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सृत्यं परं परं सृत्यः सृत्येन न सुंवर्गाल्लोकाच्यंवन्ते कृदाचन सृताः हि सृत्यं तस्मांध्यत्ये रंमन्ते तप इति तपो नानशंनात्परं यिद्धे परं तपस्तदुर्धर्षं तदुराधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमे रमन्ते शम इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमे रमन्ते दानिमिति सर्वाणि भूतानि प्रशःसंन्ति दानान्नाति दुष्करं

तस्मौद्दाने रंमन्ते धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नातिं दुष्करं तस्मौद्धमें रंमन्ते प्रजन् इति भूया रंमस्तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजनेने रमन्तेऽग्रय इत्याह तस्माद्ग्रय आधातव्या अग्निहोत्रमित्याह तस्मादग्निहोत्रे रंमन्ते यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्मौद्धज्ञे रंमन्ते मानसमिति विद्वा रस्सतस्मौद्धिद्वा रसं एव मानसे रंमन्ते न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा प्तान्यवराणि परा रंसि न्यास एवात्यंरचयद्य एवं वेदैत्युपनिषत्॥९७॥
[७८]

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हारुणिः सुपूर्णयः प्रजापंतिं पितर्मुपंससार् किं भगवन्तः पर्मं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच सत्येनं वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मांध्सत्यं परमं वदन्ति तपंसा सपतान् प्रण्दामारातीस्-तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः परमं वदंन्ति दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माइमः परमं वदन्ति शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्-छमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमः परमं वदन्ति दानं यज्ञानां वर्रूथं दक्षिणां लोके दातार सर्वभूतान्युपजीवन्ति दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं प्रमं वदन्ति धर्मो विश्वस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसूर्पन्ति धर्मेणं पापमंपनुदिति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पर्मं वर्दन्ति
प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायौस्तन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवति

तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं पर्मं वर्दन्त्य-ग्रयो वै त्रयी विद्या देवयानः पन्थां गार्हपृत्य ऋक्पृंथिवी रथन्त्रमंन्वाहार्यपर्चनं यज्ञरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादुग्नीन्पर्मं

वदंन्त्य-

ग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायण सुवर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादग्निहोत्रं पंरमं वदन्ति

यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवं गता यज्ञेनासुंरानपानुदन्त यज्ञेन द्विषन्तो मित्रा

मवान्त युज्ञे सुर्वं प्रतिष्ठितुं तस्मौद्युज्ञं पर्मं वदन्ति

मान्सं वै प्रांजापृत्यं प्वित्रं मान्सेन् मनंसा साधु पंश्यित मान्सा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त

मानुसे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानुसं पेरुमं वदेन्ति

प्रजायन्त

दिशंश्चावान्तरदिशाश्च

ओषिवनस्पतिभिरत्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मनीषया मनो मनसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इस्मृत्या स्मार् स्मार्ण विज्ञानं विज्ञानं विज्ञानं वेदयित तस्माद् द्वन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नात् प्राणा भवन्ति भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्विमुदं प्रोतं पृथिवी चान्तिरक्षं च द्यौश्च

स वै सर्वमिदं जगुथ्स च भूत र स भूव्यं जिज्ञासकूप्त ऋतुजा रियेष्ठा श्रद्धा

सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि

न्यास इत्याहंर्मनीषिणों ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः प्रजापंतिः संवथ्सर

याभिरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यो वर्षति पर्जन्येनौषिवनस्पतयः

इति संवथ्सरीऽसावांदित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा

दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

प्राणे त्वमिसं सन्धाता ब्रह्मन् त्वमिसं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमं स्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमं स्याप्ति सूर्यस्य द्युम्रोदास्त्वमं सि चन्द्रमं स उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणे त्वा महस् ओमित्यात्मानं युश्चीतेतद्वै महोपनिषंदं देवानां गृह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणो महिमानं माप्नोति तस्मा द्वाणो महिमानं मित्युपनिषत्॥ ९८॥
[७९]

॥ ज्ञानयज्ञः ॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिर्लोमांनि

बर्हिवेदः शिखा हृदयं यूपः काम् आज्यं मृन्यः पृशुस्तपोऽग्निर्दमः शमयिता दक्षिणा वाग्घोता प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा श्रोत्रंमग्नीद्यावृद्धियंते सा दीक्षा यदश्जाति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यथ्सश्चरंत्युप्विशंत्युचि स प्रवग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याहंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यथ्सायं प्रातरंत्ति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिनः सायं च तानि सर्वनानि

ये अहोरात्रे ते दंरशपूर्णमासौ येंऽर्धमासाश्च मासांश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्चं परिवथ्सराश्चं तेऽहंर्गणाः संववेदसं वा एतथ्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वे जरामर्यमग्निहोत्र स्मन्नं य एवं विद्वानुद्गयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गृत्वाऽऽदित्यस्य सायंज्यं गच्छुत्यथ् यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गृत्वा चन्द्रमंसः सायंज्य सलोकतांमाप्नोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्महिमानौ ब्राह्मणो विद्वान्भिजंयित तस्माद्वह्मणो महिमानमाप्नोति तस्माद्वह्मणो महिमानमित्युपनिषत्॥९९॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्जस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमान्मुपंकृप्तं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथ्सम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः
प्रभानाभान्थ्सम्भान्। ज्योतिष्माङ्स्तेजंस्वानातपृङ्स्तपंत्रभितपन्। रोचनो
रोचंमानः शोभनः शोभंमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा देर्शता विश्वरूपा
सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायां सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा
पूरयंन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवेशंनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवंन्प्रभवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुंत्र स॰स्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपत्तपंस्वत्। स्विता प्रसिवता दीप्तो दीपयन्दीप्यमानः। ज्वलंञ्चलिता तपंन्वितपंन्थ्यन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भूः

शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सुम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघां। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदंः प्रमोदः। आसादयन्त्रिषादयैन्थ्स १ सादेनः स १ सेन्नः सन्नः। आभूर्विभूः

प्रभः शम्भूर्भुवंः। पवित्रं पविषयन्यूतो मेध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतंः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहस्वान्थ्यहीयानोजस्वान्थ्यहंमानः। जयंत्रभिजयंन्थ्सु-

द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥

अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वंमानो ऽन्नंवान्नसंवानिरां सर्वोषधः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासों गमिष्णवंः। इदानीं तदानींमेतर्हि क्षिप्रमंजिरम्।

आशुर्निमेषः फणो द्रवंत्रतिद्रवन्। त्वरङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्जवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्निरात्रश्चेतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः।

प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

भूरिग्नं चे पृथिवीं च मां चे। त्री इश्चे लोकान्थ्यं वथ्यरं चे। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। भुवीं वायुं चान्तरिक्षं च मां चं। त्री इश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। स्वरादित्यं च दिवं च मां चं। त्री इक्षं लोकान्थ्यं वथ्यरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयो देवतयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद। भूर्भुवः स्वश्चन्द्रमेसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५॥

त्वमेव त्वां वैत्थ् योऽिस् सोऽिसं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चािस् सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चािस् भूयाईश्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यद् तेऽितिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्त्। विश्वे ते देवािश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चािस् सिश्चितश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाईश्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन् माऽति च येनाऽऽयुरावृक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्दावुदेति। तपंसो जातमिनभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावंद्देवाः। यावदसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

संव्थ्यरोऽसि परिवथ्यरोऽसि। इदाव्थ्यरोऽसीद्वथ्यरोऽसि। इद्वथ्यरोऽसि वथ्यरोऽसि। तस्यं ते वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्यः। अपुरुपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋषभोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्याँ दिशि महीयंसे। ततो नो मह आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥ इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुरण्युः। महान्थ्स्थस्थं ध्रुव आनिषंतः। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं मे यच्छ। पृथिवीं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समंच। रात्र्या प्रसारय। अह्य समंच। काम् प्रसारय। काम्॰ समंच॥९॥

भूर्भुवः स्वंः। ओजो बलम्ँ। ब्रह्मं क्षुत्रम्। यशों महत्। सृत्यं तपो नामं। रूपमृग्तम्। चक्षुः श्रोत्रम्। मन् आयुंः। विश्वं यशों महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यर्जमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंदभ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

राज्ञी विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशसा स॰सृजन्तु॥११॥ स्वाहाँ। शूषांय स्वाहाँ सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्थ्सर्पाय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥
————[७]
विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मृही न धाराऽत्यन्थो अर्षित। अहिर्ह जीर्णामितिसर्पित त्वचम्ँ। अत्यो न क्रीडंन्नसरद्वृषा हिरः। उपयामगृहीतोऽसि मृत्यवेँ त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिर्मृत्यवेँ त्वा। अर्पमृत्युमपृक्षुधम्ँ। अपेतः शपथं जिह। अर्था नो अग्र आर्वह। रायस्पोष सहिस्नणम्ँ॥१३॥

ये ते सहस्रमयुतं पाशाः। मृत्यो मर्त्याय हन्तवे। तान् यज्ञस्यं माययाः।

सर्वानवंयजामहे। भृक्षौंऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपींतस्यामृतंवतः। स्वृगाकृंतस्य

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे

स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पत्तये स्वाहाऽ ५ हस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय

स्वाहाँ ज्योतिष्मृत्यायु स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सुम्राज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे

मध्रमतः। उपहूतस्योपंहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अह्स्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मनः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्घदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्मे प्राणे श्रितः॥१६॥

प्राणो हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनिस श्रितः॥१७॥

मनो हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतै। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रै श्रिताः। श्रोत्र्र हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥ रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयो मे लोमस् श्रिताः॥१९॥

लोमांनि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बलु हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥ मूर्धा हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ईशांनो मे मुन्यो

श्रितः। मृन्युर्हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मं आत्मिनं श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनर्म आत्मा पुन्रायुरागांत। पुनः प्राणः पुनराकूतमागांत। वैश्वान्रो रिश्मिभिवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतस्य गोपाः॥२२॥

————[८] प्रजापंतिर्देवानंसृजतः। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्तः। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्मौद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवतें अभि्प्राप्नुंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा साऽग्निंहोत्र एव संम्पन्ना। अथीं आहुः। सर्वेषु यज्ञ ऋतुष्विति। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्यंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मिति। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मिति। युक्ष्यमांणो वृष्टा वाँ। वि चं हैवास्यैते देवते पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युः हो हाऽऽर्रुणः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्य प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यौम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच् वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित् इतिं। प्रोरंज्सीतिं। कस्तद्यत्प्रोरंजा इतिं। एष वाव स प्रोरंजा इतिं होवाच। य एष तपंति। एषौंऽर्वाग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। स्त्य इतिं। किं तथ्सत्यमितिं। तप् इति॥२६॥ कस्मिन्न तप् इतिं। बल् इतिं। किं तद्बल्मितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिंपृच्छ् इतिं माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रुक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वे ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेतिं॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संवेदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदेत। सहाँस्मिञ्छ्रियं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छिर्यं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेति। एष एव तत्॥२८॥

अथ् यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंत स्मृता सुंन्वतीतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रंयः। अथ् यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिशास्ताऽनुंम्नतेतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्नां मुहूर्ताः। एष रात्रैं:॥२९॥ अथ यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एष एव तत्। एष ह्येव तेंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापितः संवथ्सर इति। एष एव तत्। एष ह्येव ते यंज्ञऋतवः। एष ऋतवः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ् यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। पुष पुव तत्। पुष ह्यंव ते मृंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको हु वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहंत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होके ऽन्नं क्षीयत् इतिं। विज्ञहंद्ध वै पाप्मानमिति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होके ऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहीं ना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स हं हु सो हिंर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सार्युज्यम्। हु सो हु वै हिंर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सार्युज्यम्। य एवं वेदं।

देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। त॰ हु वागदृश्यमानाऽभ्यंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौत्मो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमृह सांवित्रः। देवानां मृत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौत्मः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीगौतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो ह वै सावित्रस्याष्टाक्षरं पृदः श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

पुतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षेरं प्दइ श्रियाऽभिषिक्तम्। य पुवं वेदे। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरें पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद किमृचा केरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इतिं। न हु वा पुतस्युर्चा न यजुंषा न साम्नाऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदे॥३६॥ तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहिद्वश्वां भूतानि सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहिन्वश्वां भूतानि सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वाँर्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियृष्णुरमृताथ्सम्भूत इति। एष वाव स सावित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इति हैवेनं तद्वाच॥३७॥

इयं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूँर्वपक्षापरपक्षयो रात्रंयः। ता मधुकृतंः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो ह वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषाःश्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणाँ नाम्धेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। पृतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टुंत र सुता सुंन्वतीतिं। पृतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति। य पृवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेति। पृतेऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य पृवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्रवित्रं पवियष्यन्थ्यहं-स्वान्थ्यहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। पृतेऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो हु वै यंज्ञऋतूनां चंर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। प्रथमः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्)

अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एतेऽनुवाका यंज्ञऋतूनां चंर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नामधेयांनि॥४१॥

न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै

मुंहूर्तानां मुहूर्तान् वेदं। न मुंहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। इदानीं तदानीमिति।

पुते वै मुहूर्तानां मुहूर्ताः। न मुहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। य पुवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यात्रमत्ति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यात्रमत्ति। स एतेषांमेव संलोकता सायुंज्यमश्रुते। अप पुनर्मृत्युं जयिति। य एवं वेदं॥४२॥ कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमृहम्स्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथु यो हैवैतमुग्नि सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद।

अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकमभिवंहति। अहोरात्रैर्वा इद॰ सयुग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं

व्रतमुपांगुरितिं। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं होके शेविधं धंयन्ति। धीत १ हैव स

शेंवधिमनु परैति। अथ यो हैवैत्मग्नि सांवित्रं वेदं॥४४॥ तस्यं हैवाहोंरात्राणिं। अमुष्मिं लोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधींत १ हैव स

शेंवधिमनु परैति। भरद्वांजो ह त्रिभिरायुंर्भिर्ब्रह्मचर्यमुवास। त॰ ह जीर्णिङ्

स्थविर्॰ शयानम्। इन्द्रं उपव्रज्योवाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुर्दद्याम्। किमेनेन

कुर्या इति। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमिति होवाच॥४५॥ त १ ह त्रीन्गिरिरूपानविंज्ञातानिव दर्शयां चंकार। तेषा १ हैकैकस्मान्मुष्टिनाऽऽदं स होवाच। भरंद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतैस्त्रिभिरायुंर्भिरन्वंवोचथाः। अर्थं तु इतंरुदननूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै

संविविद्येतिं॥४६॥

तस्मै हैतम्ग्नि सावित्रम्वाच। त॰ स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेद्रं। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यार्वन्तः हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तार्वन्तं लोकं जयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। अग्नेर्व सार्युज्यः सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नाम्धेयांनि। वायोर्व सार्युज्यः सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानि नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य स्मलोकतांमाप्नोति। य पृवं वेदं। बृह्स्पतेर्वा पृतानिं नाम्-धेयांनि। बृह्स्पतेरेव सायुंज्य स्मलोकतांमाप्नोति। य पृवं वेदं। प्रजापंतेर्वा पृतानिं नाम्धेयांनि। प्रजापंतेरेव सायुंज्य स्मलोकतांमाप्नोति। य पृवं वेदं। ब्रह्मंणो वा पृतानिं नाम्धेयांनि। ब्रह्मंण पृव सायुंज्य स्मलोकतांमाप्नोति। य पृवं वेदं। स वा पृषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्ं। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्व सीव्यति। तस्मांथ्सावित्रः॥४९॥

[88]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोंऽसि। अनुन्तोंऽस्यपारोंऽसि। अक्षिंतोऽस्यक्षय्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षेतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२॥

तेजोऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्तृ विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥३॥

समुद्रोऽसि तेर्जिसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रंतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यां विश्वंस्य जनिय्र्त्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५॥

पृथिव्यंस्यप्सु श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्या १ श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं

कामदुघमक्षितम्। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वस्य भूर्तृ विश्वस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे कामुदुघमिक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥८॥ वायुरंस्यन्तरिक्षे श्रितः। दिवः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व रं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामदुघमिश्वंतम्।

प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विर्श्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे कामदुघामिक्षेताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

सींद॥१३॥

चुन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥ नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानि। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भर्तृणि विश्वंस्य जनियतृणि। तानि व

उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा

संवथ्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं

विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं

विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वस्य भूतां विश्वस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे

कामुदुघमक्षितम्। प्रजापितिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥११॥

कामृदुघमिक्षेतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१४॥

विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतीरो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे

ऋतवंः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं

काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१५॥ मासाः स्थर्तषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयौः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१७॥

विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्र्यौं विश्वंस्य जनियत्र्यौं। ते वामुपंदधे कामृद्धे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्बद्ध्वा सीद॥१८॥

अहोरात्रे स्थौं ऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदमन्तः।

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थांनृद्घो युष्मासं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यो विश्वंस्य जनिय्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुधामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२०॥

श्रयध्वम्। पञ्चदशाः षोडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमेर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२१॥

त्वमंग्ने रुद्रो असुरो महो दिवः। त्वर शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं

वातैररुणैर्यासि शङ्गयः। त्वं पूषा विधतः पांसि न त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। स्प्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नंवमेषुं श्रयध्वम्। न्वमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। द्शमा एंकाद्शेषुं श्रयध्वम्। पृकाद्शा द्वाद्शास्त्रंयोद्शेषुं श्रयध्वम्। त्रयोद्शाश्चंतुर्द्शेषुं श्रयध्वम्। चतुर्द्शाः पंश्चद्शेषुं

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविद्शेषुं श्रयध्वम्। विद्शा एंकविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकविद्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शास्त्रंयोविद्शेषु श्रयध्वम्। त्रयोविद्शोधं श्रयध्वम्। त्रयोविद्शोधं श्रयध्वम्। प्रश्चविद्शाः पंश्चविद्शोषं श्रयध्वम्। पृश्चविद्शाः पंश्चविद्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्चविद्शाः पंश्चिव्दशेषुं श्रयध्वम्॥२४॥

षृद्धिर्शाः संप्तविर्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तविर्शा अष्टाविर्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविर्शोषुं श्रयध्वम्। पृकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिर्शा एंकित्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। पृकित्रिर्शोषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिर्शास्त्रंयस्त्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वांस्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंयस्त्रिरशाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्तान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमिं। तन्मे समृध्यताम्। वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भवः स्वंः स्वाहां॥२५॥

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरंः। द्युम्नैर्वाजेंभि्रागंतम्। राज्ञीं

विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रुण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह स्वयम्। रुचा रुरुचे रोचमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौ प्रजनौ प्रजायेय। वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२८॥

स्प्त तें अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्वाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणि। स्प्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्नि॰ स देवतां॥२९॥ इन्द्र स दिशां देवं देवतानामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशों ऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवता। सोम स दिशां देवं देवतानामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशों ऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावरुंणौ देवतां। मित्रावरुंणौ स दिशां देवौ

देवतानामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोऽभिदासंति॥३०॥ ऊर्ध्वा दिक्। बृहस्पतिर्देवता। बृहस्पति स दिशां देवं देवतानामृच्छत्।

यो मैतस्यै दिशों ऽभिदासंति। इयं दिक्। अदितिर्देवतां। अदिति स दिशां देवीं देवतानामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समंधयत्॥३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोंऽशीय। वयङ् स्यांम पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥३२॥

अगन्म महा मनेसा यविष्ठम्॥३४॥

बृह्स्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥ तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा

सींद। अग्ने देवा १ इहा ऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यंः।

यत्तेऽचितं यदुं चितं तें अग्ने। यत्तं ऊनं यदु तेऽतिंरिक्तम्। आदित्यास्तदङ्गिरसश्चिन्

विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सश्चितश्चास्यग्ने। एतावा इश्चासि

भूयां इश्वास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा

प्रत्यश्चम्। मेथाकारं विदर्थस्य प्रसाधनम्। अग्निः होतारं परिभूतमं मृतिम्। त्वामर्भस्य ह्विषंः समानमित्। त्वां महो वृणते नरो नान्यं त्वत्। मनुष्वत्त्वा

यो दीदाय समिद्ध स्वे दुरोणे। चित्रभानू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः

निधीमहि। मृनुष्वथ्समिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥
—————[६]
अयं वाव यः पवंते। सो ऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥
अथ् यथ्संवाति। तदंस्य समर्श्चनं च प्रसारणं च। अथो सम्पदेवास्य सा। स॰ ह वा अस्मै स कामः पद्यते। यत्कांमो यजंते। यो ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उ

चैनमेवं वेदं। यो ह वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति।

देवान्देवायते यंजा अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये

स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष ई स्तोतृभ्य आभेर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः

पृंथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतेनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदे। आयतेनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो ह् वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदे। सर्शरीर एव स्वगं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदे। सर्शरीर एव स्वगं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तेष्ठो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेजंसा यशंसा। अस्मिश्श्चं लोकंऽमुष्मिश्श्चं भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अर्थं हैते वरीयाश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तश्ह् वा एष क्षय्यं लोकं जंयति। योऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अर्थं हैषोंऽनुन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ हु वा अपारमंक्षय्यं लोकं जयिति। यो उग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपे क्षते। एवमंहोरात्रे प्रत्यपे क्षते। नास्याहोरात्रे लोकमा प्रतः। यो उग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदं॥४१॥ उशन् ह् वै वांजश्रवसः संविवद्सं दंदौ। तस्यं ह् निवंकेता नामं पुत्र आंसा तर् हं कुमार सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। तर ह् परीत उवाच। मृत्यवे त्वा ददामीति। तर ह स्मोत्थितं वागभिवदित॥४२॥

गौतंम कुमारिमितिं। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वै त्वांऽदामितिं। तं वै प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित् रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इित प्रतिंब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इितं॥४३॥

प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्इस्त इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त इतिं। तं वै प्रवसंन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥ किं प्रथमा रात्रिंमाश्रा इतिं। प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पश्र्इस्त

इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमंस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरंमेव जीवंत्रयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

ड्ड छापूर्तयोर्मे ऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतमुंवाच। ततो वै तस्यैष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्यैष्टापूर्ते क्षीयेते। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मे ऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतमुंवाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यंत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्द्तीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नौ वैंश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतमम्। हृद्युज हि। स वै तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताङ् स्वायैव हस्तांय

दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

द्वितीयः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्)

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्यं। य पृवं वेदं। पृतद्धं स्मृ वै तिद्वद्वाः सो वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दिक्षणां प्रतिगृह्यं। य पृवं वेदं। पृतद्धं स्मृ वै तिद्वद्वाः सो वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दिक्षणां प्रतिगृह्यं। उभयेन व्यं दिक्षण्यामह पृव दिक्षणां प्रतिगृह्यं। दक्षते ह् वै दिक्षणां प्रतिगृह्यं। य पृवं वेदं। प्र हान्यं द्वीनाति॥४९॥

[८]
तर हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तरवेद्यां चिन्वते। उत्तरवेदिसंम्मित एषोंऽग्निरिति
वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन् व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यृद्धः।
कामेन् व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्।
एतमृग्निं कामेन् समर्धयित। स एनं कामेन् समृद्धः॥५०॥
कामेन् समर्धयित। अर्थ हैनं एउर्षयः। उत्तरवेद्यामेव सन्निर्यम्निन्तव। वत्रो

कामेन समर्धयति। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव स्त्रियंमचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि

स्वर्गं लोकं जयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुरऋद्धिकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स पुतामृद्धिमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। पुतामृद्धिम्भ्रोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोबलो वार्ष्णः पशुकांमः। पाङ्कांमेव चिक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पर्श्व दक्षिणतः। पर्श्व पश्चात्। पश्चौत्तरतः। एकां मध्यै। ततो वै स सहस्रं

प्शून्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं प्शूनौप्नोति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं प्रजापंति र्ज्येष्ठ्यंकामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतंमेव चिंक्ये॥५३॥ सप्त पुरस्तौत्। तिस्रो दक्षिणतः। सप्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्ये। ततो वै स प्र यशो ज्येष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वे ज्येष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यंमाप्नोति। एतां प्रजांतिं

प्रजायते। यामिदं प्रजाः प्रजायन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठ्यंकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठ्यंमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठ्यं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामितिं। प्राङाहोतुर्धिष्ण्यादुथ्संर्पेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणींतु। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेतिं। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। अथ यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरितिं। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राचीं जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेतिं स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्धंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं।

चितिक्कृप्तिभिरिभ्नेम् १ अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंत्रहोमः। सप्त तें अग्ने स्मिधः सप्त जिह्वा इति विश्वप्रीः॥५८॥

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ ह्रोके देवताः। तासा स् सार्यंज्य स् सलोकर्तामाप्नोति। यां द्वितीयां मुप्दधांति। अन्तिरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तिरिक्षलोकं देवताः। तासा सार्यंज्य सलोकर्तामाप्नोति। यां तृतीयां मुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥ ५९॥

अथो या अमुष्मिँ होके देवताँः। तासा १ सायुंज्य १ सलोकर्तामाप्रोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीया १ सश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारों हु वा अस्योरुषुं च वरीयःसु च लोकेषुं भवति। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरं:॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रत्युच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। स्वथ्यरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्रद्त्तरः पृक्षः। हेम्न्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपरपृक्षाः पुरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥
[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीयकाठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ ततीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कार्ममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामों भूतस्य काम्स्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरिन्त् यो देह्यः। पूर्वं देवा अपरेण प्राणापानौ। हृव्यवाह् स्विष्टम्॥१॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नर्वेच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तिमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमग्नये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायें चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽऽशायै स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥३॥ तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजापते कामेन वै श्राम्यसि। अहमु वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यः कामों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथस्यसीति। स एतम् ग्रये कामाय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। कामाय चरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यः कामों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह वा अस्य कामों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥४॥

यंजस्व। अर्थ ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमग्नये कामाय पुरोडाशम्हाकपालं निर्वपत्। ब्रह्मणे चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् ह वा अस्य युज्ञो भविति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजति। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥५॥ तं यज्ञों ऽब्रवीत्। प्रजांपते यज्ञेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै युज्ञों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो यज्ञो भंविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमग्नये कामांय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। यज्ञायं चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो युज्ञोऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह वा अस्य

यज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजेते। य उं चैनदेवं

वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। अनुमत्ये स्वाहां

तं ब्रह्मां ऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्रांम्यसि। अहमु वे ब्रह्मां ऽस्मि। मां नु

प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापौँ प्रबुवन्। प्रजापते उपसु वै सर्वे कामौः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः।

अस्मान्नु यंजस्व। अथु त्विय सर्वे कार्माः श्रियष्यन्ते। अनु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमग्रये कामाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्यश्चरम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे ह वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽन्द्यः स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥७॥ तमुग्निर्बिलुमानंब्रवीत्। प्रजापतेऽग्नये वै बेलिमते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरन्ति। अहम् वा अग्निबंलिमानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानिं बुलि १ हंरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय

पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयं बलिमतं चरुम्। अनुमत्ये चरुम्। ततो वै

तस्मै सर्वाणि भूतानि बिलिमहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि हु वा अस्मै भूतानि बिलि॰ हंरन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेन हिविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽग्नये बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविविथ्ससि। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमग्नये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्यै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥९॥

ता वा पृताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमा र रक्षिति। कामो द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्थ्वष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौऽस्य स्वर्गे लोकं भवित। य पृताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीव्रां दंद्यात्कुर्सं च। स्त्रियै चाऽऽभार र समृद्धौ॥१०॥

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वरन्वविन्दन्। तपंसा सपत्नान्प्रणुदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव॰ ह्विषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम॰ सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नो जुषाणोपं युज्ञमागाँत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रंथमुजा ऋतस्यं। विश्वंस्य भुत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ताङ् श्रृद्धाः ह्विषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतंं दधातु। ईशांना देवी भुवंनुस्याधिपत्नी। आगाँथ्यत्य १ ह्विरिदं जुंषाणम्। यस्माँद्वेवा जंजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मैं विधेम ह्विषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संध्मादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्माँद्देवा जिज्ञिरे भुवंनं च सर्वे। तथ्मत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगाँत्। ब्रह्माऽऽहंतीरुपमोदंमानम्। मनंसो वशे सर्विमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मन्वियाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकृतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पर्जूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजांनमिह वर्धयंन्तः। उपहुवैंऽस्य सुमृतौ स्यांम। चरणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानि। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्प्वित्रम्ं। ज्योतिंष्मद्भाजंमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाहुङ् स्विष्टम्॥१४॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिभिरन्वंविन्दत्।

तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजापते तपंसा वै श्राम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं तपों भिवष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वृथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१६॥ तः श्रृद्धाऽब्रंबीत्। प्रजांपते श्रृद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रृद्धाऽस्मिं। मां न यंजस्व। अथं ते सत्या श्रृद्धा भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रृद्धाये चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्या श्रृद्धाऽभंवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्य श्रृद्धा भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहां श्रृद्धाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१७॥

तर सत्यमंब्रवीत्। प्रजापते सत्येन वै श्राम्यिस। अहमु वै सत्यमंस्मि। मां न यंजस्व। अर्थ ते सत्यर सत्यं भविष्यिति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स पृतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। सत्यायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्य सत्यर सत्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यर हु वा अंस्य सत्यं भविति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दिति। य पृतेनं हुविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सत्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां।

स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्ट्कृते स्वाहेतिं॥१८॥

नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं मनों भविष्यति। अनु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य मनों भवति। अर्नु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनसे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥ तं चरणमब्रवीत्। प्रजापते चरणेन वै श्राम्यसि। अहम् वै चरणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं चरंणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकंपालं निरंवपत्। चरंणाय चरुम्। अनुमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं

स्त्यं चरणमभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य चरणं भवति।

अर्नु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं

तं मनों ऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनों ऽस्मि। मां

जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंत्ये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रेक्षति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरंणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारों उस्य स्वर्गे लोके भवित। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौही्वरां दंद्यात्कर्शं चं। स्त्रियै चाऽऽभार समृद्धौ॥२१॥

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैनर् शृप्तम्। नाभिचरित्मागंच्छति। य एवं वेदं। यो हु वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पर्श्वहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतृणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतृणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चंहोतॄणाम्। वाग्घोता षङ्कोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवद्या। एतद्भेषजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्रशे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपब्रवः सर्वमायुरिति।

विन्दतें प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। एतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितॄन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥ एतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंययौ। एतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। एतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। एतैरायुंष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दर्शहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्यौं च।

दक्षिणतः प्राश्चं चतुरहोतारम्। पृश्चादुदेश्चं पश्चहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चर्

षड्ढोतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चर्यं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजूर्षेषि पत्र्यंश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्रोकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवमृग्निं चिनुते। रथसंम्मितश्चेतृव्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पक्षः संम्मितश्चेतृव्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पक्षः। रथसंम्मितमेव चिनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेन॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वां ह्योकानंहीनेनं। अथो स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वरई स्पृणोति। आत्मा हि वर्रः। एकंविश्शतिर्दक्षिणा ददाति। एकविश्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाप्रोति॥२८॥

असावांदित्य एंकविश्वाः। अमुमेवाऽऽदित्यमांप्रोति। श्वां ददांति। श्वायुः पुरुषः श्वेनिद्रयः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसिम्मतः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अन्विष्टकं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि

वया रेसि॥२९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मुन्थानंतावृतो दंद्यादोदुनान् वा। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयते। पष्टौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रेसि। सर्वस्या ऽऽध्यै। सर्वस्यावंरु छै॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमिश्नें चिंनुते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतंरेषु यज्ञेषुं। यो ह वै चतुंर्होतृननुसवनं तंर्पयितव्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पश्भिः। उपैन र सोमपीथो नमिति। एते वै चतुर्होतारोऽनुसवनं तंर्पयित्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदंः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्टः स्यात्। अग्निमंस्य वृश्चीरन्। तेभ्यों यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्क्रियते। नास्याग्नि

र्वृञ्जते॥ ३२॥

हिर्ण्येष्टको भवति। यावदुत्तममंङ्ग्लिकाण्डं यंज्ञपुरुषा सम्मितम्। तेजो

हिरंण्यम्। यदि हिरंण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजों घृतम्। सतेंजसमेवाग्निं चिंनुते। अग्निं चित्वा सौंत्राम्ण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण् वा एष व्यृध्यते। योंऽग्निं चिंनुते॥३३॥

यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। पृतासांमेव देवतांना सायुंज्यम्। सार्षिता समानलोकतांमाप्नोति। य पृतमृग्निं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदं। पृतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथो नाचिकेते॥३४॥

यचामृतं यच् मर्त्यम्। यच् प्राणिति यच् न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमैः॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययाँ। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिंर्हिताः।

सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिताः पृथिवीमनुं। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिताः पृथिवीमनुं। सर्वास्ताः॥३७॥

यार्वन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिधं। सर्वास्ताः। यार्वन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वै। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरस्पिणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंस् सर्वम्। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वश् सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यचं मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरंण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १

तृतीयः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम)

सुवंर्ण् हरितम्। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं काम्दुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयाँ देवतंयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद॥४०॥

सर्वा दिशो दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामुदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद। अन्तरिक्षं च् केवलम्। यचास्मिन्नन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥ गन्धर्वाफ्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्यंलिलान्। स्थावराः प्रोष्यांश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनि ४ सर्वान्ध्व स्सान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरींचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वांन्थ्स्तनियुत्नून्। ह्रादुनीर्यचे शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः सरितः। सर्वमफ्सुचरं च यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

तृतीयः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्)

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्-तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षंन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्श्से सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निः सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यः श्रृद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४५॥

सर्वान्दिव सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्बद्धुवा सींद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूरंषि

सादा यावतास्तारकाः सवाः। ।वतता राचन ।दावा सवास्ताः। ऋषा यजूराष्

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चे। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः।

ये च लोका ये चालोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। स्वथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दथे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्बद्धुवा सीद॥४८॥

————————————————————————————————[८]
ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अथंर्वणामिङ्गिरसां
प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूँर्वाह्ने दिवि देव ईयते। यजुर्वेदे
तिष्ठति मध्ये अहंः। साम्वेदेनांऽस्तम्ये महींयते। वेदैरशूँन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः।
ऋग्भ्यो जाता सर्वेशो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतियांजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥
सर्वं तेर्जः सामरूप्य है शश्वत्। सर्व हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं

वैश्यं वर्णमाहुः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्। साम्वेदो ब्राँह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूचुः। आद्रशम्भि चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वर्षसहस्राणि। दीक्षिताः सुत्रमासत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। सृत्यः ह् होतैषामासीत्। यद्विश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूतः हं प्रस्तोतैषामासीत्। भृविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदः सर्वः सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररंसद्वह्मणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥ अर्ग्राजानमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यष्टौद्वाव्यणः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञत्विषिः। आग्नीद्वाद्विदुषीं सृत्यम्।

श्रुद्धा हैवायंजञ्स्वयम्। इरा पत्नी विश्वसृजाम्। आकूंतिरपिनङ्कृविः॥५३॥

ड्धम ह क्षुचैभ्य उम्रे। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वार्गेषा स्पृब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृत्त्र्राणि तन्वानाऽहंः। स्ड्स्थाश्चं सर्वशः। अहोरात्रे पशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शुकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रणं पितृमान् योनियोनौ। नावंदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पर्श्वपञ्चाशतिस्त्रिवृतेः संवथ्सराः। पश्चपञ्चाशतेः पञ्चदशाः। पश्चपञ्चाशतेः सप्तदृशाः। पञ्चपञ्चाशतं एकविष्शाः। विश्वसृजारं सहस्रसंवथ्सरम्। एतेन् वै विश्वसृजं इदं विश्वमसृजन्त। यद्विश्वमसृजन्त। तस्माँद्विश्वसृजः। विश्वमेनाननु प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्य सलोकतां यन्ति। पृतासांमेव देवतांना सायुंज्यम्। सार्षिता समानलोकतां यन्ति। य पृतदुंपयन्ति। ये चैन्त्प्राहुः। येभ्यश्चेन्त्प्राहुः॥५६॥ ॐ॥

> ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥